UNIVERSAL LIBRARY

OU_186050

UNIVERSAL LIBRARY

Osmania University

Call No. H 81 Accession No. H 3283

Author S61R

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.

रावण महाकाव्य

हमारा उत्कृष्ट आलोचना-साहित्य

१. प्रेमचन्द—जीवन और कृतित्व	हंसराज 'रहबर'	५)
२. हिन्दी-कविता में युगान्तर	डॉ० सुधीन्द्र	८)
३. रोमाण्टिक साहित्य-शास्त्र	देवराज उपाध्याय	३।।)
४. सुमित्रानन्दन पन्त—काव्य-कला और जीवन-दर्शन	शचीरानी गुर्टू	६)
५. महादेवी वर्मा—काव्य-कला और जीवन-दर्शन	शचीरानी गुर्टू	६)
६. काव्य के रूप	गुलाबराय	४।।)
७. सिद्धान्त और अध्ययन	गुलाबराय	६)
८. हिन्दी काव्य-विमर्श	गुलाबराय	३।।)
९. साहित्य-समीक्षा	गुलाबराय	१।।।)
१०. कला और सौन्दर्य	रामकृष्ण शुक्ल 'शिलीमुख'	३।।।)
११. समीक्षायण	कन्हैयालाल सहल	३)
१२. दृष्टिकोण	कन्हैयालाल सहल	१।।)
१३. साहित्य-विवेचन	क्षेमचन्द्र 'सुमन' योगेन्द्रकुमार मल्लिक	७)
१४. हिन्दी के नाटककार	जयनाथ 'नलिन'	५)
१५. कहानी और कहानीकार	मोहनलाल 'जिज्ञासु'	३।।)
१६. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल	गुलाबराय—विजयेन्द्र स्नातक	६)
१७. प्रगतिवाद की रूपरेखा	मन्मथनाथ गुप्त	५)
१८. उद्धव-शतक-परिशीलन	अशोककुमारसिंह	१।।)
१९. भाषा-विज्ञान-दर्शन	कृष्णचन्द्र शर्मा—देवीशरण रस्तोगी	१।।)
२०. प्रबन्ध-सागर	कृष्णानन्द पंत—यज्ञदत्त शर्मा	४।।)
२१. मैं इनसे मिला (पहली किस्त)	पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'	२।।)
२२. जीवन-स्मृतियाँ (साहित्यकारों के आत्म-चरित)	क्षेमचन्द्र 'सुमन'	३)
२३. वाद-समीक्षा	कन्हैयालाल सहल	प्रेस में
२४. साहित्य-जिज्ञासा	ललिताप्रसाद सुकुल	,,
२५. आधुनिक हिन्दी-साहित्य की प्रवृत्तियाँ (दो भाग)	डॉ० सत्येन्द्र	,,
२६. हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार	रामचरण महेन्द्र	,,
२७. हिन्दी-साहित्य और उसकी प्रगति	क्षेमचन्द्र 'सुमन'	,,
२८. हिन्दी-साहित्य में आलोचना का उद्भव तथा विकास	डॉ० भगवतस्वरूप मिश्र	,,
२९. मैं इनसे मिला (दूसरी किस्त)	पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'	,,
३०. कला, काव्य और साहित्य	पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'	,,
३१. कला-दर्शन	पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'	,,
३२. काव्य-चिन्तन	पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'	,,
३३. साहित्य-मन्थन	पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'	,,
३४. कामायनी-दर्शन	कन्हैयालाल सहल—प्रो० विजयेन्द्र	,,
३५. प्रसाद—कला और जीवन-दर्शन	महावीर अधिकारी	,,

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली ६

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत

रावण महाकाव्य

लेखक

हरदयालुसिंह
देव पुरस्कार तथा रत्नाकर पुरस्कार-विजेता

१९५२
आत्माराम एण्ड संस
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
काश्मीरी गेट
दिल्ली ६

प्रकाशक
रामलाल पुरी
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली ६

Checked

सर्वाधिकार प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

प्रथम संस्करण १९५२
मूल्य पाँच रुपये

मुद्रक
श्यामकुमार गर्ग
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस
क्वीन्स रोड, दिल्ली ६

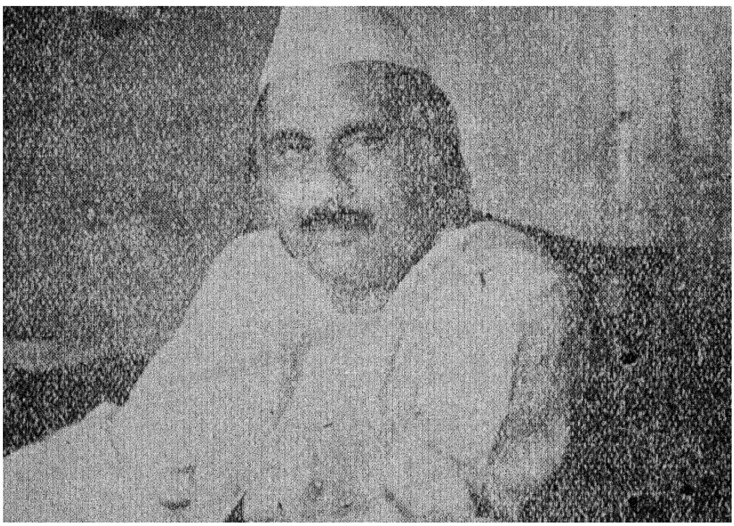

श्री सम्पूर्णानन्द

समर्पण

उत्तर प्रदेश के शिक्षा तथा श्रम-मन्त्री माननीय
श्री सम्पूर्णानन्द जी के कर कमलों में—

राजौ अमात्य के आसन पै सदा,
सिच्छा प्रचार समोद प्रसारो।
कोऊ बिना पढ़ौ पावै रहै नहीं,
देस ते मूरखता कौ निवारौ॥
अर्थव्यवस्था करौ यहि भाँति सौं,
दारिद दीह समूल उपारौ।
पूरौ अनन्द प्रजा के भरौ,
सम्पूरन आनन्द नाम तुम्हारौ॥

काव्य की मंजु कलानि कौ आपने,
पंकज पानि कौ आश्रय दीजिये।
वृद्ध कवीन कौ पालन कै,
नृप भोज औ विक्रम सौं जस लीजिये॥
मेरो प्रनीत सुपावन काव्य कौ,
सानन्द आप सुधारस पीजिये।
सौंपत हौं तुमरे कर मैं,
अपनाय के याहि कृतारथ कीजिये॥

२८-४-५१ —हरदयालुसिंह

अनुक्रमणिका

	लेखक का निवेदन	१
	कवि का परिचय	५
	कथा-सार	८
	भूमिका	१३
१.	पहला सर्ग	२९
२.	दूसरा सर्ग	४६
३.	तीसरा सर्ग	६२
४.	चौथा सर्ग	७१
५.	पाँचवाँ सर्ग	८१
६.	छठा सर्ग	९०
७.	सातवाँ सर्ग	१०५
८.	आठवाँ सर्ग	१२०
९.	नवाँ सर्ग	१२८
१०.	दसवाँ सर्ग	१४१
११.	ग्यारहवाँ सर्ग	१४८
१२.	बारहवाँ सर्ग	१५५
१३.	तेरहवाँ सर्ग	१६२
१४.	चौदहवाँ सर्ग	१८२
१५.	पँद्रहवाँ सर्ग	१९७
१६.	सोलहवाँ सर्ग	२०६
१७.	सत्रहवाँ सर्ग	२१९

लेखक का निवेदन

'दैत्यवंश' महाकाव्य को सं० १९९६ में समाप्त करने के अनन्तर मेरा विचार 'रावण महाकाव्य' के लिखने की ओर गया। साहित्य के इन्हीं उपेक्षित पात्रों पर ही लिखने का विचार करता रहा था और वर्षों तक इस संकल्प-विकल्प में लगा रहा। फिर यह भी ध्यान में आया कि अभी तक तो मित्रगण मुझे 'दैत्यवंश' का नाम देते थे और अब आगे चलकर 'राक्षस' की उपाधि से विभूषित करेंगे। इसके लिखने की प्रेरणा मुझे श्री 'माईकेल मधुसूदन' के 'मेघनाद-वध' से मिली थी। जिस मित्र से इसको लिखने की चर्चा चलाता था, वह हँसने लगता था। कुछ लोग तो इसे 'अपने पूर्वजों के उद्धार का प्रयत्न' कहा करते थे। अन्त में रायबहादुर पं० श्रीनारायण जी चतुर्वेदी का आशीर्वाद लेकर इसे लिखना आरम्भ कर दिया।

प्रस्तुत महाकाव्य का कथानक मैंने महर्षि वाल्मीकि-प्रणीत आदि-काव्य से लिया है। रावण के पूर्वजों का जैसा परिचय आदि-कवि ने दिया है, उससे महर्षि व्यास जी सर्वथा सहमत नहीं हैं। परन्तु वाल्मीकि जी को ही अधिक प्रामाणिक मानकर हमने उन्हीं का आधार लिया है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने 'रामचरित-मानस' में राक्षस-राक्षसियों का जैसा वीभत्स चित्र अङ्कित किया है हम उससे सहमत नहीं हैं। राक्षसियाँ अधिकांश देवयोनि गंधर्वों, दैत्यों और यक्षों की कन्याएं थीं; जिन्हें राक्षस-प्रवर रावण ने अपहरण नहीं किया था, प्रत्युत उनके गुरुजनों ने राक्षसों के वंश-गौरव, विद्वत्ता एवं शौर्यादि लोकोत्तर गुणों पर मुग्ध होकर ही तथा अग्नि को साक्षी देकर उन्हें विधिवत् कन्या-दान किया था। राक्षस वेदाध्ययन, तपस्या, शिवार्चन इत्यादि सभी कुछ करते थे। महर्षि वाल्मीकि जी ने इसकी व्याख्या करते हुए लिखा है कि इन्होंने रक्षा करने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया था।

युद्ध करने में तो ये लोग विष्णु भगवान् तक से भिड़ जाने में संकोच नहीं करते थे। रावण का मातुल माली भगवान् विष्णु जी से संग्राम करते हुए मारा गया था। इन लोगों के शौर्य, साहस, एवं अप्रमेय पराक्रम का क्या ठिकाना था।

लंका का निर्माण राक्षस-प्रवर माल्यवान ने करवाया था। यह दैत्यों के

सुप्रसिद्ध शिल्पकार मय दानव की बनाई हुई थी। क्या इसका भारत-जैसे आर्य देश से कोई सम्बन्ध था या नहीं, इस विवादास्पद प्रश्न पर बहुत-कुछ कहा जा सकता है। यदि कहा जाय कि किसी पर-चक्र-भय की आशंका से समुद्र को लंका की परिखा बनाये रखने के विचार से ही इसे सर्वथा अलग रखा गया था तो यह तर्क कुछ जंचता नहीं। राक्षस तो स्वयं भय को भी भयभीत करने वाले थे। फिर जब ये लोग देव-लोक पर आक्रमण करने के लिए ससैन्य प्रयाण करते थे, तो कैसे समुद्र पार करते थे? इससे अनुमान होता है कि पहले लंका से भारत आने को कोई सेतु-जैसा मार्ग अवश्य होगा?

विभीषण के व्यवहार से हम सर्वथा असन्तुष्ट हैं। भगवान् रामचन्द्र जी के आपद्‌बन्धु होने के नाते श्री गोस्वामी जी इनकी तथा सुग्रीव की चाहे जितनी प्रशंसा करें, परन्तु ये उनके विश्वास-घात, बन्धु-विद्रोह इत्यादि दुराग्रहों पर कभी पानी नहीं डाल सकते। आजकल का इतिहास एवं साहित्य का विद्यार्थी इन्हें जयचन्द की नीति का पथ-प्रदर्शक कहकर ही स्मरण करेगा। मतभेद तो सदा से होता आया है। जब ईश्वर की सत्ता तक में लोगों का मतभेद है तो और बातों को क्या कहा जाय। फिर इस डिमोक्रेसी के युग में लोगों को कम-से-कम विचार-स्वातन्त्र्य तो अवश्य ही प्राप्त है। इसी भावना से प्रेरित होकर हमने विभीषण का चरित्र अपने दृष्टिकोण से चित्रित किया है और इस विषय पर प्रस्तुत महाकाव्य का उत्तरार्ध अपनी कल्पना के आधार पर लिखा है। इसके औचित्य अथवा अनौचित्य का निर्णय हम अपने सुयोग्य आलोचकों पर छोड़ते हैं। हमारा विचार है कि देवांगनाओं की सन्तान विशेषतः कन्याएं ऐसी भयङ्कराकार की नहीं हो सकतीं, जैसा गोस्वामी जी ने चित्रित किया है। सूर्पनखा के विरूपीकरण का कारण हमने अपने ढंग से लिखा है। और कवि होने के नाते वैसी कल्पना करने का हमें अधिकार भी है। जो लोग वेद-वेदांग का विधिवत् अध्ययन करने वाले थे, तपश्चर्या में निरत रहकर चतुर्मुख को प्रसन्न करते और उनसे मनोवांछित वर प्राप्त करते थे, तथा चन्द्रशेखर भगवान् शंकर के भक्त थे उनका ऐसा घोर अधः पतन कुछ समझ में नहीं आता।

रावण ने सीता-हरण तो अवश्य किया था, परन्तु उसे विशुद्ध वैर-प्रतिशोधन की दृष्टि से किया था, किसी कुत्सित भावना-पूर्ति के लिए नहीं; जैसे कि राम-भक्त उसके ऊपर आरोप करते हैं। वह देश, जाति एवं राष्ट्र के नाम पर मर मिटने वाला व्यक्ति था और सूर्पनखा के अपमान को समस्त राक्षस-जाति का अपमान समझता था। इस कथा को समझने के लिए नीचे दिये हुए वंश-वृक्ष से सहायता लेनी चाहिए।

रावण का मातृ-वंश

हेति = मया — प्रहेति

विद्युत्केश = सालकंटकटा — संन्यासी हो गया

सुकेश = देववती

सुन्दरी = माल्यवान — कुतुमती = सुमाली — बसुधा = माली

सुन्दरी = माल्यवान:
१ वज्रमुष्ठि
२ विरूपाक्ष
३ दुर्मुख
४ सुप्तघ्ना
५ मत
६ उन्मत्त
७ यज्ञकोप
८ अनला

बसुधा = माली:
१ अनल
२ अनिल
३ हर
४ सम्पाति

कुतुमती = सुमाली:
प्रहस्त — कम्पन — विकट — कालि — विमुख — धूम्राक्ष — सुपार्श्व — ह्रादि — ७ — भास कर्ण — प्रघस — कुम्भीनसी — राका — पुष्पोत्कटा — विश्रवा = कैकसी

विश्रवा = कैकसी:
धन्यमालिनी = रावण = मन्दोदरी — कुम्भकरण — विभीषण — सूर्पनखा

धन्यमालिनी = रावण: अक्षयकुमार — अरिमर्दन

रावण = मन्दोदरी: मेघनाद

रावण का पितृ-कुल

ब्रह्मा = सरस्वती

पुलस्त्य = तृणविन्दु सुता

कैकसी = विश्रवा = देव वर्णिनी

कैकसी = विश्रवा:
धन्यमालिनी = रावण = मन्दोदरी — कुम्भकरण — विभीषण — सूर्पनखा

विश्रवा = देव वर्णिनी: कुवेर

धन्यमालिनी = रावण = मन्दोदरी: मेघनाद — अक्षयकुमार

कुम्भकरण: तरणीसेन

विभीषण, सूर्पनखा: नल

कुवेर: रकूब

तरणीसेन: अरिमर्दन

सूर्पनखा=विद्जीह्वा दानव ।
विभीषण=सरमा । गन्धर्व वंशी ।
कुम्भकरण=विद्वज्वाला । दैत्य वंश ।
रावण=मन्दोदरी दानव-वंश-अप्सरा ।

इस सम्बन्ध में हम अपने भतीजे चि० रामनाथ गुप्त बी० ए०, अध्यक्ष हिन्दी-विभाग कालविन हायर सेकेण्डरी स्कूल को हार्दिक धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने 'रावण महाकाव्य' का कथा-सार लिखने का कष्ट उठाया है और स्वयं पढ़कर संशोधन किया है।

अन्त में हम अपने परम आदरास्पद साहित्य-सेवी हितेच्छु श्री शुकदेव-बिहारी जी मिश्र को अनेकानेक धन्यवाद देते हैं जिन्होंने बड़ा परिश्रम करके 'रावण महाकाव्य' पर एक गवेषणापूर्ण भूमिका लिखने की कृपा की है। हम लोग आजकल के साहित्य के विद्यार्थी आप ही के पदांकों का अनुसरण करके साहित्य-क्षेत्र में अपना पथ प्रशस्त करने में समर्थ हुए हैं।

महमूदाबाद
मकर संक्रान्ति
विक्रमी २००८

विनयावनत—
हरदयालुसिंह

कवि का परिचय

कविवर श्री हरदयालुसिंह का जन्म सं० १९५० में महमूदाबाद जिला सीतापुर में हुआ था। वे वैश्य-वंश की विभूति हैं। उनके पिता श्री मातादीन शाह परम धर्म-परायण एवं सात्विक विचार के थे। उनकी माता श्री महादेवी एक पढ़ी-लिखी संगीत एवं काव्य-प्रेमी महिला थीं। उन्होंने बाल्य-काल ही में हमारे कवि को 'रामायण' और 'महाभारत' पढ़ाया था, जिसके परिणाम स्वरूप उन्हें उक्त ग्रंथों के अनेक मार्मिक स्थल कण्ठाग्र हो गए थे। कालान्तर में उन्हीं की, पुस्तकों से नवीन संग्रह और हफीजुल्ला खाँ के हजारे से सैकड़ों छन्द याद कर लिये थे। यहीं से हमारे कवि का साहित्यिक जीवन आरम्भ होता है।

सं० १९६७ में उनके पिता श्री मातादीन शाह का स्वर्गवास हुआ। उनके अध्ययन का अंत यहीं से हो गया होता, परन्तु हृदय में उच्च शिक्षा प्राप्त करने की उद्दाम उत्कंठा थी। अतः सं० १९६९ तक वह महमूदाबाद ही में रहकर अपनी सूत की दुकान सँभालते रहे। और उसी वर्ष स्थानीय कालविन हाई स्कूल से उन्होंने हाई स्कूल परीक्षा पास की और व्यवसाय ही की दृष्टि से उन्होंने कानपुर-जैसे औद्योगिक नगर में जाकर क्राइस्ट चर्च कालिज में प्रवेश प्राप्त किया। वहाँ दो वर्ष तक इण्टरमीडियेट में शिक्षा प्राप्त की, परन्तु गृहस्थी के झंझटों के कारण वह कानपुर नहीं रुके और उनके हृदय की अत्यन्त प्रिय अभिलाषा पूर्ण न हो सकी।

हरदयालुसिंह जी का इस प्रकार कालिज से पढ़ना तो छूट गया, परन्तु स्वाध्याय बन्द नहीं हुआ। इसी साल यूरोपीय महासमर आरम्भ हुआ। और रंग के सौदे में उन्होंने धन पैदा किया परन्तु दाल के व्यवसाय में उसे नष्ट ही कर दिया। जब लक्ष्मी ने कवि का हाथ छोड़ दिया, तब सरस्वती जी ने उसे ग्रहण किया और कानपुर के कई हाई स्कूलों में काम उन्हें मिलते और छूटते रहे। अन्त में आपको किशोरीरमण हाई स्कूल मथुरा में स्थान मिला। वहाँ से आप आगरा आये। आगरा से प्रयाग में आए और पं० श्री-

नारायण चतुर्वेदीजी की कृपा से इण्डियन प्रेस में साहित्यिक सहकारी का काम करते रहे।

इण्डियन प्रेस छोड़कर वह झूँसी के सेण्ट्रल ट्रेनिंग स्कूल में हिन्दी अध्यापक हो गए, और वहाँ से जाकर गोरखपुर के डी. ए. वी, हाई स्कूल में कई महीने रहे। सं० २००५ के अन्त में ३६ वर्ष बाहर रहकर वह फिर अपनी जन्म-भूमि महमूदाबाद में आकर रहने लगे हैं, और यहीं रहकर उन्होंने 'रावण-महाकाव्य' पूर्ण किया है। यही कविवर हरदयालुसिंह का जीवन-चरित है।

कवि का परिचय उसकी जीवन की घटनाओं से नहीं होता प्रत्युत उसकी रचनाओं से होता है। अतः यहाँ पर उनकी रचनाओं का उल्लेख करना भी नितान्त आवश्यक है। श्री हरदयालुसिंह जी की ५२ पुस्तकें अब तक प्रकाशित हो चुकी हैं और ४० पुस्तकों की पाण्डु लिपियाँ इण्डियन प्रेस में प्रकाशनार्थ रखी हैं। उनकी रचनाएं आगरा-विश्वविद्यालय के बी. ए. और दिल्ली-बोर्ड की इण्टरमीडियट एवं हाई स्कूल परीक्षाओं में पाठ्य पुस्तकें रह चुकी हैं। उनके अनुवाद बड़े ही सुन्दर हैं। राजा लक्ष्मणसिंह के बाद अनुवादकों में उन्हीं का नाम उँगली पर आता है।

सं० १९९६ में उन्होंने 'दैत्यवंश' नाम का एक उत्कृष्ट महाकाव्य लिखा। जिस पर उन्हें 'देव-पुरस्कार' २०००) रुपया का एवं काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा से २००) रु० का 'रत्नाकर पुरस्कार' प्राप्त हुआ। उनकी रचनाएं अनुवाद, निबन्ध-संग्रह, टीकाएं आदि कई प्रकार की हैं। जिनका विवरण इस प्रकार है—

१. पद्यबद्ध अनुवाद

वेणी संहार

नागानंद

रघुवंश

भास के तीन नाटक

स्वप्न वासवदत्ता

२. संस्कृत नाटक की संक्षिप्त कथाएं

नाटक-निचय

नाटक-दर्शन

नाटक-निरूपण

भास-ग्रंथावली

३. निबन्ध हाई स्कूल के

निबन्ध-निरूपण

निबन्ध-परिचय

निबन्ध-निचय

४. अलंकार ग्रन्थ

रीति-रहस्य

रीति-रत्न
रीति-रत्नाकर

५. टीकाएं

रघुवंश २. १३,१४ सर्ग
कुमार संभव ५ सर्ग
दूत वाक्य

६. आलोचनाएं

देव-दर्शन
मतिराम-मकरंद
भूषण-भारती
बिहारी-विभव
पूर्ण-सुधाकर
सीताराम-संग्रह

७. मौलिक काव्य

दैत्यवंश
रावण

इन पुस्तकों की रचना हरदयालुसिंह जी ने उस समय की थी जब वह किसी-न-किसी स्कूल में अध्यापक भी थे। अब तो वह स्वतन्त्र रूप से अपनी जन्म-भूमि में निवास कर रहे हैं और उनके सामने साहित्य-सृजन का ही कार्य है। हमें विश्वास है कि वह दत्तचित्त होकर साहित्य-सेवा करेंगे। वह जितने सफल अनुवादक हैं, उतने सफल कवि नहीं हैं। अतः हमारा परामर्श तो यह है कि वह रघुवंश ही के समान कुमार-सम्भव, शिशुपाल-वध, किरातार्जुनीय, एवं नैषधादि महाकाव्यों के सुन्दर अनुवादों द्वारा हिन्दी की श्री-वृद्धि करें। उनके लिए ऐसा उपयुक्त अवसर फिर कभी मिलने का नहीं। हमें भी विश्वास है कि श्री हरदयालुसिंह जी हमारा अनुरोध मानकर अनुवाद का क्षेत्र प्रशस्त करेंगे। परमात्मा उन्हें यश प्रदान करे और उनकी रचनाओं का समादर हो।

विद्यास्वरूप गुप्त B. Sc (Agr.)
अध्यक्ष, कृषि-विभाग
कालविन हायर सेकेंडरी स्कूल
महमूदाबाद

कथासार

दक्षिण भारत में विंध्याचल पर्वत है। उस पर एक सघन वन है। उस वन में एक सुन्दर सरोवर है, जिसके चारों ओर सघन विटप-माला लगी हुई है। इसी सुरम्य सरोवर के पास एक दिन सुमाली केतुमती, प्रहस्त और कैकसी चारों आकर बैठ गए। वे लोग कैकसी के लिए अनुकूल वर ढूँढ़ रहे थे। इतने ही में वहाँ पर कुबेर का पुष्पक-विमान निकला। उन्हें देखकर पहले तो केतुमती की इच्छा उन्हीं के साथ कैकसी का विवाह करने की हुई, पर थोड़ी देर में यह विचार बदल गया, और उसने सोचा कि यदि इनके पिता के साथ कन्या का विवाह हो तो मेरा दौहित्र ऐसा ही प्रभावशाली होगा।

इस विचार के अनुसार अन्त में विश्रवा से विवाह करना निश्चय किया गया, और प्रहस्त के परामर्शानुसार कैकसी विश्रवा मुनीश्वर के आश्रम को चली।

मार्ग में भाग्यवश नारद मुनि मिल गए। उन्होंने कैकसी को बहुत कुछ उल्टा-सीधा समझाया और कहा कि चलो तुम्हारा विवाह हम विष्णु भगवान् से करा दें। पर राजकुमारी अपने संकल्प से विचलित न हुई। मुनि-वर के आश्रम पर पहुँचकर उसे ज्ञात हुआ कि उसी दिन उन्होंने समाधि लगा ली है। अतः वह भी उनके सामने समाधि लगाकर बैठ गई। जब विश्रवा की समाधि टूटी तब उन्होंने एक कोमलांगी बाला को अपने सामने ध्यानावस्थित देखा। मुनिवर ने अभिमंत्रित जल छिड़ककर उसकी समाधि भंग की। कैकसी ने चेतना-लाभ करते ही मुनिवर से मनोवांछित वर माँगा।

विश्रवा मुनीश से मनोवांछित वर पाकर कैकसी राजकुमार प्रहस्त के साथ राजधानी को लौटी। उसका बड़ी धूम-धाम से स्वागत किया गया। केतुमती का अनुरोध मानकर कैकसी ने मुनि-दत्त विभूति खाई और उनके प्रसाद से उसके तीन पुत्र और एक कन्या हुई। कुछ बड़े होकर माता के अनुरोध से रावण कुम्भकरण और विभीषण ने घोर तपस्या से चतुरानन को प्रसन्न किया और

उनसे वर प्राप्त करके पाताल को लौट आए।

एक दिन माल्यवान ने दरबार किया। उसमें प्रसंगवश प्रहस्त के मुख से निकल गया कि लंका हम लोगों की थी जिस पर कुबेर ने अधिकार कर लिया है। यह सुनकर क्रोध से उन्मत्त होकर कुम्भकरण पूछने लगा कि कुबेर कौन है और कहाँ रहता है? मैं उसे अभी पकड़े लाता हूँ। रावण ने उसको शान्त करते हुए प्रहस्त से अनुरोध किया कि तुम स्वयं जाकर कुबेर से लंका छोड़ देने का प्रस्ताव करो।

प्रहस्त लंका आया। कुबेर ने उन्हें ससम्मान अतिथिशाला में विश्राम कराया और रात्रि ही में पुष्पक-विमान द्वारा पिता के पास परामर्श करने के लिए आया। विश्रवा ने उन्हें यही सम्मति दी कि तुम लंका छोड़ दो, इसी में ही तुम्हारा कल्याण है। पिता की आज्ञा मानकर कुबेर ने प्रहस्त से आकर कहा कि हमें ३ महीने का अवकाश दिया जाय। हम इसी अवधि में अपने लिए दूसरा भवन बनवाकर इसे छोड़ देंगे। प्रहस्त चला गया। कुबेर ने विश्वकर्मा से कैलाश के पास ही अलकापुरी बनवाई और रावण के पास लंकापुरी छोड़ देने का समाचार भेज दिया।

राक्षसों ने बड़ी धूम-धाम से लंका में प्रवेश किया। माल्यवान ने मयदानव के द्वारा टूटे-फूटे भाग को फिर से बनवाया। मयदानव ने लंकापुरी की बनवाई के उपहार-स्वरूप रावण से अपनी कन्या के विवाह का प्रस्ताव किया। इस प्रकार चारों का विवाह हो गया। इसके अनन्तर माल्यवान ने रावण को राज्य-सिंहासन पर बैठा दिया।

मंदोदरी ब्याहकर लंका आई। यथा समय उसके गर्भ से मेघनाद का और धान्यमालिनी से अक्षयकुमार का जन्म हुआ। धीरे-धीरे मेघनाद सयाना हुआ। विधिवत् उसकी शिक्षा-दीक्षा हुई। तब कैलाश पर जाकर उसने तपस्या द्वारा भगवान् शंकर को प्रसन्न किया। लौटते समय मातामही के घर होते हुए आया। वहाँ मृगया में भटकता हुआ एक देवी के मंदिर के पास सरोवर के निकट थककर विश्राम करने लगा ही था कि कन्याओं का करुण क्रंदन उसके कर्णगोचर हुआ। उनमें से एक को नक्र सरोवर में डुबाने ही को था कि मेघनाद ने उसे मारकर उसकी रक्षा की। उसी के साथ राजकुमार का गंधर्व-विवाह हो गया। वह नाग-कन्या सुलोचना थी।

मेघनाद सुलोचना से विवाह करके लंका लौट आया, परन्तु उसने यह बात किसी से कही नहीं। धीरे-धीरे सुलोचना के विरह ने उसे उन्मादी बना दिया। अब तो वह इधर-उधर की बातें करने लगा। यह देखकर किसी-किसी

को प्रेत-बाधा की आशंका होने लगी। राजवैद्य सुखेन ने उसका रोग समझकर उसके निवास के लिए समुद्र के पास एक बड़ा ही सुन्दर भवन निर्माण करवाया। राजकुमार उसी में रहने लगा। एक दिन उसने पूर्ण चन्द्र को उदित देखा। उसके द्वारा सुलोचना के पास अपना प्रेम-सन्देश भेजने का निश्चय किया।

एक दिन रावण के घर पुलस्त्य मुनि का आगमन हुआ। रावण ने मुनिवर का बड़ा आदर किया। पुलस्त्य जी ने रावण के अनुरोध से उसका वंश-परिचय सुनाया।

जब रावण को ज्ञात हुआ कि देवताओं के अनुरोध से ही विष्णु ने उसके नाना माली को मार डाला था, तब तो उसने सारे देव-कुल का संहार करने का निश्चय किया और दिग्विजय में त्रैलोक्य जीता।

एक दिन गुप्तचरों द्वारा रावण को पता लगा कि उत्तरापथ के बकसर में मुनिगण अभिचार-मंत्र जपते हैं और यज्ञ के व्याज से उसका अनिष्ट साधन करते हैं। मारीच ने इसका समर्थन किया। विभीषण ने परामर्श दिया कि बकसर का प्रान्त छोड़ दिया जाय और सारी सेना विन्ध्य-पर्वत के इस पार पंचवटी में रहे। अन्य मन्त्रियों ने भी विभीषण का समर्थन किया। इसके अनुसार सूर्पनखा जनस्थान में गवर्नर हुई और १० सहस्र राक्षसी सेना खरदूषण और त्रिशिरा सहित यहाँ रहने लगी। उस समय दक्षिण में बाली अपनी शक्ति बढ़ा रहा था। उस पर उन राक्षसों की कड़ी दृष्टि रहती थी।

जनस्थान में आकर राक्षस और भी स्वतन्त्र हो गए। खर ने सबको सूचित किया कि बिना राजाज्ञा के कोई मुनि विशाल यज्ञ न करे और यदि करे तो किसी राजकर्मचारी को बुला ले। मुनियों ने इसका विरोध किया। सैनिक शासन की घोषणा कर दी गई, फिर भी यज्ञ हुए। सैनिकों ने मुनियों को पकड़ा। मुनि-सभा हुई, सभापति शरभंग ने अनल-प्रवेश किया। उस सभा में मार-पीट हुई। मुनियों ने सूर्पनखा को मार डालने की धमकी दी।

उन दिनों वहाँ राम, लक्ष्मण और सीता रहते थे। उन लोगों ने मुनियों को और भी भड़काया था। जब मुनि-सभा का समाचार रामचन्द्र जी को मिला तब इन्होंने प्रतिज्ञा की कि हम पृथ्वी भर के सभी राक्षसों का नाश करेंगे। लक्ष्मण ने प्रतिज्ञा की कि हम सूर्पनखा का वध करेंगे।

एक दिन काल-प्रेरित सूर्पनखा निशा में घूमते-घूमते भटककर राम-

लक्ष्मण की कुटी के पास आ निकली। लक्ष्मण ने उसे पहचानकर तत्क्षण उसे मारने की चेष्टा की और उसके नाक-कान काट लिये। वह अपनी छावनी में देर से लौटी। उसे विरूप देखकर द्वारपाल ने खर से सब हाल जाकर कहा। खर ने रण-दुन्दुभी बजवाई। इसे सुनकर रामचन्द्र समझ गए। उन्होंने ब्रह्मास्त्र के प्रहार से सारी राक्षस-सेना भस्म कर दी। यह देखकर सूर्पनखा ने अपना एक विरूप चित्र खींचकर पत्र के साथ सारी घटनाएं चर के द्वारा रावण को लिख भेजीं और स्वयं घर में अग्नि लगाकर उसमें जल मरी।

गुप्तचर सूर्पनखा का चित्र और पत्र लेकर लंका आया और रावण से सारा वृत्तान्त कह सुनाया। रावण ने तत्काल अपना कठिन कर्तव्य निश्चित किया। उसने सीता-हरण करके उन्हें लंका में लाकर राजबन्दी बनाया।

इधर रामचन्द्र ने जटायु से सीता-हरण का समाचार पाकर सुग्रीव से मैत्री की और बाली को मारकर उनकी सहायता से बानरी सेना का संगठन किया तथा हनुमान द्वारा सीता का समाचार जानकर लंका पर आक्रमण करने का विचार किया।

सेतु बन गया। विभीषण का रामचन्द्र ने स्वागत किया और उसे लंका का राज्य देने का प्रलोभन दिया। अंगद राजदूत बनकर रावण के दरबार में गये। परन्तु बहुत समझाने-बुझाने पर भी रावण ने सीता को लौटाना स्वीकार न किया। वे निराश होकर लौट आए।

राक्षसों का वानरों और भालुओं की सम्मिलित सेना से युद्ध हुआ जिसमें मेघनाद, कुम्भकरण, रावण इत्यादि मारे गए। विभीषण को प्रतिज्ञानुसार राज्य देकर रामचन्द्र सीताजी के साथ पुष्पक-विमान पर बैठकर अयोध्या चले आए।

विभीषण ने मंदोदरी को अपनी पटरानी बनाने के जितने प्रलोभन दिये उन पर धान्य-मालिनी ने पानी फेर दिया।

जब मय दानव को लंका के सर्वनाश का पता चला तब वह यहाँ आकर अपनी दोनों कन्याओं को अपने साथ ले गया।

नाग नगर में जाकर धान्यमालिनी के गर्भ से अरिमर्दन कुमार का जन्म हुआ, जिसे परशुराम ने धनुर्विद्या पढ़ाकर अपने ही समान धनुर्धर बनाया। जब अरिमर्दन सयाना हुआ और उसे ज्ञात हुआ कि उसके पिता को विभीषण ने मरवा डाला है और उसका राज्य छीन लिया है तब तो वह अकेला ही लंका पर आक्रमण करने चल पड़ा।

लङ्का में आते ही उसे स्वतंत्र दल के सैनिकों का सहयोग प्राप्त

हुआ जो विभीषण के कुप्रबन्ध से असन्तुष्ट थे। विभीषण ने पहले तो अरिमर्दन को रोका, पर हार मानकर एक ओर तो सन्धि कर ली और दूसरी ओर अयोध्या से सहायता माँगी। लवकुश ससैन्य सहायता के लिए आये। तब तो विभीषण ने सन्धि-भंग करके अरिमर्दन को संग्राम के लिए ललकारा। इधर नाग नगरी से दानव, दैत्य और नागों की सम्मिलित सेना अरिमर्दन की सहायता के लिए आ पहुँची, और दोनों सेनाओं का युद्ध-क्षेत्र में सामना हुआ। तब तक प्रजा का एक प्रतिनिधि-मंडल लव के पास यह कहने गया कि इस युद्ध में हमारी सब प्रकार से हानि है। इसे आप बन्द करा दीजिये। उनका अनुरोध मानकर लव ने युद्ध बन्द करने की आज्ञा दी। लंका की स्वाधीनता की घोषणा कर दी गई। अरिमर्दन उसका प्रथम अध्यक्ष बनाया गया। विभीषण तपस्या के लिए वन को चले गए और लव लंका से अयोध्या लौट आए।

महमूदाबाद
२४-१-५२ ई०

श्री रामनाथ गुप्त बी० ए०
अध्यक्ष हिन्दी-विभाग
कालविन हायर सेकेण्डरी स्कूल

भूमिका

[इसमें कवि का जीवन-चरित्र तथा कथा-सार हम इस कारण से नही देते हैं कि उन विषयों पर दूसरों ने लिख दिया है। इस भूमिका में बहुत करके साहित्यिक गौरवकारी कथन आवेगा।]

रीति-काल में महाकाव्यों के लिखने की ओर कवियों ने जितनी उदासीनता दिखलाई थी वर्तमान काल के कवियों ने उसकी ओर उतना ही अनुराग प्रदर्शित किया है। फलतः वर्तमान काल में, कृष्णायन, कामायनी, हल्दीघाटी, सिद्धार्थ, रामचरितचिन्तामणि, साकेत, दैत्यवंश, इत्यादि महाकाव्य लिखे गए, और गान्धयायन, परसुराम, तथा रावण इत्यादि निकट भविष्य में आ रहे हैं। इससे इस गीतिकाव्य-काल में भी महाकाव्यों की रचना की ओर कवियों का अनुराग शिथिल नहीं प्रतीत होता, प्रत्युत साहित्य के उज्ज्वल भविष्य के सूत्रपात का सन्देश मिल रहा है। यदि कवियों ने साहित्य-सृजन में ऐसा ही अनुराग दिखलाया तो इसका पथ उत्तरोत्तर परिष्कृत होता जायगा।

'रावण महाकाव्य' का आरम्भ कवि ने विन्ध्याटवी के वर्णन से किया है। उस समय उसके सामने कादम्बरी अवश्य रही होगी। पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है कि कवि ने जिन-जिन वृक्षों का वर्णन किया है, उन्हें अपने चर्म चक्षुओं से भले ही न देख पाया हो, पर पुस्तकीय ज्ञान के आधार पर उसने जो कुछ भी लिखा है उसमें सजीवता आ गई है। फलतः केतक, दाड़िम, पलास, चम्पक, अशोक, आदि के वर्णन बड़े ही सुन्दर पड़े हैं।

विंध्याटवीगत सरोवर का वर्णन करते समय कवि के सामने अच्छोद सरोवर का चित्र अवश्य आ गया होगा। यह वर्णन बड़ा ही सुन्दर बन पड़ा हैं। इस प्रसंग के लिखने में कवि ने एक-से-एक सुन्दर छन्द कहे हैं और कल्पना की बड़ी ही ऊँची उड़ान भरी है। वास्तव में 'रावण' वर्णनात्मक काव्य अधिक है भावात्मक कम। ध्वनि का सन्निवेश और भी कम है, पर इसके न होते हुए भी इसकी सुन्दरता पर आघात नहीं हुआ है।

'रावण' में कवि ने व्रजभाषा के पेटेण्ट छन्दों का प्रयोग किया है जिनमें घनाक्षरी और विशेष करके सवैये बहुत ही सुन्दर बन पड़े हैं। रोले और रूपमालाएं भी सुन्दर आई हैं, पर व्रजभाषा-काव्य में अवधी के दोहे चौपाइयां कुछ खटक-सी जाती हैं। किसी भी महाकाव्य का आद्योपान्त उत्कृष्ट होना असम्भव नहीं, तो दुरूह अवश्य है। वास्तविक बात तो यह है कि कोई भी पौरुषेय निर्माण गुण-दोष के समन्वय से सर्वथा वंचित नहीं होता। हिन्दी-साहित्य का शृङ्गार-हार 'रामचरित मानस' भी इस व्यापक नियम का अपवाद नहीं हो सका है। यही दशा 'रावण' की भी है। इसके कतिपय अंश तो उत्कृष्ट और कुछ साधारण हैं। पर सब मिलाकर सुन्दर छन्दों की संख्या अधिक है और सामान्य छन्दों की संख्या कम। इसलिए अन्ततोगत्वा हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि 'रावण' एक सुन्दर रचना है।

काव्य-कानन-पंचानन श्री मम्मटाचार्य, और विश्वनाथ जी ने महा-काव्य के जो-जो लक्षण बताए हैं उन सबसे युक्त होना ही उसकी पूर्णता के लिए पर्याप्त नहीं है, प्रत्युत उसके अतिरिक्त कुछ और भी है। वह है हृदय-ग्राहिता, जिसका प्रस्तुत ग्रन्थ में अभाव नहीं है।

'रावण' में यों तो लगभग सभी रसों का समावेश है परन्तु वीर और शृङ्गार की बहुलता है और इन्हीं दोनों रसों का सुन्दर परिपाक भी हुआ है। कैकसी का सौन्दर्य-निरूपण कवि ने बड़ी ही सुन्दरतापूर्वक किया है। उस प्रसंग के कुछ छन्द यहाँ पर उद्धृत करते हैं। कैकसी अपनी माता केतु-मती का अनुरोध मानकर विश्रवा के आश्रम को चली। उसकी सुन्दरता का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है :

(१)

कैकसी के चलत गुलाब गुललाला औ',
प्रबालनि बंधूकनि की सुषमा सकानी है।
त्यौंही कोकनद इन्दीवर अरविन्द वृन्द,
चम्पक गुलाब की प्रभाहू सकुचानी है॥
उड़न मराल लागे गज अकुलान लागे,
केहरी गुफानि में लुकाइबे की ठानी है।
दाड़िम औ' श्री फल करिन्दन के कुम्भ घट,
वाकी छवि सामुहे भरत मानो पानी है॥

(२)

भाग्यौ चन्द व्योम घन माहि दुरिवे के काज,
खंजन उड़ाने मीन नीर में लुकाने हैं।
त्यौं ही मृग-सावक दुरत फिरै कानन मैं,
कीरहू अकास में उड़त बिललाने हैं।
किसलय कोमल सकल कुँभिलान लागे,
विद्रुम लजाने बिम्ब डारिनि सुखाने हैं।
तोरै लगे सक्र चाप, फेंक्यौ है वरुन पास,
कोकिल उड़ानी औ', मयूर अकुलाने हैं॥

(३)

सहजहिं लालिमा निहारि जासु एंड़िन की,
हीतल सरोज हारि मानि सकुचायौ है।
त्यौं ही सुकुमारता की छाँह हू तिया के पानि,
पल्लव की पंकज छुवन में लजायौ है।
कैकसी कौ आनन चतुर चतुरानन नै,
सान पै चढ़ाय यहि भाँति सौं बनायौ है।
पूनौ की निसा कौ पूरौ मंजुल मयंक मानौ,
जाकौ लघु चाकर बनन नहिं पायौ है॥

(४)

ढरकत जातसी जुन्हाई की धवल धार,
पग धरतै ही धरती हू सकुचात जात॥
विवरन होत गात विपिन बयारि लागे,
जैसे हिम पात सौं सुखात जलजात जात।
कुच कच प्रथुल नितम्बनि के भारनि सौं,
द्वैक ही धरेते डग लंक बल खात जात।
स्रम-कन जालनि समोय स्वेत सारी गई,
सिथिल सरीर भयौ गात अरसात जात॥

ऊपर दिये हुए छन्द में प्रतीप का सन्निवेश कैसी सुन्दरता से किया गया है। इसके लिए कवि ने प्रयास नहीं किया है, प्रत्युत वे स्वाभाविक रूप से कविता में आ गए हैं।

कैकसी तपस्या करने की तैयारियाँ करने लगी। उसे अपनी सुन्दरता तो कहीं धरोहर के रूप में रखनी थी।

चन्द कौ दीन्हीं प्रभा मुख की,
अरविन्दनि कौं तन-कोमलताई।
मंजुलता तिमि नैननि की,
मृग-खंजन मीननि दीन्ह्यौ गहाई।
मण्डलता त्यों कपोलनि की,
तहं आरसी ने कछुहू कछु पाई।
ग्रीव की रंच मनोहरता,
बड़े भागिन कम्बु के हाथ में आई॥

श्रीफल लीन्ह्यौ उरोज प्रभा,
करि कुम्भनि सौं घट फोरत ही रहे।
बाँहन पै त्यों सनाल सरोज,
निछावरि ह्वै तिन तोरत ही रहे।
लंक की छमता की छबि कौं,
वर तन्तु मृनाल के छोरत ही रहे।
जंघनि की कमनीयता कौं,
कदली गज-सुण्ड निहोरत ही रहे॥

प्रकृति निरीक्षण करना भी कवि का कर्तव्य-सा है और रीतिकारों ने महाकाव्य के लिए इसकी अनिवार्य आवश्यकता भी बतलाई है। 'रावण' में इस बात की कमी न होने पाय इसे ध्यान में रखकर कवि ने संध्या, प्रभात, चन्द्रोदय, चन्द्र इत्यादि पर भी सुन्दर छन्द लिखे हैं। देखिए:—

लागीं भानु-किरनैं तिरिछी पुहुमी पै परैं,
तपत तपाकर तपनि मन्द ह्वै गई।
भूमिरुह-सिखिर-विहारिनि - पतंग - प्रभा,
धारि विंध्य-कूट पै चरन डग द्वै गई।
तौलौं भासमान भानु ही लौं वायुयान दीस्यौ,
अचरज माँहि सबही की मति भ्वै गई।
नभ-निकषा पै हेम-रेख खैंचि दीन्हीं मानौ,
कैधौं मेघ-मण्डल में दामिनी सम्वै गई॥

पश्चिम दिसा में साँझ होत ही तरनि बिम्ब,
अस्ताचल ओर उतै ढरत लखात है।
पूरब दिसा सौं त्यों ही पूरन मयंक इतै,
विहँसत व्योम पथ चढ़त दिखात है॥
ऐसे समय विंध्य-महीधर को विसद सृङ्ग,
सोभा यहि भाँति सौं धरत सरसात है।
मानौ देवराज कौ प्रमत्त गजराज आजु,
घण्टा द्वैक बाँधि कै चलत दरसात है॥

विकसन लागी कुमुदावली मुदित मन,
कमल-कलाप त्यौंही सकुचन लाग्यौ है।
निकसन लाग्यौ मान मानिनी करेजनि सौं,
पाहन-तियाहू के हिया मैं मैन जाग्यौ है॥
लागी दिसा धारन धवल परिधान दिव्य,
हिय हहराय कै निसा कौ तम भाग्यौ है।
विहँसन लाग्यौ व्योम उछरन लाग्यौ सिन्धु,
इन्दु कौ विमल बिम्ब निसरन लाग्यौ है॥

'संध्या' और 'चन्द्रोदय' पर कवि ने कैसे-कैसे सुन्दर छन्द कहे हैं और अलंकारों का पुट देकर उन्हें कैसा मनोरम बनाया है।

अब प्रभात का वर्णन देखिए। यह बड़ा सुन्दर हुआ है। वर्णन में नूतनता तथा एक अनूठापन है:—

चन्द्रिका सौं ससि रीतौ भयौ,
छनदा छन में अब चाहति चाली।
लागे विहंगम-वृन्द उड़ान,
चहूँ दिसि कूजि उठी चटकाली॥
मन्द बहै लागी सीरी समीर,
औ' व्योम में छाय रही कछू लाली।
भाल पै प्राची दिसा के मनौ,
धरि सिन्दुर बिन्दु दियौ उषा-आली॥

धारि सुमेरु के सीस पै पाँय,
चढ़्यौ हरि मध्यम धाम लौं जाई।
कौल-कलापनि कौ सकुचाय,
कुमोदिनी कौ कुल दीन्हौ हँसाई॥
ह्वै छबि छीन कलाधर सौं,
नभ सौं गिरतै अब देत दिखाई।
ऊँचौ चढ़ै सो गिरै निहचै,
यह मानहु साँची भई कहनाई॥

औनत ऐसी दसा ससि की भई,
सोक चकोरनि कौ तऊ नाहीं।
लोचन मूँदि कुईनै लियौ,
औ' दिसा मुख हू कछु मन्द दिखाहीं॥
अम्बर रोयौ महादुख कै,
अँसुवा बरसे तिन पल्लव माँहीं।
जानत प्रेम की पीर नहीं,
ते बृथा सब ओस कहैं तिन काँही॥

छाँड़ि उलूक अनन्द दियौ,
चकवा चकई के हिए मुद जाग्यौ।
जामिनी भामिनी की तजि सेज,
विहारनि सौं थकिकै ससि भाग्यौ॥
कोषनि माँहि सरोजनि के,
रहिबौ न मलिंदनि नै अनुराग्यौ।
बान-मयूष दिवाकर के,
करके तम-वारन पै परै लाग्यो॥

रावण के नाते कवि ने अन्य राक्षसों का चित्र भी बड़ी कुशलता से अंकित किया है। जहाँ उनमें अदम्य उत्साह और साहस तथा अप्रमेय शारीरिक शक्ति है वहाँ उनमें लोकोत्तर स्वाभिमान भी है। अपनी बहन कैकसी का विवाह करने के लिए प्रहस्त वर की खोज में है परन्तु उसे कोई अनुकूल वर नहीं मिलता, जिससे सम्बन्ध किया जा सकता था। शत्रु-पक्ष-समर्थक विष्णु भगवान् को वह अपनी बहन देना नहीं चाहता था। वह देना चाहता

है विश्रवा मुनि को, सो भी उनके कुल, गौरव, तपश्चर्या एवं स्वाध्याय पर मुग्ध होकर। देखिये :

नारद से सोहत सपूत चतुरानन के,
कोऊ इनको तौ तिन तुल्य गनिहैं नहीं।
त्यौंही सम्भु सूनु दोऊ है ही व्याह जोग याके,
अजुगुत बात ऐसी जग मनिहैं नहीं॥
हारे हैं सुरासुर समूह हम लोगनि सौं,
याते ममताई तिन संग ठनिहैं नहीं।
गौरव सुकेस कौ बनाये राखिबे के काज,
सौति सिन्धुजा की कैकसी तो बनिहै नहीं॥

विधि ही बबा हैं अरु दादी वाग-देवता है,
तपनिधि पावन पुलस्त्य पिता जाके हैं।
सस्वर पढ़े हैं वेद और वेद अंगनि कौ,
तप तपि वे मैं सविता न सम जाके हैं॥
ध्यावत समाधि साधि पुरुष पुरातन कौ,
रहत सदा जे ब्रह्म आनँद मैं छाके हैं।
जो पै कैकसी कौ विश्रवा ही मिलि जाय पति,
मेरी जान भाग्य ही उदित भये वाके हैं॥

वास्तव में राजकुमार प्रहस्त में ऐसा ही वंश-गौरव का ध्यान और ऐसा ही स्वाभिमान होना चाहिए। यह विचार केवल दर्पित पुरुषों का ही नहीं था प्रत्युत उन कोमलांगिनी ललनाओं का भी था। यहाँ कवि ने राक्षसों का वंश-वर्णन आदि कवि वाल्मीकि के आधार पर लिखा है, यद्यपि व्यासों द्वारा कथित वंशावली में पुलस्त्य ब्रह्मा के पुत्र न होकर सूर्य-वंशी वैशाल कुल की एक कन्या के वंशधर, और रावण वैवस्वत मनु का प्रायः पैंतीसवाँ वंशधर था। अब कवि के अनुसार दूसरा विषय उठाया जाता है।

राज-महिषी मन्दोदरी विधवा हो गई। विभीषण उसे अपनी स्त्री बनाना चाहते थे। कविवर केशवदास जी ने इसी मत का समर्थन किया है, एवं विभीषण के इसी अपराध पर उन्होंने लव के द्वारा उनकी घोर भर्त्सना भी करवाई है। कवि ने मंदोदरी का विगत आत्म-गौरव इस प्रकार व्यक्त किया है :

कौन सौं वैभव एसौ रह्यौ,
जहिके सुखको अनुभौ कियौ नाहीं।
जीवत नाथ रहे जब लौं,
तब लौं दुख छ्वै न सक्यौ परछाहीं॥
जात अमोद प्रमोद के साजे,
रहे तित ही जित ही हम जाहीं।
हौं बड़भागिनी मेरे समान,
नहीं वनिता तिहुँ लोकनि माँहीं॥

पुष्प विमान पै नाथ कौ हाथ,
गहे गहे व्योम विहारनि कै चुकी।
देव - तिया-सिर-चन्द्रिका - चारु,
हमारे दुओ पद-पंकज छ्वै चुकी॥
त्यौं अमरेस समाज हमैं,
कर जोरे खड़ी अभिनन्दन दै चुकी।
बानी मघोनी उमा औ' रमा,
समतूल ही धन्य सुहागिनी ह्वै चुकी॥

ये अधमा कुटिनी इतै आय,
यहाँ लगि तौ कहती हम पाँहीं।
एकै जो कंज कली न खिली,
तौ कहा कहूँ भौंर कौ ठौर है नाँहीं॥
कंज कली की बलाय सौं भार में,
भौंर की भीर चली सब जाँहीं।
सूप सौं सावन की सरिताहि,
भला कोऊ रोकि सक्यौ जग माँहीं॥

हो न कोऊ यहि ठौर कहा,
कुलटानि कौ दै गलबाँही निकारौ।
त्यौं ही लुकेठनि लै कर मैं,
दई मारे विभीषन कौ मुख जारौ॥

राम कों नाम लगावत मूढ़,
कहै यहि मैं अब कौन है चारौ।
नार के हेतु अकेलेहु पै,
लरि कै जिन रावन सौं अरि मारौ॥

मंदोदरी रावण की पटरानी थी। वह मय दानव की कन्या थी। उसका जन्म हेमा अप्सरा के गर्भ से हुआ था। यह एक अद्वितीय सुन्दरी थी। इसके सौन्दर्य का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है:

(१)

जा दिन तें मयदानव-नंदिनी,
ब्याहि कै लंकपुरी महँ आई।
मानसरोवर में मनौ हेम,
सरोज खिल्यौ सुषमा बगराई॥
कै नभ नील मै राजत मंजु,
कलाधर मंडल माँहि जुन्हाई।
तारिका माल-सी आलिन सौं घिरी,
या विधि बाल रही छबि छाई॥

(२)

केतुमती - पद - वन्दन - काज,
बधू जबही जबै वा ढिग आवत।
रंचक सीस सौं सारी खसै,
परिचारिका आपने हाथ उढ़ावत॥
भीतर सौंध सौं बाहर लौं,
चहुँओर जुन्हाई की धार-सी धावत।
ता पर मंद हँसी की छटा,
वसुधा पै मनौ सुधा-धार बहावत॥

(३)

जावक सौं रंगे पंकज पायन,
बाल जबै वसुधा पै धरे है।
सोचि कै कोमलता तिनकी,
अवनी मन माँहि संकोच करै है॥

त्यौं ही जपादल विद्रुम और,
बन्धूकनि की प्रभा मंद परै है।
औ गुललाला गुलाबनि की,
सुषमा सिगरो कौ निसंक हरै है॥

गर्भवती नायिका का वर्णन प्रायः कविगण नहीं करते पर प्रसंगवश महाकवि कालिदास, बाण, भवभूति और बिहारीलाल ने इसे किया है। यहाँ पर गर्भभारालसा मंदोदरी का वर्णन देखिए :

सुभ गर्भ के लच्छन लंक नरेस की,
जाया सबै दरसावै लगी।
कछु छीनता आइ सुगातनि पै,
पियराई कछू मुख आवै लगी॥
नित मृत्तिका खान में मैतनया,
अपनी रुचि बेस दिखावै लगी।
कुच दोहुन के मुख-मंडल पै,
कछु स्यामलता अब धावै लगी॥

श्रृङ्गार रस की कविता में अश्लीलता के अन्वेषक इसे चाहे जो कुछ कहें, पर है यह अपने ठाट का अनूठा ही।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने राक्षसों की कुछ विशेष निन्दा की है। काला होना तो कोई बुरी बात नहीं। विषुवत् रेखा के निवासी काले होते ही हैं। पर स्वप्न सुअर श्रृगालमुख होना ऐसी बात है जो साधारण बुद्धि मे नहीं आती। बाल मेघ-नाद के प्रसंग में एक से एक सुन्दर छन्द है। उनका उल्लेख कहाँ तक किया जाय। वह धीरे-धीरे बढ़ता ही जाता है। दिव्यास्त्रों का सम्प्रहारण एवं निवारण सीखता है। पितृव्य कुम्भकरण उसे मल्लयुद्ध के अनेकों दाँव-घात बतलाता है। बालक मेघनाद जब कभी सहज ही बाहर सैर को निकलता है तो इन्द्र भय के मारे अमरावती के द्वार बन्द कर लेता है। एक बार मेघनाद रावण के साथ कैलाश को गया। कवि ने वहाँ का चित्र अंकित किया है। देखिए :

संभु के सैल पै बाल गयौ,
दससीस के साथ महा अनुराग्यौ।
सैलजा - वाहन ताहि लखे,
सहसा गरराय उठ्यौ रिस पाग्यौ॥

पै सुनि बारिद-नाद की डाट,
छिनैकही मैं तहि कौ मद भाग्यौ ।
सद्य ही स्वान लौं ह्वै कै सभीत,
ससटि कै पूँछ हिलावन लाग्यौ ॥

लाग्यौ उड़ै भय पाग्यौ सिखी,
तऊ पिच्छ के भारन ही सौं झुकै लग्यौ ।
त्यौं महामूस गजानन कौ,
घबराय कै कंदरा माँहि लुकै लग्यौ ॥
संभु कौ बैल भग्या महाराय,
निवारत भृंगी न नैकु रुकै लग्यौ ।
बाये बड़ा मुख भैरव स्वान,
सभीत ह्वै बार ही बार भुकै लग्यौ ॥

सिंह, मूस, नंदी, मयूर और भैरव स्वान पर जो कुछ बीती सो बीती ही अब यदि साँपों के कहीं कान होते तो भगवान् शंकर की जो कुछ दशा होती उसका भी कवि ने अनुमान कर लिया है, देखिए :

होते बिना उपवीत महेस,
जटानि के जूट सबै ढलि जाते ।
लाजन ही गरते जबै कौंधनी,
और कोपीन दुवौ खुलि जाते ॥
पावते डोरी कहाँ ते पिनाक की,
पानि मै कंकन कैसे सजाते ।
व्याल के कान जो होते कहूँ,
घननाद की हाँक जुपै सुनि पाते ॥

दिव्यास्त्रों के प्रयोग से मेघनाद सर्वथा निपुण तो था ही, उसमें अप्रमेय शारीरिक शक्ति भी थी । उनके बाहु-बल का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है —

सगर मैं जुरिबै हित जाकी,
उतावली दोऊ सदा रहै बाँहैं ।
त्यौं सुर-सेना-बिदारन काज,
निरन्तर जे मन माँहि उमाँहैं ॥

साध भरी यै रहै हिय मैं,
कब धौं रन-सागर कौ अवगाहैं।
सोवती छाँह मैं लंक रहै,
अरिवृन्द गहैं जमलोक की राहैं ॥

कवि ने अपने निवेदन में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट ही कर दिया है अत: उस पर अधिक लिखने की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। इस ग्रन्थ को लिखकर कवि ने एक विचार सामने रखा है। अब तक पाठकगण काव्य-सौन्दर्य के रसास्वादन से सन्तुष्ट हो जाया करते थे। परन्तु अब उन्हें 'रावण' को पढ़कर कवि के तथ्य-निरूपण पर भी विचार करना पड़ेगा और उसके औचित्य अथवा अनौचित्य की ओर भी उनका ध्यान जायगा।

प्रस्तुतः महाकाव्य को कवि ने १७ सर्गों में विभक्त किया है। यद्यपि कथा वाल्मीकि रामायण से ही ली गई है, तथापि कवि ने अपनी प्रखर प्रतिभा से उसे कई अंशों में विभक्त करके उसमें एक विशेष चमत्कार एवं सौन्दर्य डाल दिया है। छन्दों का चयन भी कवि ने रसानुकूल किया है। भाषा विशुद्ध ब्रजभाषा है, जो भावों का बराबर साथ देती जाती है। गुण एवं वृत्ति का भी सामञ्जस्य नितान्त मनोरम है। रचना हृदय-ग्राहिणी है। सब मिलाकर 'रावण' एक सुन्दर महाकाव्य है।

'रावण महाकाव्य' के पढ़ने से विदित होता है कि कवि ने संस्कृत-साहित्य का विशेष रूप से अध्ययन किया है और उसके प्रचलित भावों को पूर्ण रूप से आत्मसात् भी किया है। तभी तो उनकी अभिव्यक्ति इतने सुन्दर ढंग से हुई है; और जिससे प्रस्तुत महाकाव्य का सौन्दर्य और भी बढ़ गया है। अपने पूर्ववर्ती महाकवि के भावों का आदर करना साहित्यिक-तस्करता नहीं है। यह तो वास्तव में भाव परिष्करण है।

कै गति तीखी कुरंगनि की,
तुम बिंध्य पहारनि पै चढ़ियौ ना।
कानन - दृश्य विलोके बिना,
कबौ भूलिहू बा वन ते कढ़ियौ ना ॥

त्यौं ही जवालि मुनीस को आश्रम,
भूमि को त्यागि कहूँ बढ़ियौ ना।
दोष न या वन देखिवै कौ,
बलि माथे हमारे कहूँ मढ़ियौ ना॥

याही तपोमयी भूमि में वैठि,
तपोधन इन्द्रिय-बेगनि बाँधैं।
दूसरौ जन्म सुधारन काज,
भुजा कौ उठाय महातप साधैं॥
बारि पंचागिनि चारहुँ ओर,
महेश्वर को मन में अवराधैं।
छवाय सुधासौं सिंची किरनै,
तिन की परिपूरन कीजियौ साधैं॥

नाहर कौरव घोर सुनै,
जुपै रावरे स्यन्दन के मृग भागैं।
रोकेहु तें केहु भाँति रुकें नहिं,
हीतल में यों महाभय पागैं॥
पीठ पै दै थपकी कर सौं,
पुचकारियौ हौलैं सँभारिकै बागैं।
दण्डक कानन मंजुल दृश्य,
निहारिबे मैं जेहिते अनुरागैं॥

सैल की सोभा निहारिबे में,
मन आपको मीत कहूँ रमि जायना।
सीत की भीत सौं ह्वै कै बिहाल,
मृगानि की जोरी कहूँ थमि जायना॥
रावरौहू का जाल की व्यूह,
तुपार परे तें कहूँ जमि जायना।
औ मम कारज साधिबे कौ,
अनुराग तुम्हारो कहूँ समि जायना॥

कहना नहीं होगा कि चन्द्र-दूत वाला सर्ग परम उत्कृष्ट रचना है। इसमें एक-से-एक सुन्दर छन्द हैं। उन सबका उल्लेख करके हमें भूमिका भाग की कलेवर-वृद्धि करना इष्ट नहीं, अतः सुन्दर छन्दों का उल्लेख हम यहीं समाप्त करते हैं। यदि पाठकों ने इसे दत्तचित्त होकर पढ़ा तो उन्हें इसमें प्राचीन विषय न्यूनता के आवरण में दृष्टिगोचर होगा।

'रावण महाकाव्य' के अन्य प्रसंग भी लगभग इसी प्रकार के हैं। हाँ उन्हें ध्यान पूर्वक पढ़ने और मनन करने की आवश्यकता है। और यह बात अनुरागी पाठकों पर ही निर्भर है।

कवि ने अपने निवेदन में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट ही कर दिया है अत: उस पर अधिक लिखने की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। इस ग्रन्थ को लिखकर कवि ने एक विचार सामने रखा है। अब तक पाठकगण काव्य-सौन्दर्य के रसास्वादन से सन्तुष्ट हो जाया करते थे। परन्तु अब उन्हें 'रावण' को पढ़कर कवि के तथ्य-निरूपण पर भी विचार करना पड़ेगा और उसके औचित्य अथवा अनौचित्य की ओर भी उनका ध्यान जायगा।

प्रस्तुतः महाकाव्य को कवि ने १७ सर्गों में विभक्त किया है। यद्यपि कथा वाल्मीकि रामायण से ही ली गई है, तथापि कवि ने अपनी प्रखर प्रतिभा से उसे कई अंशों में विभक्त करके उसमें एक विशेष चमत्कार एवं सौन्दर्य डाल दिया है। छन्दों का चयन भी कवि ने रसानुकूल किया है। भाषा विशुद्ध ब्रजभाषा है, जो भावों का बराबर साथ देती जाती है। गुण एवं वृत्ति का भी सामञ्जस्य नितान्त मनोरम है। रचना हृदय-ग्राहिणी है। सब मिलाकर 'रावण' एक सुन्दर महाकाव्य है।

'रावण महाकाव्य' के पढ़ने से विदित होता है कि कवि ने संस्कृत-साहित्य का विशेष रूप से अध्ययन किया है और उसके प्रचलित भावों को पूर्ण रूप से आत्मसात् भी किया है। तभी तो उनकी अभिव्यक्ति इतने सुन्दर ढग से हुई है; और जिससे प्रस्तुत महाकाव्य का सौन्दर्य और भी बढ़ गया है। अपने पूर्ववर्ती महाकवि के भावों का आदर करना साहित्यिक-तस्करता नहीं है। यह तो वास्तव में भाव परिष्करण है।

कवि अपने युग का प्रतिनिधि होता है और अपने जीवन-काल की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का उल्लेख अपने काव्य में अवश्य करता है। इन्हीं के आधार पर आगे चलकर साहित्य एवं इतिहास के विद्यार्थी अपना पथ प्रशस्त करते हैं।

फलतः इस काव्य में सन् १६०५ और १६४२ की क्रान्ति में जो जो दृश्य कवि ने देखे हैं उन्हीं के आधार पर मुनियों और राक्षसों के संघर्ष का चित्र अंकित किया गया है। श्रीमती सरोजिनी नायडू को संयुक्त प्रान्त के गवर्नर पद पर समासीन देखकर ही कवि ने सूर्पणखा को जन-स्थान का गवर्नर बनाया है। मुनियों के विद्रोह का दमन भी कवि ने सत्याग्रह के दमन के सदृश कराया है। विभीषण का भाषण भी अत्यन्त कूटनीति-गर्भित है।

कथा की गति कहीं तो बहुत मन्द और कहीं बहुत क्षिप्र है। इसका कारण यह है कि जहाँ तक रावण के उत्कर्ष-निदर्शन का सम्बन्ध है वहाँ तक कथा की गति अत्यन्त मंद है परन्तु जहाँ अन्य प्रसंग आ गए हैं वहाँ कवि क्षिप्र गति से चला है, वर्णन नितान्त संक्षिप्त कर दिया गया है। इसका कारण यह है कि उसका नायक रावण है। उसी का वर्णन कवि ने विस्तार पूर्वक करना अपना कर्तव्य समझा है।

'रावण' काव्य का उत्तरार्ध विभीषण के अपकर्ष-प्रदर्शन के लिए ही लिखा गया प्रतीत होता है और अन्त के १५, १६, १७ सर्ग केवल इसी लक्ष्य से लिखे गए हैं। यह कवि की कल्पना की प्रसूति है और जिस लक्ष्य को सामने रखकर कवि ने इस प्रसंग की अवतारणा की है उसके लिए यह सर्वथा उचित भी है। भले ही पौराणिक इसका समर्थन न करें।

कवि अपनी रचना का आधार-स्तम्भ यद्यपि पौराणिक आख्यायिका को ही मानता है परन्तु यह सर्वथा उसी के पदांकों का अनुसरण नहीं करता, प्रत्युत अपनी प्रखर प्रतिभा के बल से उसमें लोकोत्तर सौन्दर्य बढ़ाता हुआ चलता है। तब जाकर वह उसे काव्य का रूप देने में समर्थ होता है। ऐसी दशा में वह अपने मूलाधार से कभी-कभी अलग हो जाता है, और यह परिवर्तन स्वाभाविक भी है। 'रावण' में भी यही बात दिखलाई पड़ती है।

गोस्वामी तुलसीदास का जो नायक है वही हमारे कवि का प्रतिनायक है। जिस प्रकार श्री गोस्वामी जी ने अपने नायक का उत्कर्ष दिखलाने के लिए प्रतिनायक का जी तोड़कर अपकर्ष दिखलाया है और धार्मिकता के नाते उन्हें अन्य लेखकों का इतना समर्थन मिल गया है कि उसके विरोध में कोई बात कहना कठिन है। हमारे कवि ने अपने नायक का उत्कर्ष तो अवश्य दिखलाया है (जिसका वह सर्वथा अधिकारी था) परन्तु प्रतिनायक का अपकर्ष दिखलाने की दुश्चेष्टा करके विवेक की हत्या कभी नहीं की है।

अन्त में हम 'रावण महाकाव्य' का स्वागत करते हैं और कवि को ऐसी सुन्दर रचना प्रस्तुत करने पर बधाई देते हैं, और साथ ही आशीर्वाद देते हैं कि साहित्यानुरागी उसकी रचना को स्नेहार्द्र दृष्टि से देखें। विभीषण की निन्दा कुछ विशेष हो गई है, जिससे मत-भेद सम्भव है।

लखनऊ
वसन्त-पंचमी
सं० २००५

शुकदेवबिहारी मिश्र,
(रायबहादुर, साहित्य वाचस्पति,
मिश्र बन्धुओं में से एक।)

लै बालमीकि मुनिसौं सुकथा रसीली,
औ' दै सुधापुट मनोहर कल्पना का।
स्वान्तः सुखाय हरिनाथ निशाचरों का,
काव्य प्रबन्ध अति मंजुल है बनाता ॥

मंगलाचरन

घनाक्षरी

(१)

धारत दसन एक विघन विनासन कौं,
दासन कृपा की कोर हेरते रहत हैं।
त्योंही अघओघ पाप पटल विधंसिवे कौं,
सुण्डा दण्ड चारां ओर फेरते रहत हैं॥
सुघर दसांग कविता की रचना मैं मंजु,
सुमति कवीसन की प्रेरत रहत हैं।
वेई जस भाजन बनत जगती तल मैं,
संभु-सुत-सेवा माहि जे रतै रहत हैं॥

(२)

बन्दनीय भारत के मध्य कटि भाग माँहि,
राजै विंध्य भूधर की अटवी सुहाई है।
पूरबी औ' पच्छिमी सुघाटनि लौं फैली फाबि,
सुपमा न जाकी सारदा पै जाति गाई है॥
मानौ मध्य-देस कौ विभूषन यहै है चारु,
कैधौं मंजु मेखला मही कौ पहराई है।
कैधौं चतुरानन चतुर नै समेटि राखी,
या मैं देव-कानन की निखिल निकाई है॥

(३)

मद माते कुरिल कुररि मिरचानि डारैं,
त्यौं ही करि-कलभ तमाल मसल्यौ करैं।
सुण्डा दण्ड घातनि सौं किसलै रवांस डारैं,
जासौं सुखदैनी तीखी गंध वगर्‌यौ करैं॥
छाके मद आंसौमाला-यार-वर बालनि कै,
अरुन कपोलनि की समता कर्‌यौ करैं।
ऐसे पत्र जालनि सौं छादित जहाँ की भूमि,
जन-मन-मानस मैं आनंद भर्‌यो करैं॥

(४)

लाग्यो तहाँ केतक विटप बन मध्य हुतौ,
मानो यह क्रूरता कौ अपर निकेत है।
त्यौंही निज कंटक-विषम-मैन बाननि कौं,
कामिन कै हीतल चुभाये मनौंदत हैं॥
ह्वै है हाय कौन धौं सहारौ विरही जन कौ,
जब अवलंब बनि जात मीचु हेत है।
अन्त माँहि तीखो कंटकावली मनुष्यन कौ,
बहु दुख देत अरु प्रान हरि लेत है॥

(५)

कंटक-समूह सूचिका की नोक लैकै काम,
दुर्जस को सीवत पटम्बर सुरूरौ है।
त्यौंही किते कामी और कामिनि तियानि हू कौ,
धीरज-विटप सोई ढाहत समूरौ है॥
निज पात-पुञ्जनि कौ तीखन बनाय आरौ,
गहत जवै ही धारि गहब गरूरौ है।
चीरै हिय-काठ को वियोग-ताई-बालनि के,
रहन न याकौ काम पावत अधूरौ है॥

(६)

फूलनि के मंजुल मरासन गहन ही ते,
नित ही मधुर मधु जो पै रिसियावै है।
पुहुप-पराग लैकै मैन-धनुधारी तब,
गीले निज हाथनि मैं सपदि लगावै है॥
या विधि बनाय लच्छ कामिनी-करेजनि कौं,
आपने अमोघ बान तिन पै चलावै है।
चंचल अतीव तौंहू सुमन-नराचनि सौं,
कामी-मन मीनौ कौं हूँ बचन न पावै है।

(७)

नत फल-भारनि सौं दाड़िम-द्रुमाली तहाँ,
कानन-प्रदेस माँहि परत लखाई है।
फूलि फबि फैलै यह पादप विसद वेस,
याही लागि ताकै तरे धूप दई जाई है॥

मालावार-वालनि के उन्नत उरोजनि की,
मानौ समता कौ पाइबे की ठहराई है।
धूम्र-पान-व्याज सौं तपत तप केते घट,
आपनौ अवनि और आनन नवाई है॥

(८)

ताही ढिग सोहत पलास कौ प्रसून लाल,
दीसत वियोगिनी यकृत सम कारौ है।
अर्द्ध-चन्द्र-विसिख-समान ही लखात जोई,
कामिनी करेजनि किरच करि डारौ है॥
खायो भरि पेट मांस केतै कृस पंछिन कौ,
याही ते पलास निज नाम इन धारौ है।
होत है कठोर अति जानि मन माँहि या ते,
यह पल खण्ड नाहिं खाइबौ विचारौ है॥

(९)

चंपक कौ पादप मनोरम लग्यौ है जहाँ,
विकच कलीन को कदम्ब बगरयौ परै।
त्यौं ही मधु लोभी मंजु गुञ्जिकै मलिन्द वृन्द,
भाँवरी चहूँधा तिन ऊपर भरयौ करै॥
पंछिन पतंगनि के नासिबे कै पातक कौ,
मानौ भ्रमरावली के व्याज ही धरयौ करै।
कैधौं सँवरारि-बलि दीपिका धरी है केती,
ऐसौं भ्रम लोगनि को हिय कै परयौ करै॥

(१०)

नित ही करत बास पुहुप सुकोसनि में,
कहि मकरन्द जाहि सब जग जान्यौ है।
मैन ताप ताई किती कामी अरु कामिनी कौ,
अंध करिवै की मति निज हिय ठान्यौ है॥
लागि गई सम्भु के सरीर की भसम यामैं,
विषम नराच जबै कोपि काम तान्यौ है।
कहत पराग हैं वृथा ही लोग ताकौ सबै,
मेरो मन याकौ सो विभूति अनुमान्यौ है॥

(११)

निज नाम ही के अनुरूप जो धारत गुन,
पादप असोक कौ सो परत लखाई है।
हिय मैं करत सोच निज प्रान प्यारिन कौ,
जाके ढिग आवत पथिक समुदाई है॥
त्यौं ही तासु बिकच अरुन कलिकानि मंजु,
ढाकि निज पातनि सौं लेत जो छिपाई है।
मैन धनुधारी कौ सुज्वालामयी कांतिन सौं,
हिय में हरपि जिन कीन्ही समताई है॥

(१२)

कीचक कदम्बनि की कलित कुटीरनि मैं,
कौसिक-कलाप कूँकि घोर घुघुवायौ करै।
जाकौ रव कान करि बलि-भुज-जूह जहाँ,
खाय भय धाय न कतौहूँ मंडरायौ करै॥
चहुँ दिसि कूजत कलापी मंजु रोर करि,
जाको सुनि सोर व्याल दरप भुलायौ करै।
चन्दन के परम पुराने तरु खोहनि मैं,
अति घबराय धाय कुण्डली लगायो करै॥

(१३)

ताही अटवी में साधु-हिय के समान स्वच्छ,
परम उदार मंजु सर सुखदाई है।
मानौ प्रलैकाल में दिसानि बन्ध टूटिबै तें,
पूरौ नभ मण्डल मही पै गिरयौ आई है॥
मंदर-सघट्टन की खाय चोट मंथन में,
छीर कौ पयौनिधि दुरयौ धौं इतै आई है।
कैधौं रत्न-रासि कौ छिपाये निज हीतल में,
सिन्धु ही सौं होड़ करिबे की हिय ठाई है॥

(१४)

ताही सरवर की विमल तट भूमि भेदि,
धवल मृनालनि के जाल कढ़ि आये हैं।
सुर-गज केते अवगाहैं मनो सागर में,
अच्छ तिनहीं के स्वच्छ दन्त धौं सुहाये हैं॥

उरग-अनन्त की विपुल-स्वेत-पुच्छ फैली,
कैधौं विष्णु-नाभि-कौलनाल छवि छाये हैं।
पचि-पचि हारी मति कैतिक कवीसिन की,
समता यथोचित बिचारी पै न पाये हैं॥

(१५)

बिकसे बनज-बन बगरि बहार वारे,
संख-सम-स्वेत नीर पर कढ़ि आये हैं।
त्यौं ही मधु-लोभी वृन्द-विपुल-मलिन्दनि कै,
पंक-जात-सीसनि समुद मँडराये हैं॥
याही लागि धौले अरबिंदन के कोप सबै,
धारे स्यामता कौ इमि लसत सुहाये हैं।
मानो चन्द्रबिम्ब बहु सोहत सरोवर मैं,
अंक मैं कलंक अंक सुघर लगाये हैं॥

(१६)

सरसिज स्वेत केते राजत सरोवर मैं,
इन्दीवर जालनि की दीपे स्यामताई है।
मानौ सुधा और कालकूट की सुदीपति लै,
एकै साथ सागर नै दीन्हीं प्रगटाई है॥
त्यौं हीं गन्ध-ग्राह-जात-चंचल-तरंग-माल,
देति यौं सिवारनि-समूह कौ हिलाई है।
मानौ सिन्धुगत बडवानल की ज्वालन सौं,
आवत कढ़्यौई धूम-धाम अधिकाई है॥

(१७)

उदधि समान वाही सर के निकट लाग्यौ,
सेमर विटप एक परत लखाई है।
वाके बारि-धारन के प्रखर प्रवाहनि मैं,
तरु-प्रतिबिम्ब यौं परत जल आई है॥
मानौ मयनाक-महीधर-सरनागत कौ,
सागर नैं लीन्ह्यौ निज हीतल छिपाई है।
अजहूँ सुराधिप के कुलिस-प्रहारनि सौं,
मानौ भय मानि रह्यौ पंखनि हिलाई है॥

(१८)

सरवर घेरि लागे विटप बरूथ बहु,
छाया करि ताकौ गात घाम सौं बचावैं हैं।
छेदि छाल तिनकी प्रहारनि सौं चौंचन के,
कीरन कौ खात खग देखन मैं आवैं हैं॥
जब करि—कलभ घासि निज कुंभनि कौ,
डारनि कौ वाकी निज सुण्ड सौं हिलावैं हैं।
मंजुल सुमन बरसायकैं द्रुमाली मानौ,
दै दै उपहार कल-कीरति कौ गावैं हैं॥

(१९)

अदित मरीचिन सौं कंटकनि जालनि के,
व्याज ही सौं गात-पुलकावती जु बाढ़ी है।
त्यौं ही निज कान्त अरु कोमल कलेवर सौं,
सौरभ की रासि जिन दीन्हीं बहु काढ़ी है॥
सुन्दर सरोजनि की सुखमा सकेलि मानो,
वाही के सरीर मैं बिरंचि धरी गाढ़ी है।
द्यौस माहि सोई सर-जात-नलनी ही तहाँ,
मानौ रम्य-रूप देव-दारा बनी ठाढ़ी है॥

(२०)

वही विंध्य-भूधर के कानन-प्रदेस माँहि,
घूमत-भ्रमत सर-कूल चलि आए हैं।
राकस सुमाली, केतुमती, औ प्रहस्त वीर,
कैकसी-सुता को निज संगहि लिवाए हैं॥
मानौ नव-नीरद पियौ है वारि सागर कौ,
याही लगि दोऊ नील वपुष सुहाए हैं।
इन्दिरा अबै धौं कढ़ि आई है जलधि त्यागि,
लखि दुहिता कौ यौं बिचार हिय भाए हैं॥

(२१)

सीतल सुगन्ध गन्ध-वाह त्यौं बहन लाग्यौ,
मानौ पंथ-स्रम कौ उड़ाय संग लै गयौ।
पाँयन पखारि मुख धोय पय पान करि,
सर-सुषमा सौं मन आनँद सम्वै गयौ॥

विहरत देखि तहाँ किन्नर-मिथुन केते,
आयौ केतुमती के विचार हिय मैं नयौ।
जौ पै दारिका के अनुरूप नहीं पायो वर,
वैभव बिसाल तौ बृथा ही विधि नै दयौ॥

(२२)

जन्म ही ते देत लघुता है गुरु लोगनि कौं,
सोक जननी के हिये पारतै रहत है।
सरवस दीन्हेहू पै मानत मनाए नाहिं,
जमलौं जमाई रीति धारतै रहत है॥
दान सनमान मैं जो नैकौ कहूँ होति भूलि,
सनि लौं बराती दीठि डारतै रहत है।
उमड़त दुख-जल-रासि है बिदा के समै,
दारिका पिता कौ हियौ दारतै रहत है॥

(२३)

तबही प्रहस्त राजमाता सौं कहन लाग्यौ,
"सुनिये विचार जो हमारे मना भावै है।
गन्धरव, किन्नर, विद्याधर, उरग माँहि,
साहस न काहू के हिये मैं इतो आवै है॥
मानि कै अतंक श्री सुकेस लंकनाथ जी कौ,
प्रखर प्रताप जाकौ अनलै लजावै है।
त्यौं ही अंसुमाली लौं सुमाली महाराजै मानि,
कोऊ ब्याहिबे की नहीं चरचा चलावै है॥

(२४)

नारद से सोहत सपूत चतुरानन के,
कोऊ इनकौ तौ तिन तूल गनिहै नहीं।
त्यौंही सम्भु-सूनु दोऊ हैं ही ब्याह योग याके,
अजुगुत बात ऐसो जग मनिहै नहीं॥
हारे हैं सुरासुर-समूह हम लोगनि सौं,
यातें समताई तिन-संग ठनिहै नहीं।
गौरव सुकेस को बनाए राखिवे के काज,
सौति-सिन्धुजा की कैकसी तौ बनिहै नहीं॥

(२५)

हैं ही राज-वंसिन के वंस-अवतंस हम,
सर्वथा स्वयंवर प्रथा हू अनुकूल है।
सास्त्र-अनुसार जो पै व्याह यह कीन्हौ जाय,
आपहू विचारैं यामैं रंचक न भूल है॥
यातैं कैकसी ही जाय जाँचै विश्रवा कौ कर,
यह प्रस्ताव सब मंगल कौ मूल है।
जोरिबौ सगाई जग मानव-महीपति सौं,
मेरो जान सो तौ कुल गौरौ प्रतिकूल है॥"

(२६)

सुनि कै प्रहस्त की बचन-रचना कौ इमि,
भाख्यौ यों सुमाली केतुमतिहिं सुनाय कै।
"कैसे हूँ न टारिहै तुम्हारो अनुरोध यह,
साधौं काज तुम कैकसी को समुझाय कै॥
बीतत विवाह की वयस दुहिता की देखि,
पावक जरावै मेरौ हिय धधकाय कै।
ह्वै गयौ हमारो है विचार अब याही दृढ़,
विस्रवा मुनीसहिं मनावै यह जाय कै॥

(२७)

विधि ही बबा हैं अरु दादी बाग-देवता हैं,
तपनिधि-पावन-पुलस्त-पिता जाके हैं।
सस्वर पढ़े हैं चारों वेद उपवेदनि को,
तप तपिवे मैं सविता न सम ताके हैं॥
ध्यावत समाधि साधि पुरुष पुरातन कौ,
रहत सदा ही ब्रह्मआनन्द में छाके हैं।
जौ पै केकसी को विस्रवा ही मिलि जाय नाह,
मेरी जान भाग ही उदित भये वाके हैं॥"

(२८)

लगी भानु किरन तिरीछी पुहुमी पै पर,
तपत-तपाकर-तपनि मंद ह्वै गई।
भूमि-रुह-सिखिर-विहारिनि-पतंग-प्रभा,
धारि विंध्य कूट पै चरन डग द्वै गई॥

तौ लौं भासमान भानु ही लौं वायुयान दीस्यौ,
अचरज माहि सब ही की मति भ्वै गई।
नभ निकपा पै हेम रेख खींचि दीन्हीं मानौ,
कैधौं मेघ मण्डल में दामिनी सम्वै गई॥

(२९)

चख चखचौंधी है विमान की प्रभा कौं देखि,
अचरज ही सौं मुख बैन नहीं आए हैं।
धीर धारि केतुमती पीतम कौ पानि गहि,
करि मनुहारि इमि बचन सुनाए हैं॥
"कौन ये महानुभाव, कौन के तनै है अरु,
जात है कहाँ को औ कहाँ ते इतै आए हैं?
वेगिहि कुतूहल निवारिये हमारौ नाथ,
औरै भाव इनकौ बिलोकि हिय छाए है॥"

(३०)

"दैव-अंस-सम्भव-मुनीस-विस्रवा के सुत,
इनकौ धवल-जस भूतल में ख्यात है।
त्यौं ही सुर-राज-राज-कोष-अधिकारी यही,
धनद-भुवाल याही लागि कहे जात है॥
करत निवास हैं हमारे गढ़-लंक माँहि,
हम भटकैं हैं भाग्य ही की यह बात है।
आवत पिता के पद पूजन नितै हो इतै,
पुहुप - विमान पै यहाँ ते चले जात हैं॥"

(३१)

'विस्रवा मुनीस के तनै है' यौं पिता सौं सुनि,
कैकसी के मुख पै अनूप छटा छाई है।
तौहूँ गुरु लोगनि को कानि मन माँहि मानि,
राख्यो अभिलाष बन्ध सकल दुराई है॥
लाज औ मनोज कै हवाले इमि बाल परि,
मुख सौं यदपि कछु कहत न पाई है।
तौलौं मृगनैनीं के सरीर की गठनि भेदि,
रोमावली व्याज सों मनहु कढ़ि आई है॥

(३२)

ओप कैकसी के मुख चन्द की अमन्द लखि,
हीतल के तासु अभिलाष लियो जानी है।
त्यौं ही निज सुवन प्रहस्त राज नन्दन की,
लीन्हौ गुनि सकल हिये मैं बर बानी है॥
ताहू पै सुमाली कौ प्रबल अनुरोध देखि,
दारिका के नेहकौ सुमिरि अकुलानी है।
अरु देस-काल औ परिस्थिति बिचारि कछु,
लागी तब कहन सुता सौं इमि रानी है॥

(३३)

"कैकसी पियारी! अनुरोध कौ हमारे मानि,
आजु ही मुनीस विस्रवा के पद लागौ जाय।
अरु तिनही को निज नाह हिय माँहि मानि,
मन-बच-काय सौं चरन अनुरागौ जाय॥
सब विधि सेवा सौं सँतोपि मुनि-पुङ्गव कौ,
धनपति सरिस प्रतापी सुत माँगौ जाय।
जासौं गत-गौरव बहोरि अपनावो निज,
जो पै भाग्य-दोष सौ बिहाय हमै भागौ जाय॥

(३४)

मंगल—भवन—अभिमत—फलदानी सम्भु,
दच्छ-सुता रावरौ निरन्तर भलौ करैं।
दुरत-दुरंतनि पै तानि निज ब्रह्म दंड,
विधन-विधथ हंस वाहन दलौ करैं॥
या खन तुम्हारी रखवारी हित पंच बान,
साजि धनु-बान तुव साथ ही चलौ करैं।
अरु सब भाँति विस्रवा कौ रोप थामे रहैं,
जासौं मुनिवर के न त्यौर बदलौ करैं॥

(३५)

अब तुम जाहु नैकु गहरु न लावो इतै,
दिन-मनिहू तो अस्ताचल-दिसि जात है।
निज निज नीडनि विहंगम उड़ान लागे,
आवति निसा है संध्या काल नियरात है॥

देखौ बाम-लोचन तुम्हारो फड़कन लाग्यौ,
होयगी सकल चीती चीती भई बात है।
पूजि है तुम्हारी मनोकामना अवसि यातै,
आनँद हमारे नहीं हीतल समात है॥

(३६)

बाढ़ती सरोज-आभा पंक औ सिवारनि सों,
कलित-कलंक-अंक चन्द्र छवि छावै है।
सान पै चढ़ाय गात विधि ने सँवारे जासु,
भूषन कहाँ ते सोभा तिनकी बढ़ावै है॥
मंजु-मृग-मद-आँड़ भाल पै लगाए देत,
जाते मुनि-वक्र-दीठि लगन न पावै है।
याहू ते अधिक चन्द्रिका कौ गुन गावै कहा,
कैर सों परसि अम्बु रासि उमगावै है॥

(३७)

कैकसी के चलत गुलाब गुललाला औ,
प्रवालनि बधूकनि की सुषमा सकानी है।
त्यों ही कोकनद, इन्दीवर, अरविन्द वृन्द,
चम्पक, गुलाब की प्रभा हू सकुचानी है॥
उड़न मराल लागे गज अकुलान लागे,
केहरी गुफानि में लुकाइवे की ठानी है।
दाड़िम औ श्री फल करिन्दनि के कुम्भ, घट,
वाकी छवि सामुहे भरत मानौ पानी है॥

(३८)

भाग्यौ चन्द व्योम घन माँहि दुरिवे के काज,
खंजन उड़ाने मीन नीर मैं लुकाने हैं।
त्यों ही मृग-सावक दुरत फिरैं कानन मैं,
कीर हूँ अकास मैं उड़त बिललाने हैं॥
किसलय-कोमल सकल कुँभिलान लागे,
विद्रुम लजाने, बिम्ब डारनि सुखाने हैं।
तोरै लगे सक्र चाप, फेंक्यो है वरुन पास,
कोकिला उड़ी है औ मयूर अकुलाने हैं॥

(३६)

सहजहि लालिमा निहारि जासु एड़िन की,
हारि मानि, हीतल सरोज सकुचायो है
त्यों ही सुकुमारता की छाँह हू तिया के पानि,
पंकज की पल्लव छुवन में लजायौ है।
कैकसी कौ आनन चतुर चतुरानन नै,
सान पै चढ़ाय यहि भाँति सौ बनायौ है
पूनो को निसा कौ पूरौ मंजुल मयंक मानौ,
जाकौ लघु चाकर बनन नहिं पायो है॥

(४०)

ढरकत जात सो जुन्हाई की धवल धार,
पग धरतै हो धरती हूँ सकुचात जात।
विवरन होत गात विपिन-बयारि लागे,
जैसे हिम पात सौं सुखात जलजात जात॥
कच, कुच, प्रथुल नितम्बनि के भारनि सौं,
द्वैक ही धरे तैं डग लंक बल खात जात।
स्रम-कन जालनि समोय स्वेत सारी गई,
सिथिल सरीर भयौ गात अरसात जात॥

(४१)

पच्छिम दिसा में साँझ होत ही तरनि-बिम्ब.
अस्ताचल ओर उतै ढरत दिखात है।
पूरब-दिसा सौं त्यौं ही पूरन मयंक इत,
विहँसत व्योम पंथ चढ़त लखात है॥
ऐसे समय विंध्य मही-धर कौ विसद स्रृङ्ग,
सोभा यहि भाँति सौ धरत सरसात है।
मानौ देवराज कौ प्रमत्त गजराज आजु,
घंटा युग बाँधिकै चलत दरसात है॥

(४२)

विकसन लागी कुमुदावली मुदित मन,
कमल-कलाप त्यों ही सकुचन लाग्यौ है।
लाग्यौ कढ़ै मान अब मानिनी करेजनि तें,
पाहन-तियाहू के हिया मै मैन जाग्यौ है॥

लागीं दिसा धारन धवल परिधान दिव्य,
हिय हहराय कै निसा कौ तम भाग्यौ है।
उछरन लाग्यौ सिन्धु बिहँसन लाग्यौ व्योम,
चन्द्र कौ धवल बिम्ब निकसन लाग्यौ है॥

(४३)

उरज दरीचिन मैं मानवता बामनि के,
अजहूँ रह्यौ है पग बाहर न डारै है।
उदय मयंक भयो मान निकस्यौ पै नहीं,
यहितें अपार कोप निज मन धारै है॥
कोकनद छद सम आनन अरुन कीन्हे,
कम्पित कलेवर कृसानु धौं बगारै है।
कोष सौं सरोजनि के अलिअवली के व्याज,
कठिन कृपान निसि नायक निकारै है॥

(४४)

सान सौं कढ़त बिम्ब आवें नभ मण्डल में,
कछु अरुनाई कौ हिये मैं निज धारै है।
कहत कलाधर न भावै याहि मेरौ मन,
यह विष-वींधीं कर-निकर पसारैं है॥
निसि मैं सुन्यौ है नहीं उदै दिन नायक कौ,
सब उपमानि हेरि मेरो हिय हारै है।
सहि नहि जात अब ताप ज्वाल जालनि की,
याते सिन्धु बाड़व को बाहर निकारै है॥

(४५)

मालती प्रसूननि कौ कन्दुक लसत कैधौं,
जाकौ सक्र भामिनी ने सूँघि के पँवारयौ है।
कैधौं व्योम गंगा कौ सरोज बिकस्यौ है मंजु,
कैकसी नै मुख प्रतिबिम्ब नभ डारयौ है॥
रुद्र नैन ज्वाल मै जरत रतिनाथै देखि,
आनन सुधा सौं सन्यौ खैंचिके निकारयौ है।
मानिनी तियानि कैधौं मान मथिवे कं काज,
बिधि निज हाथनि सौ ससिहि सँवारयौ है॥

(४६)

स्वेत रंग सारी अंग रंग मिल गई ऐसी,
भेद जामै रंचइ न परत लखाई है।
तापै धौल धार वा सुधा की बरसावै चन्द,
बगरीं परत मानौ व्योम सौं जुन्हाई है॥
दमकत दिव्य आभा स्वच्छ चन्द्र हारनि की,
निकसी परत सबै गात सौं गुराई है।
तौ हू कौल-बास सौं तिया है पहिचानी जाति,
अन्तर अपर नहीं परत दिखाई है॥

(४७)

तौं लौं स्रौन-पुट मैं सुधा की निदरन वारी,
मंजुल विपंची धुनि आयकै परै लगी।
कोकिला की कूकसी गवैया की मधुर तान,
जन-मन-मानस मैं आनँद भरै लगी॥
केतुमती कन्यका तहाँ पै राग वस ह्वै कै,
बिनु ही बुलाए पग वा मग धरै लगी।
देवरिषि नारद की मोहनो अलापनि पै,
तन मन बावरी निछावरि करै लगी॥

(४८)

बैठि गई देवहि प्रनाम कै तहाँ ही जाय,
गायन सुनन साधु आवत जितै रहै।
ह्वै रहे अवाक सब वाकी रूप-रासि देखि,
बैन सुनिबै कौ समै बिवस बितै रहै॥
कैसे धौं बखानै ब्रह्म-सुत की दसा कौ कवि,
गावत रहे पै प्रान जानै धौं कितै रहै।
आपनौ उठायौ राग आप ही बिसारै लगे,
कैकसी कौ नारद ह्वै चकित चितै रहै॥

(४९)

गायन समापि बीन दीन्हौं तासु अंक धरि,
कीन्हौ अनुरोध आपहू तो नैकु गावौ तौ।
बैठी साधु-मंडली तुम्हारौ सुनिबै कौ गान,
आय कै सभा में सुधा-रस बरसावौ तौ॥

आगमन हेतु यहि बन माँहि ऐसे समै,
आपनौ सुमुखि अब हमकौ बतावौ तौ।
करि हैं सहाय प्रात रावरी अबसि हम,
ह्वै गई अबेर राति इत ही बितावौ तौ॥"

(५०)

बीन कौं उठाय कैकसी ने मंजु गान गाय,
स्वरलहरी कौ सबै स्रोतनि सुनायौ है।
मुनि गन रीझे बलिहार बार-बार करि,
गौने निज कुटिन प्रसाद तिन पायौ है॥
बाही पर्नसाला मैं निवास करिबे के काज,
बाहूकौ सुठाम मुनिवर ने बतायौ है।
आपने हियै मे अभिलाष लाख लाख भरे,
वाही थल बाल ने बिभावरी बितायौ है॥

(५१)

भयो प्रदीप मलीन छीन ससि की छबि लागी।
सारी स्वेत समेटि कहूँ निसि भामिनि भागी॥
बटु गन चले अन्हान निकट सर मैं सुखपाई।
मधुर वेद धुनि परी कान में कछुक सुनाई॥
बर-विपिन-समीरन-सीत वहि जबहि वाम तन मै लगी।
तब निंदियाहि निवारि कै सपदि कैकसी हूँ जगी॥

दूसरा सर्ग

सवैया

१

चंद्रिका सौं ससि रीतौ भयौ,
छनदा छन मैं अब चाहति चाली।
लागे विहंगम वृन्द उड़ान,
चहूँ दिसि कूजि उठी चटकाली॥
मन्द बहै लगी सीरी समीर,
औ व्योम पै छाय रही चहूँ लाली।
भाल मैं प्राची दिसा के मनौं,
धरि सिंदुर-बिन्दु दियौ उषा आली।

२

धारि सुमेरु के सीस पै पाँय,
चढ़्यौ हरि-मध्यम धाम लौं जाई।
कौल कलापनि कौ सकुचाय,
कुमोदिनि कौ कुल दीन्ह्यौ हँसाई।
ह्वै छबि छीन छपाकर सो,
नभ सौं गिरतै यह देत दिखाई।
ऊँचौ चढ़ै सो गिरै निहचै,
सोई मानहु साँची भई कहनाई।

३

औनत ऐसी दसा ससि की भई,
सोक चकोरन कौ तउ नाहीं
लोचन मूँदि कुंई ने लियौ
औ दिसा-मुख हू न प्रसन्न दिखाहीं।

अम्बर रोयौ महा दुख कै,
अँसुवा बरसे तिन-पल्लव माँहीं।
जानत प्रेम की पीर नहीं,
ते बृथा सबै ओस कहैं तिहि काँहीं॥

४

छाँड़ि उलूक अनन्द दियौ,
चकवा चकई के हिये मुद जाग्यो।
जामिनी भामिनी की तजि सेज,
विहारनि सौं थकि कै ससी भाग्यो॥
कोषनि माँहि सरोजनि के,
रहिबौ न मलिन्दनि नैं अनुराग्यो।
बान समूह दिवाकर के,
करके तम वारन पै परै लाग्यो॥

५

दीसै करेजी वियोगिनि की,
बिरहानल की मनौ आँच मैं ताची।
कै दिन-नायक-बालम कौ मुख,
देखि लजाय रही मनौ प्राची॥
ह्वै मदिरासव खाची मनौ कहूँ,
साँचहूँ आँगन नाची पिसाची।
पूरब में धौं सकारेहि तें कहूँ,
होरी मनौ बड़ी धूम सौं माँची॥

६

ता खन व्योम की लाली बिलोकि,
विभावरी तारावली लिये भागी।
त्यौंही चला-चली की धुनि कौं;
सुनि के तजि आसन कैकसी जागी॥
सौच-क्रिया सों निवृत्त भई,
लई सारी अन्हान चली अनुरागी।
आवत नारद कौ लखि कै,
अपनौ भलौ भाग सराहन लागो॥

(७)

"न्हान के काज जगावन हेतु,
तुम्हैं हम ऐसे समै इतै आये।
पै तेहि तै पहले तुमकौ,
हम तौ सबै भाँति तयार ही पाये॥
दीजिए त्यौं अपनौ परिचै,
कहौ कारन कौन तुम्हें इहाँ लाये।
साँच ही साँच बताओ हमैं,
अब रंचक भेद न राखौ दुराये॥"

(८)

"पूछत हौ जु पै साँची मुनीस!
कोऊ अब बात छिपाय न राखैं।
त्यौं गुरु लोगनि हूँ कौ अदेस,
तथा अपने जिय की सब भाखैं॥
लाज भरीं हैं कछू बतियाँ,
यहि कारन सामुहे होती न आँखैं।
आपुसे साधुन कौ अनुरोध,
सदा हम सीस पै माल सी राखैं॥

(६)

भूप सुकेस कौ मध्यम सुत,
सुमाली पिता है महाबल वारौ।
गन्धर्वी केतुमती की सुता,
औ हुतौ गढ़ लंक मैं राज हमारौ॥
सागर धोयौ करै जेहि के पग,
सीस पै जाहि त्रिकूट नै धारौ।
बाग तैं सम्भु कौ भाल मयंक,
भरचौ करै भौननि माँहि उज्यारौ॥

(१०)

ह्वै ही गये अब केतिक वर्ष,
नरायन सौं लरिकै पिता हारे।
त्यौं सुर-लोक सी लंक विहाय,
सबै लै पताल पुरी पगु धारे॥

बीतत बैस इती अवलोकि,
रहै नित ही जननी मन मारे।
पै अनमेल बिबाह के काज,
सलाह न देत अमात्य हमारे॥

११

ह्वै चुक्यो है निहचै यह ही,
हम जायकै विस्रवा के पद लागैं।
औ अपने मनहूँ-बच-काय-सौं,
सेवन ही मैं सदा अनुरागैं॥
यौं सब भाँति सौं दै कै सँतोष,
धनाधिप लौं तिनसौं सुत माँगैं।
जातीं हैं आस्रम पै तिनही,
मुनि के अब तौं परखैं निज भागैं॥

१२

बतरात हे जात चले मग मैं,
सुधि नारद कौ कछु आय गई।
सुनि कै इमि कैकसी की बतियाँ,
मुनि की मति यौं चकराय गई॥
गुन कौन धौं विस्रवा माँहि लख्यौ,
जेहि पै यहि भाँति लुभाय गई।
निहचै ही कुचक्रनि मैं परिकै,
यह बावरी बाल भुलाय गई॥

१३

बतियानि मैं लागे रहे तेहि की,
मन मैं कछु और विचारत ही रहे।
निज - पूरब - मोह - कथा सुधिकै,
हरि के भय सौं हिय हारत ही रहे॥
इमि राज-सुता-की लखे छबि कौ,
अपनौ तन औ मन वारत ही रहे।
सकुचात सकात लजात हू जात,
पै कैकसी ओर निहारत ही रहे॥

१४

"राज कुमारी ! हितू हमैं जानि कै,
सीख हमारी हिये निज धारौ।
त्यौं पुनि औचित कौ तेहि के,
अपने मन मैं धरि धीर विचारौ ॥
विस्रवै ब्याहन कौ जो कहै,
सोई है सब सौं बड़ौ सत्रु तुम्हारौ।
तो हित - मञ्जु - मृनालिका पै,
वह चाहत मानौं चलावन आरौ ॥

१५

कैकसी ! रावरी रीझि कौ देखि कै,
सोच बड़ौ हमरे हिय आवत।
जानती हौ निगमागम कौ मत,
कैसै बनै तुमकौ समुझावत ॥
तापस ह्वै बनवासी निरौ
करिहै किमि राज-सुता मन भावत।
सीस पै राखन जोग प्रसून कौ,
पाँय तौ कौऊ कैसे दबावत ?

१६

गुन कौन पै रीझि कै राज-सुता,
मन रावरौ है मुनि हाँथ बिकानौ ?
निज रूप औ जौबन-लावनिताहिं,
हुतासन-माँहि जरावन ठानौ ॥
यह मैन महीप कौ दीन्हौ नये,
उपहार को है ठुकराइबौ मानौ।
रुचि राखि है कैसे मुनीस मुठी,
भरि तन्दुल कौ जिहि के न ठिकानौ ?

१७

कन्दुक खेलन के स्रम सौं,
जो मृनाल सी मंजु भुजा थकि जात है।
त्यौं यह छीन - छला - सम - लंक,
भरे पग द्वै मग में बल खात है।

चम्पक-फूल सौं कोमल गात,
लगै बन-बात खरौ कुँभिलात है।
सो इतै आस्रम में रहिकै,
तप साधि हैं कैसे विचार की बात है?

१८

होय मतौ जु पै रावरौ तौ,
अब ही अमरावती कौ हम जावैं।
औ यहि की चरचा सिगरी,
सुरनाथ सभा मँह जाय चलावैं।
कै अनुरोध सुराधिप सौं,
तिनकौ यह पंकज पानि गहावैं।
विद्या - विभौ - कुल - रूप हूँ मैं,
अनुरूप तुम्हैं बर बेगि मिलावैं॥

१६

नृत्य विभेदनि देखौ नितै,
रस-तान-तरंगनि हूँकौ लियौ करौ।
मेलि गरे मृदु बेलि सी बाहन,
नन्दन हूँ मैं विहार कियौ करौ।
लै सुख मंजु-विनोद-मिलाप कौ,
आपनौ तौ अब सीरौ हियौ करौ।
मौ सिख आसिप सीस पै धारि,
सुहागनि ह्वै बहु बर्ष जियौ करो॥

२०

ह्वै बहु - बल्लभा - वल्लभ इन्द्र,
तुम्हारे जु पै मन में नहीं भावैं।
तो हम छीर के सिन्धु मैं जाय,
अबै हरि जू सौं प्रसंग चलावैं।
औ तुम्हरे हित साधन के हित,
सिन्धु-सुता कौ तहाँ समुझावैं।
रावरे ही के सबै अभिलाषनि,
राज सुता! हम आजु पुजावैं॥"

२१

"हैं हरि बैरी पिता के, सुरस हू,
संगर में तिन सौं लरि हारे।
या लगि ऐसे विवाह की बात,
विचार मैं नैकु न आवै हमारे॥
दीजिये त्यागि प्रसंग इतै,
मुनिराज! कहौं पग लागि तुम्हारे।
यौं अनुरोध-भरें-पितु मातु के,
बैन न कैसेहू जात हैं टारे॥

२२

न्हाय चलौ बलि होत बिलम्ब है,
अंजलि दीजै दिनेस कौ जाई।
हेरत ह्वै हैं सबै मुनि बाट कौ,
होम की बेला लखौं अब आई॥"
सेवत प्रात की पौन कौ जात,
सरोवर तौ लौं गयौ नियराई।
कैकसी कौ मुख-मंजुल देखि,
सरोजन आनन लीन्हौं नवाई॥

२३

न्हाय भई पट पैन्हि खड़ी,
कह्यौ नारद नै इमि बैन उचारी।
"रावरौ भक्ति कौ भाव बिचारि कै,
जानि लियौ हम राजकुमारी॥
आसिष देत यहै अब तौ,
सिगरी मन-कामना पूजै तुम्हारी।
सिद्धि लहौ निज कारज मैं,
हमहूँ जेहि कौ सुनि होंय सुखारी॥"

२४

नारद गौने उतै सुरलोक कौ,
कैकसी हूँ इतै आस्रम आई।
बैठि गई तँह आसन मारिकै,
प्रात क्रिया कौ सबै निपटाई॥

पावन पान कियौ चरनोदक,
औ फल मूल प्रसादहि पाई।
आसिष ले कै मुनीसनि कौ,
तब विस्रब्धा आस्रम बाल सिधाई ॥

२५

पार कियौ मग की सरि नाव पै,
मानि महा मुद राज-कुमारी।
केवट कौ त्यौं जराय-जरी,
मुंदरी अंगुरी सन दीन्ह्यौ उतारी ॥
देखि प्रभाव तपोवन कौ,
तेहि के हिये जाग्यो कुतूहल भारी।
भाव बढ़्यो पद सेइबे कौ,
औ विवाह विचारनि दीन्ह्यौ बिसारी ॥

२६

विसवास कै झुंड कुरंगनि के,
जहँ पै बिहरैं सबै संक बिहाय कै।
नहि जाती-मही है लखाति कहूँ,
कपिलानि के बृन्द चरैं चहूँ धाय कै ॥
चहकैं बहु जाति विहंगम-बृन्द,
पियौं जल थाल्हनि माँहि अघाय कै।
लगे होम-हुतासन-ज्वालनि सौं,
रहे पादप के किसलै कुमिलाय कै ॥

२७

गाय कौ दूध पियैं हरि-सावक,
बाघिनि चाटै बछाहिं अघाई।
त्यौं बनराज-सटा कौं कुरंग,
रह्यौ निज सींगनि सौं छितराई ॥
छाया मयूर करैं सिर साँप के,
सिंह रह्यौ करि-कुम्भ खुजाई।
आँधरे-तापस की गहि बाँह,
कुटी लगि बानर जात पठाई ॥

२८

पहारनि के झरनानि कौ सीतल,
वारि कननि के संग उड़ाय ।
हलायकै पादप पुञ्जनि कौ,
पुहुपानि की गंधि लिये सुखदाय ॥
सुमाली-सुता कौ सबै मग-खेद,
दियौ इमि सीतल -पौन भगाय ।
धरे मन लाखन लौं अभिलाप,
रही रवि आतप सौं दुख पाय ॥

२९

तापस कोऊ करै तप कौ,
महि सौं एक पाँव औ पानि उठाये ।
कोऊ पँचाग्नि तापि रह्यौ,
अपने चहूँ ओर कृसानु जराये ॥
कोऊ प्रचण्ड तपाकर की दिसि,
देखि रह्यौ निज दीठि लगाये ।
साधि समाधि कौ बैठौ कोऊ,
त्रिकुटी मँह ब्रह्म लखै सुख पाये ॥

३०

पूछत पूछत आस्रम कौ पथ,
अन्त में बाल तहाँ चलि आई ।
तापस सौं यह जानि लियौ,
'मुनि कालिह ही लान्हौ समाधि लगाई॥'
सामुहे बैठि गई महि पै,
औ लियौ तिमि आपनो चित्त दृढ़ाई ।
"चाहती हौ मुनि को तौ करो तप"
काहू कह्यौ मनौ कान में आई ॥

३१

कौन दियौ उपदेस हमैं इत,
सो मन माँहि विचारत ही रही ।
त्यों ही चकीसी ठगी सी मनौ,
अपने चहूँ ओर निहारत ही रही ॥

ब्रह्म ही मानौ कह्यौ यह बात,
यही मन मैं निरधारत ही रही।
"हे परब्रह्म ! सहाय करौ"
इमि आरत ह्वै कै पुकारतही रही॥

३२

खोजत खोजत राज कुमारी कौ,
आयो प्रहस्त तहाँ बन माहीं।
कैकसी कौ इमि जानि बिचार,
कह्यौ 'तप कष्ट सहे नहीं जाहीं'॥
कोमल कान्त कलेवर रावरौ,
तीखी बयारि लगे मुरझाहीं।
हार्यौ मनाय, पै राजसुता नैं,
सिखावनि बाकी सुनी कछु नाहीं॥

३३

लौटि प्रहस्त गयौ पितु पै,
तप के हित कैकसी कीन्ही तयारी।
अंग अभूषण सारी सुरंग,
रंगी तन सों निज डार्यौ उतारी॥
फूलन हूँ लौं महा मृदुगात पै,
वल्कल के परिधाननि धारी।
मंजुल तापसी वेस किये तहाँ,
राजी मनौ गिरिराज-कुमारी॥

३४

चन्द्र कौ दीन्ही प्रभा मुख की,
अरविन्दनि कौ तन कोमलताई।
मंजुलता निज नैननि की,
मृग खंजन मीननि दीन्हीं गहाई॥
मण्डलता त्यों कपोलनि की,
तहँ आरसी नें कछु ही कछु पाई।
ग्रीव की रंच मनोहरता,
बड़े भाग से कम्बु के हाथ में आई॥

३५

श्रीफल लीन्हौं उरोज विभा,
करि कुम्भनि सौ घट फोरत ही रहे।
बाहन पै त्यौं सनाल सरोज,
निछावरि ह्वै तिन तोरत ही रहे॥
लंक की छामता की छबि कौ,
बर तन्तु मृनाल के छोरत ही रहे।
जंघनि की कमनीयता कौ,
कदली करि मुण्ड निहोरत ही रहे॥

३६

कुंचित केस कलापनि सौं,
ललना मुख पैं जो रहो मधुराई।
जूट जटानि के धारिबे हूँ सौं,
रह्यौं पहले भी छटा छिटकाई॥
पंकज की कलिका जिमि नील,
लहीं भ्रमरावलि सौं सुघराई।
मंजु घने त्यौं सिबारनि संग,
लिये रहै सोई, मनोहरताई॥

३७

फेन सी मंजुल सेज पै सोवत,
कौहूँ प्रसून जु पै खसि आवत।
कोमल ताके कलेवर माँहि,
चुभै अरु पीर खरी उपजावत॥
सो महि-वेदिका पै अब पौढ़ि,
रही तकिया निज बाँह बनावत।
यौ नृप-सौध के आनन्द भूलि,
तिया तप मैं इमि ध्यान लगावत॥

३८

तापी पँचागिनि ग्रीपम मास,
सिलानि पै त्यौं बरपा में परी रही।
जाड़ेन की हिम रातिन माँहि,
गरे लौं सरोवर माँहि खरी रही॥

और तुषार गिरे ते जहाँ,
महि पै कहूँ घास न नेकु हरी रही।
साखिनि वाके महा तप की,
बिजुरी निज नैन निहारि दुरी रही॥

३९

खायौ नहीं फल मूलनि कौ,
अरु डार्‌यो नहीं मुख बूँदहू पानी।
पौन ही प्राननि कौ अवलम्ब,
रह्यौ, न तऊ तप सौं बिलगानो॥
साधना वाकी कठोर विलोकि,
अरुंधती रोहिनी जीय लजानी।
साधि समाधि कौ बैठि गई,
रही ब्रह्म की जोति हिये मैं समानी॥

४०

या बिधि सौं चलि वर्ष गये,
तब तौ निज नैन मुनीस नै खोले।
औ अंधरा-घर सम्पुट आछे,
कछू सिमटे औ हिले पुनि डोले॥
ध्यान निवारि उठाय कै बाँहनि,
मंजुल वेद-रिचा मुख बोले।
सामुहे कैकसी कौ अवलोकि,
कहे मुनि नै इमि बैन अमोले॥

४१

"किन्नरी है कि नरी है निरी,
अरु चारन यच्छ कि गंध्रव वारी।
दारिका नागन की, तौ पताल मैं,
या मुख सौं रहै फैलो उज्यारी॥
जो यह विद्याधरी कोऊ होय,
बनै नहीं क्यों वह जाति सुखारी?
सिद्धन वंस प्रसिद्ध भयो जग,
जो यह सिद्ध सुता सुकुमारी॥

४२

सक्र चरित्र सों कुण्ठित ह्वै,
तप साधती है धौं पुलोम कुमारी।
मैनका पै करि कोप अपार,
दियो धौं सुरेस सभा सों निकारी॥
गौतम साप सों पाहन गात,
अहिल्या किधौं इतै आई बिचारी।
कै सिव - लोचन - ज्वाल - दहे,
कुसुमायुध की बिरहा-कुल-नारी।"

४३

'है यह केतुमती की सुता',
करि ध्यान कौ जानि लियौ मुनि ज्ञानी।
औ तप साधन कौ सब हेतु,
तथा अभिलापनि कौ लियो जानी॥
ल्याय कमण्डलु सों सर से,
छिरक्यो तेहि पै अभिमंत्रित पानी।
औ हरुये हरुये तेहि सीस पै,
फेरैं मुनीस लगे निज पानी॥

४४

हेम सरोज सो कैरुसो गात पै,
फेरि सों आभा चढ़ी बहुतेरी।
नैननि मैं इमि जोति जगी,
सहसा सम्मुहे न सक्यौ कोऊ हेरी॥
तेज कढ्यौ मुख मंडल सों,
जेहि की भई भानु-मरीचिका चेरी।
या विधि मानौं सबै प्रभुताहिं,
बतावै लगे तप-साधना-केरी॥

४५

चेतना पाय कै पाँयनि पै परि,
बोली तिया भरि लोचन बारी
"दरसन ही सों कृतारथ ह्वै हौं,
भई फल चारिहूँ की अधिकारी॥

देन जौ चाहौ हमैं बरदान,
तौ दीजिये जो रुचि होय तुम्हारी।
जानत नाथ! सबै मन की,
अब पूरी करौ अभिलाष हमारी।"

४६

ब्रह्म के मानस-पुत्र के सूनु ह्वै,
मानस-पुत्र तुम्हैं हम दैहैं।
कौन कथा है धनाधिप की,
सुर-राज हू तौ जिनके पद छ्वै हैं॥
चेरे बने रहिहैं दिगपाल,
बबाहू नितै जिन्है वेद सुनैहैं।
छ्वैहैं दिगन्तनि लौं जस कौं,
अरु संगर में हरि सौं न सकेहैं॥

४७

पै अब साँझ की बेला भई,
हम हू बरदान न दीन्ह्यौ विचारी।
उग्र स्वभाव को ह्वै है बड़ो,
लहुरौ पुनि तासु कौ आयसु कारी।
ह्वै है तिहारौ इतो बली पौत्र,
हराइहै जो रन मैं असुरारी।
पाइहौ लंक कौ राज बहोरि,
बृथा नहीं ह्वै हैं असीस हमारी।

४८

भाषि कै यौं धुनी सौं लै बिभूति,
कह्यौ मुनि कैकसी सौं यहि खइयौ।
त्यौं प्रसौ-वेदना के बिन आपु,
तनै-त्रय एक सुता उपजइयौ।
पालि औ पोषि बढ़ाय तिन्है,
गृह जीवन कौ सगरौ सुख पइयौ।
औ तिन कै सम त्यागि तिन्है,
तप के हित अन्त इतै चलि अइयौ॥"

४६

"मानस पुत्र हमै तुम देत,
कहाइहैं दास सदा प्रभु केरे।
पै अब ऐसी करौ मुनिराज,
कलंक तौ आवन पावै न नेरे॥
मातु पिता औ सुकेस नरेस को,
पूरब पुन्य जगैं बहुतेरे।
ऐसी अपार दया जो भई,
निहिचै अब भाग उदै भये मेरे॥"

५०

न्हाय कै कैकसी आस्रम आई,
प्रहस्त हू ताही समै तहाँ आयो।
औ तेहि कौ परिचै मुनिराज सौं,
राज सुता ने समोद करायौ।
सोऊ पर्यो तिन के पग जाय कै,
आसिरवाद अमोघ यौं पायौ।
त्यौं अपने वर पाइवे कौ,
तेहि कैकसी नै सब हाल सुनायौ॥

५१

पाय मुनीस को आयसु जाय,
कुटीर मैं कैकसी सोवन लागी।
सापने मैं जननी सौं मिली,
अरु केतीं करीं बतियाँ अनुरागी॥
त्यों कुल कौ उदयौ रवि जानि,
प्रहस्त की राति कौ आंखि न लागी।
सस्वर वेद रिचा सुनि कै,
निंदिया तजि राजसुता तब जागी॥

५२

सर में अन्हाय अरु ध्याय परमेश्वर कौ,
परि मुनि पयनि विदाहू पुनि पायौ है।
करि कै प्रदच्छिना कृसानु कीऔ वेदिका की,
चित पै चढ़त चाव चौगुनो सुहायौ है॥

कीन्हौं स्वस्ति पाठ अरु आसिष अमोघ दीन्हौ,
    कैकसी कौ भवन मुनीस नैं पठायौ है।
त्यौं ही राजनन्दिनी कौ लीन्हे निज साथ ही मैं,
    मुदित प्रहस्त रसातल चलि आयौ है॥

४६

"मानस पुत्र हमैं तुम देत,
कहाइहैं दास सदा प्रभु केरे।
पै अब ऐसी करौ मुनिराज,
कलंक तौ आवन पावै न नेरे॥
मातु पिता औ सुकेस नरेस को,
पूरब पुन्य जगैं बहुतेरे।
ऐसी अपार दया जो भई,
निहिचै अब भाग उदै भये मेरे॥"

५०

न्हाय कै कैकसी आस्रम आई,
प्रहस्त हू ताही समै तहाँ आयो।
औ तेहि कौ परिचै मुनिराज सौं,
राज सुता ने समोद करायौ।
सोऊ पर्यो तिन के पग जाय कै,
आसिरवाद अमोघ यौं पायौ।
त्यौं अपने बर पाइबै कौ,
तेहि कैकसी नै सब हाल सुनायौ॥

५१

पाय मुनीस को आयसु जाय,
कुटीर मैं कैकसी सोवन लागी।
सापने मैं जननी सौं मिली,
अरु केतीं करीं बतियाँ अनुरागी॥
त्यौं कुल कौ उदयौ रवि जानि,
प्रहस्त की राति कौ आंखि न लागी।
सस्वर वेद रिचा सुनि कै,
निंदिया तजि राजसुता तब जागी॥

५२

सर में अन्हाय अरु ध्याय परमेश्वर कों,
पांर मुनि पयनि विदाहू पुनि पायौ है।
करि कै प्रदच्छिना कृसानु कीऔ वेदिका की,
चित पै चढ़त चाव चौगुनी सुहायौ है॥

कीन्हौ स्वस्ति पाठ अरु आसिप अमोघ दीन्हौ,
कैकसी कौ भवन मुनीस नैं पठायौ है।
त्यौं ही राजनन्दिनी कौ लीन्हे निज साथ ही मैं,
मुदित प्रहस्त रसातल चलि आयौ है॥

तीसरा सर्ग

रोला छन्द

१

रह्यौ दिवस युग याम खबरि चर मुख नृप पाई,
राजकुमार प्रहस्त साथ दुहिता है आई।
सो सुनि भाग्य सराहि अमित मन मैं मुद मानी,
सचिवन दीन्ह निदेस ताहि लावहु रजधनी॥

२

सिर धरि नृपति निदेस गहरु नेकहु नहिं लायौ,
ताकौ स्वागत करन हेतु सब साज सजायौ।
उमहि बुलावन काज गये जेहि बिधि गिरिराई,
चल्यौ सुमालिहु राज सुताहि ल्यावन सुख पाई॥

३

साजे गजमदमत्त सैल स्त्रंगन सम सोहत,
जिन पै सुभट समूह चढ़ैं देवन मन मोहत।
तागन वारन वृन्द तहाँ यहि विधि छवि छाजत,
जनु कज्जल गिरि सिखिर नील नीरद बहु राजत।

४

धवल संख सम चारि बाजि स्यन्दन मैं लागे,
उच्चैस्त्रवा लजात हिये जिनकी छवि आगे।
गन्धवाह कौ गमन मन्द ताखन ह्वै जाई,
भाजत सरपट जबहि ग्रीव अरु स्त्रवन उठाई॥

५

साजे गजरथ बाजि चढ़ी मुख मंजु वहाली,
सोइ सुठि स्यन्दन साजि भयौ आरुढ़ सुमाली।
चलीं सुन्दरी, केतुमती, रानी छबिखानी,
तिलोत्तमा मैनका मनहु गमनी सुखदानी॥

६

लसत चन्द्रिका सीस हिरी सोहत तन सारी,
भूमत कटि करवाल किये बरबाजि सवारी।
परिचारिका समूह चल्यौ लागे सँग कैसे,
देवनारि बहु चलैं सक्र-जाया सँग जैसे॥

७

होत संखधुनि तुमुल मंजु बाजत सहनाई,
सुनि जिनकौ सुर मधुर जात सुर बृन्द सकाई।
रही धूरि नभ दूरि भानु नहिं परत लखाई,
यहि विधि बनिता-सैन तासु स्वागत हित आई॥

८

माल्यवान जय जयतु जयतु स्वर्गत नृप माली,
जयतु सुमाली वीर अतुल बल विक्रम साली।
जयतु प्रहस्त प्रवीर जयतु कैकसी कुमारी,
जिन निज बंस विभूति हेतु कीन्हौ तप भारी॥

९

त्यागि वाटिका सौंध कुँवर नीचे चलि आयौ,
पकरे पंकज पानि कैकसी कौ सँग लायौ।
सुषमा अकथ अनूप कछू बरनी नहिं जाई,
जनु जमुना जमराज साथ हिम गिरि से आई॥

१०

झलकत आभा दिव्य सुता मुख पै सुखदानी,
ताकौ सकल प्रयास लियौ जननी जिय जानी।
सूँघि बाल-विधु-भाल भुजा भरि भेंटि जुड़ानी,
पूछन लगीं हवाल मुदित मन ह्वै दोउ रानी॥

११

गुरु लोगनि पद परसि अमित हिय मैं हरखाई,
कथा समस्त प्रहस्त वीर नै तिनहिं सुनाई।
तेहि गज पै बैठाय आपने संग सुमाली,
राज सौंध दिसि चल्यौ चढ़त मुख मंजु बहाली॥

१२

गौन्यौ राज समाज राज मन्दिर सुख पाई,
बनितन स्वागत कियौ मंजु फुलवा बरसाई।

राजद्वार पै भीर प्रजा जनकी बहु बाढ़ी,
लीन्हें आरति देवयती नारिन सँग ठाढ़ी ॥

१३

तब आरती उतारि तासु गहिं पंकज पानी,
अन्तःपुरहिं लिवाय चली जेठी महारानी।
तारवन मोभा मंजु तासु बरनी नहिं जाती,
जनु निसिपति कौ घेरि चलीं तारन की पाँती ॥

१४

सैनिक सुभट समूह चल्यौ नरपतिहिं जुहारी,
भोजन पाय निवृत्त भई तब राजकुमारी।
अरु भगिनिन सँग कहत रही बन कथा पुरानी,
नीरज नैननि माँहि तास निंदिया नियरानी ॥

१५

बीति गयौ बहुकाल तबहि दादी हरषाई,
बर प्रसाद की यादि आपु कैकसहि दिवाई।
अरु कीन्हौ अनुरोध आजु निहचै तेहि खइये,
निज कुल कौ गत विभव आपु जेहिते पुनि पइये ॥

१६

सिर धरि तासु निदेस प्रात कैकसी अन्हाई,
कियौ सम्भु कौ ध्यान हिये आनँद अधिकाई।
बहुरि हवन करि अरु त्रिभूति त्रय भाग बनाई,
लीन्ह्यो निज मुख डारि मुदित चतुरानन ध्याई ॥

१७

भोज पत्र पुरियानि बहुरि लीन्ह्यौ तिय फाँकी,
जाते रही विभूति-लेस तिनमें नहिं बाकी।
भोगावति कौ नीर परम पावन मुख डारी,
लगी करन पुनि वेद पाठ सिव कौ उर धारी ॥

१८

केतिक काल बिताय सोई बेला चलि आई,
त्रय सुत कन्या एक कैकसी नै उपजाई।
सक्र सिंहासन हिल्यौ धरा कन्दुक सम डोली,
उगलति मुख चिनगारि सियारिन रव करि बोली ॥

१९
बरस्यौ नभ सौं रुधिर मेघ गरजे भयकारी,
उल्का महि पै गिरीं भयौ हत-तेज तमारी।
लाग्यौ बहन प्रचण्ड पवन गिरि डोलन लागे,
अरु खलभल्यो समुद्र गीध कटु बोलन लागे॥

२०
वपुष नील-मनि-कुधर सीस-दस बिसित-बांही,
ताम्र-ओठ मुख बड़े खड़े सिर-केस लखाहीं।
पुनि जनम्यौ घटकरन जासु वपु बरनि न जाई,
हारि गई कवि बुद्धि कतहुँ समता नहि पाई॥

२१
बहुरि विभीषन भयो विपुल बल विक्रम वारो,
जिन कुल रीति बिहाय नीति नूतन निरधारौ।
पुनि कन्या इक भई जासु की रूप लुनाई,
लखि अपने मन माँहि काम की बाम लजाई॥

२२
सिव प्रसाद सो बढ़न लगे दिनकर सम बालक,
जनमत ही तें भये सकल अरिजन-कुल-घालक।
ज्यौं कुपथ्य सौं रोग बढ़त दारुन बिकराला,
अरु ज्यौं आहुति पाय बढ़त हुतभुक की ज्वाला॥

२३
नाक, रसातल, भूतल, जनु बालक तनु धारी,
वात, पित्त, कफ, बढ़न लगे जनु जन दुखकारी।
कैधौं तीनौ अनल, तेज मय धधकत ठाढ़े,
कैधौं तीनों वेद रसातल ते हरि काढ़े॥

२४
कैधौं रज तम सत्य लसत तीनों तनुधारी,
सो हैं विधि हरि संग यथा ससि धर त्रिपुरारी।
इमि निज मति अनुरूप कविन अनुमान लगायौ,
तबहुँ उचित उपमान खोजि काहू नहि पायौ॥

२५
जानि बंस कौ उदय भयो मन मगन सुमाली,
दान देत खन राज कोप दीन्हौ करि खाली।

माल्यवान मुद मानि जाति-जन लियौ बुलाई,
यथा समय पुनि नाम करन कीन्हौ हरखाई ॥

२६

हुते सीस दस जासु, नाम दसकन्धर कीन्ह्यौ,
कुम्भकरन तिमि नाम करन दीरघ लखि दीन्ह्यौ।
अति भीषन आकार विभीषन या लगि भाख्यौ,
रही सूरपनखानि नाम सुरपनखा राख्यौ ॥

२७

बीते द्वादस वर्ष सबै जब भये सयाने,
बंस उचित संस्कार किये कुल गुरु सुख साने।
थोरे ही दिन माँहि वेद वेदांग पढ़ाई,
धनुर्वेद अरु आयुर्वेदहु दियौ सिखाई ॥

२८

मंत्र सहित ब्रह्मास्त्र प्रहारन और निवारन,
गदा तथा असि सूल युद्ध के दाँव हजारन।
ब्यूह बतावन सीख्यौ अरु घुसि ताहि बिदारन,
माया युद्ध अपार तथा बहु बिधि बपु धारन ॥

२९

दसधनु एकहि साथ तानि जब बिसिख चलावत,
जानि परत जलधार मनहु जलधर बरसावत।
चूनौ करत पहार फोरि जब ही सर मारै,
निसित बिसिष बरसाय लोह की भीति बिदारै ॥

३०

कुम्भकरन रन करन माँहि इमि भयौ प्रतापी,
तीनहुँ लोकनि माँहि साख अपनी थिर थापी।
जबहिं कुन्त गहि पानि सहज ही कबहुँ घुमावै,
चपला पाहि पुकारि घने घन में घुसि जावै ॥

३१

कबहुँक चरन प्रहारि सिला चूरन करि डारै,
कबहुँक कुधर उपारि लाय सरिता में पारै।
बहन लगै सरिधार जितै नीचौ थल पावै,
जस प्लावन यहि भाँति रसातल में नित आवै ॥

३२
राजनीति मैं विपुन भई सूपनखा बाला,
जटिल प्रश्न मैं देन लगी निज संमति आला।
सिख्यौ विभीषन सास्त्र सस्त्र के भेद हजारन,
गदा परिघ असि कुन्त परसु अरु मुसल प्रहारन॥

१३
इमि सब सुतन समर्थ देखि नाना मुदमानो,
निज ढिग तिनहिं बुलाय कह्यौ या विधि बरवानी।
"अबतुम भये सयान और सब ही विधि लायक,
कानन मैं तप करहु होंय त्रिपुरारि सहायक॥

३४
तपबल ही सौं रचत विश्व-परपंच विधाता,
तपबल ही सौं बनत विस्नु वाको परित्राता।
तपबल ही सौं रुद्र ताहि पल मैं बिनसावैं,
तप की महिमा और कहा लौं तुमहिं सुनावैं॥

३५
तपबल ही सौं कनक कसिपु अरु हाटकलोचन,
पहिले कीन्हौ हुतौ विश्व-वीरन-मद-मोचन।
औरन की का बात हरिहि रन माँहि प्रचारयौ,
लड़त सामुहे रह्यौ नैकु हिय मैं नहि हारयौ॥

३६
हमहू सब तप कठिन साधि त्रिपुरारि रिझायौ,
अरु अपनौ मन चह्यौ सकल तिनसौं बर पायौ।
गिरि त्रिकूट पै हेममयी लङ्का बनवायौ,
पै ऐसी कछु भयौ राज तहँ करन न पायौ॥

३७
सो वह सकल प्रसंग तुम हम फेरि सुनै हैं,
तुव तप के फल रूप जबहिं सुभ दिन सुत ऐहैं।
अब विलम्ब जनि होय करहु तप हेतु तयारी,
बसहु जाय बन माँहि सिद्धि दैहै त्रिपुरारी॥

३८
अब माता ढिग जाय पाँय वाके ह्वै आवौ,
अरु सिष आसिष पाय सुमुद काननहिं सिधावौ।

निज तन कष्ट उठाय कठिन तप सब मिलि साधौ,
घित्त चितौ वर लहन काज सिव पद अवराधौ॥

३९

तब जननी ढिग जाय मुदित मन तीनौ भाई,
मातामह-अनुरोध कह्यौ कर जोरि सुनाई।
सो सुनिकै कैकसी अमित अनन्द सौं पागी,
अरु अपने मन माँहि कछुक इमि सोचन लागी॥

४०

जौ पै रोकौं इन्हैं मातु ममता दरसाई,
निज अनुरोध विरोध मानिहैं कका ढिठाई।
तप कीन्है बिन कहौ राज कैसौ जग माँही,
तप बिन अचल समृद्धि कतहु कोउ पावत नाहीं॥

४१

यह गुनि धीरज धारि सीस धरि पंकज पानी,
निज तप कौ फल सुमिरि मातु बोली मृदुबानी।
"अन्तहु तौ है उचित भूमिपालहिं बनबासू,
बय कुमार अवरेखि होत कछु हियैं हरासू॥

४२

पै नाना उपदेस मानि तप मैं मन धारौ,
निज पुरिखन सम ललित-फलित कीरति बिस्तारौ।
हम बन बसि तप साधि कठिन मुनिबरहि रिझायौ,
तबहि महा बलसालि सुवन तुमरे सम पायौ॥

४३

अस कहिकै तप सिद्धि-हेतु सुभ आसिष दीन्हौं,
कंठलाय सिर सूँघि बिदा तिनकौ पुनि कीन्हौ।
चले मातु-पग लागि त्यागि गृह तीनौं भाई,
कानन कौं मग लियौ, मनहु आये पहुनाई॥

४४

जाय गोकरन धाम मनहिं अति आनन्द पायौ,
ध्रुव कुमार सम तप साधन हित चित्त दृढ़ायौ।
सोधि भूमि तप योग छेत्रपति पूजि सुहाई,
लै जल करि आचमन मारजन मन सिव ध्याई॥

४५

प्रानायाम बहोरि साधि चित वृत्ति सुधार्‌यौ,
अभिमत फल दातार संभु मूरति हिय धार्‌यौ।
केतिक बांबी भईं बांस लगि गये सुखाई,
या विधि साधि समाधि दियौ बहु वर्ष बिताई॥

४६

दीरघ दाघ निदाघ पंचाग्गिनि तापि वितायौ,
बहु-दारुन हिम राति खड़े जल मोहिं गँवायौ।
अरु वीरासन बैठि कष्ट बरषा कौ झेल्यौ,
इमि तप कै घटकरन आपु प्रानन पै खेल्यौ॥

४७

इनहू ते अति कठिन उग्र दसमुख तप कीन्ह्यौ,
निज नव सीसन काटि होमि हुतभुक मँह दीन्ह्यौ।
डारन लाग्यौ काटि जबै दसवों निज आनन,
तब प्रतच्छ गहि पानि लियो सहसा चतुरानन॥

४८

ह्वै प्रसन्न पुनि कह्यौ तात! माँगहु बर सोई,
जो तुमरे मन होय ताहि राखो जनि गोई।
इमि स्रौननि सुख दैनि सुनत चतुरानन बानी,
दसकंधर तब कह्यौ अमित मन मैं मुद मानी॥

४९

"करहु मीचु सौं अभय देव मोहि सकै न मारी,
काहू सौं रन माँहि जाँहु कबहूँ नहि हारी।"
एवमस्तु कहि ताहि बहुरि दससिर विधि कीन्ह्यौ,
कामरूप धरि सकौ यहौ तापै बर दीन्ह्यौ॥

५०

मन चाह्यो बर पाय विभीषन हिय हरषान्यौ,
घंटकरनहि बर देन काज तब विधि मन ठान्यो।
पुनि फेरी मति तासु आपु सारद कौ प्रेरी,
माँगी जातें नींद मुदित पट मासन केरी॥

५१

तीनिहु भाइन यथा योग यहि विधि फल दै कै,
गवने विधि सर लोक संग मुनि वृन्दनि लै कै।

इमि दसमुख घटकरन विभीषन अति सुख पाई,
पुनि पताल पुर माँहि गह्यौ गुरुजन पद आई ॥

५२

बाजन लागी फेरि राज-गृह अनँद बधाई,
कुल गौरव कौ उदय भयौ याते हरषाई ।
पूर्‌यौ मोतिन चौक कैकसी मन मुद मानी,
लागो मंगल चार करै बूढ़ी महारानी ॥
पुनि निज जातिन के जनन लियो बौलि हरषित हियौ ।
पट भूषन धनदान बहु माल्यवान सबकौ दियौ ॥

चतुर्थ सर्ग

दोहा

१

दसमुख निज बन्धुन सहित, इमि बिधि सौं बर पाय।
आयौ लौटि पतालपुर, अति हिय मैं हरषाय॥

२

जानि उदय कुल-भानु कौ माल्यवान मुद कीन्ह।
जाति जनन अरु कुल गुरुहिं, भेंट-दान बहु दीन्ह॥

३

व्यापि गयौ पाताल पुर, बर पावन कौ हाल।
असुर भये प्रमुदित सबै, सुर गन अमित बिहाल॥

४

राका, अरु पुष्पोत्पटा, कुम्भी नसिहि बुलाय।
लगी करन मंगल सकल, कैकसि हिय हरषाय॥

५

गंधव, विद्याधर, उरग, आये नृप दरबार।
दियो बधाई मुदित मन, अरु पायौ उपहार॥

६

केतुमती माता-मही-उर मैं सुख न समात।
आनन्द कौ अम्बुधि बढ़त लखि ससि दसमुख-गात॥

७

कीन्हौ नागन की तियन, मुदित मंगलाचार।
बीना, बेनु, मृदग, धुनि होत सुमाली द्वार॥

८

बीते या विधि दिवस बहु, जात न लागी बार।
कियौ एक दिन मुदित मन माल्यवान दरबार॥

९
यथा समय कुल जन सकल, मन्त्री बैठे आय
माल्यवान पद कंज पै, अपनौ सीस नवाय ॥
१०
बहुरि बुलायो दससिरहि, दोऊ भाइन साथ ।
लहि नरपति संकेत इमि, कह्यो सचिव सुभ गाथ ॥
११
उदयौ नृपति सुकेस कौ, पूर्व पुन्य यहि काल ।
उपजे जिनके वंस मैं, दससिर के सम बाल ॥
१२
"तप-श्रम हमहू सबन कौ, सफल भयौ है आज ।
मानहु पायौ फेरि कै, निज लंका कौ राज ॥"
१३
सुनि लंका के राज कौ, निज नाना सौं नाम ।
बोलि उठ्यो तब घटकरन, या विधि बचन ललाम ॥
१४
"बसत कहाँ लंका पुरी, तहाँ कौन को राज ?
है अपनी, तो हम सबै, इतहिं परे केहि काज ?"
१५
परम कुतूहल तासु लखि, कछुक प्रसंग दुराय ।
बोल्यो बचन प्रहस्त इमि, घटकरनहिं समुझाय ॥
१६
"बनवाई काका हुती, निज निवास के हेत ।
बसे हुते-हम जाय तहँ, पुत्र कलत्र समेत ॥
१७
गिरि त्रिकूट ऊपर बसत, सुबरन-मय गढ़ लङ्क ।
करि लीन्हो अधिकार निज, ता पर धनद निसंक ॥
१८
सुनि प्रहस्त मुख लंक पै, धनपति कौ अधिकार ।
कुम्भकरन के क्रोध को, रह्यौ न पारावार ॥
१९
भृकुटि बंक फरकत अधर, करि रीते दोऊ नैन ।
कहन लग्यौ घटकरन तब, या विधि बलकत बैन ॥

२०
"जाके धन अरु धाम पै, करैं सत्रु अधिकार।
मातुल ताके जियन कौ, कोटि-कोटि धिक्कार॥

२१
काकौ सुवन कुबेर हैं, बसत कहाँ केहि देस ?
केहि बिधि सौं धनपति भयौ, कहहु सकल सविसेस ?

२२
वाकौ सब परिचय अवसि, दीजै मोंहि बताय।
ताहि पकरि डारत अबहि, निज नाना के पाँय॥"

२३
तब बोल्यो दसकन्ध इमि, "बन्धु! नेकु सुनि लेहु।
तुच्छ धनद से जनन सौ करिये इतौ जनि तेहु॥"

२४
कह प्रहस्त "वह मुनि-सुवन, राउर जैठौ भाय।
कोषाधीस सुरेस कौ, वाके देव सहाय॥

२५
यच्छ, उरग, गन्धर्व, अरु, किन्नर वृन्द ललाम।
विद्याधर, आवत सबै, वाके गाढ़ काम॥"

२६
तब बोल्यौ दससीस इमि, इनको भय कछु नाहिं।
असमंजस की बात बस एकहि, है हिय माँहिं॥

२७
'बड़ौ बन्धु' मामा कहत, जो पै धनपति काहिं।
तौ वाको अनहित करन, कैसेहु चाहत नाहिं॥

२८
सुनि दसकंधर के बचन, चुप ह्वै रह्यौ प्रहस्त।
राजनीति की चाल कहि, भाषी कथा समस्त॥

२९
"विनता दिति अरु अदिति दनु, हो कस्यप की नारि।
गरुड़, दैत्य, सुर, अरु, दनुज, भये सुवन इमि चारि॥

३०
सागर रसना भूमि पै किया दैत्य अधिकार।
हरि सहाय लहि देवगन तिनको कियो संहार॥

३१
तब ते या महिपै भयौ देवन कौ अधिकार।
करत रहत नित कपट सौं दैतन कौ अपकार॥

३२
वीरन की कहु बन्धुता, सुनी आजु लौं नाहिं।
तुमहु करहु सुत ! सोइ जो, ह्वै आयौ जग माँहि॥

३३
छीनि लेहु पुरखानि कौ, सदन कुबेर हराय।
फेरि देहु गढ़ लंक पै, विजय-धुजा फहराय॥"

३४
सुनि प्रहस्त के बचन इमि, दसमुख कियौ बिचार।
अरु बोल्यौ गम्भीर ह्वै, बचन समय अनुसार॥

३५
"राजदूत भेजहु अवसि, जो कुबेर पहँ जाय।
अरु मेरौ संदेस इमि, कहै ताहि समुझाय॥

३६
"मम मातामह लंक पै, तुम कीन्ह्यौ अधिकार।
हठ करि मेरे स्वत्व, पै कियौ कुठार-प्रहार॥

३७
नाना की सम्पत्ति कौ, नातिहिं स्वामी होत।
हमहि सगे नाती लगत, कौन रावरो सोत॥

३८
तुम्हरे स्वत्वहु ते अधिक, है हमरौ अधिकार।
याते लंका लैन कौ, त्यागहु कुटिल विचार॥

३९
अपर दूत कौ काम नहि, का करिहै वह जाय।
मातुल ! तुमहि कुबेर कौ, अब आवहु समुझाय॥

४०
बंस वैर जाते मिटै, होय न जन-धन हानि।
सोई तुम मामा ! करहु, या विनती मम मानि॥"

४१
सभा विसर्जन तब समुद, दीन्ह्यौ भूप कराय।
गौने सब निज निज ग्रहन, नृप-पद सीस नवाय॥

४२
होत प्रभात पयान हित भयौ प्रहस्त तयार।
वायु वेग रथ पै चढ्यो लीन्हों साथ सवार॥
४३
पार करत गिरि सरित सर, आयो सागर तीर।
उठत उताल तरंग लखि, हिय हरख्यो बरबीर॥
४३
यन्त्र-सेतु कौ पाहरू आवत तिनहि निहारि।
कड़कि बचन यहि विधि कह्यौ काढ़ि कठिन तरवारि॥
४५
"को हौ तुम निबसत कहाँ, कहा तुम्हारौ नाम?
अरु आये केहि हेतु इत, कहा रावरौ काम?"
४६
"माल्यवान नृप दूत हम, बसत पुरी पाताल।
हौं प्रहस्त, सन्देस लै, आयौ इतहि उताल॥"
४७
ह्वै विनीत तब पाहरू, कियो सेतु विस्तार।
ता पर आय प्रहस्त तब, कीन्हौ सागर पार॥
४८
आयो परिखा पार कै, दियौ पाहरुहि लेख।
आयसु नगर प्रवेस कौ, तिन दीन्हौ सविसेख॥
४९
साथहि पठयो एक चर, द्वारपाल समुझाय।
दियौ कुबेरि-निकेत मैं, तासु प्रवेश कराय॥
५०
राजदूत कौ आगमन, ज्योंहीं सुन्यौ कुबेर।
अरु विचारि नृप नीति कौ, करी मिलन में देर॥
५१
'अब ह्वै गयौ विलम्ब बहु, प्रातहि मिलिहौं आय'।
अस कहि दूत-अवास मैं, दियो तिनहि ठहराय॥
५२
कियौ यच्छगन-सेवकन, तिनकौ बहु सत्कार।
पौढ़े कोमल सेज पै, सोवत लगी न बार॥

५३

उत अन्तःपुर मैं धनद, सचिवन लियौ बुलाय।
कीन्हीं तिन सौं मंत्रना, कछुक हिये घबराय॥

५४

नल, कुबेर या विधि कह्यौ "सुनिय विनय महराज।
दीन्हौ ब्रह्महि मुनीस ने, गढ़ लंका कौ राज॥

५५

अब तौ है यहि दुर्ग पै, हम सबको अधिकार।
जौ लौं सकत उठाय धनु, कौन करै प्रतिकार॥

५६

अब उनसौं कहि देहु प्रभु! देस आपने जाँहि।
दै हैं सूची अग्र महि, बिना युद्ध हम नाँहि॥"

५७

तब बोल्यौ मणिभद्र इमि, "समुझि करिय प्रभु काम,
बाल बुद्धि जानत नहीं, दुखद-समर-परिनाम।

५८

ह्वै है दोऊ ओर सौं, जन-धन की बड़ि हानि।
गति मम विनती इती, आपु लीजिये मानि॥

५९

अबहीं मुनिवर के निकट, मंत्रहि पूछहु जाय।
जैसो उनकौ होय मत, सोई करहु प्रभु आय॥

६०

भाये धनपति के मनहिं, मणिभद्र के बैन।
पुहुप यान पै चढ़ि चल्यौ, तब पायौ चित चैन॥

६१

पल मारत आस्रम पदहिं, पहुँच्यौ जाय विमान।
जँह विस्रवा मुनीस है, करत ईस कौ ध्यान॥

६२

निसा काल बन माँहि तहँ, उतर्‍यो निरखि विमान।
आये अवसि कुबेर हैं, मुनि कीन्ह्यो अनुमान॥

६३

गयो धनद पितु के निकट, आस्रम मैं सुख पाय।
परर्‍यौ मुनी पंकज चरन, अमित विनय दरसाय॥

६४
निज कर सौं मृग चर्म कौ, लीन्हो आपु बिछाय ।
बैठि गयो वेदी-निकट, पितु-संकेत कौ पाय ॥

६५
मुनि पूछ्यौ ऐसे समय, आये जौ यहि धाम ।
कहहु सकल संक्षेप मैं, पर्‌यौ कौन सौ काम ॥"

६६
सुनत नालयुत-जलज-सम, दोउ कर सम्पुट जोरि ।
लाग्यो कहन कुबेर इमि, गिरा अमिय रस बोरि ॥

६७
'आयौ दससिर दूत, बनि, मातुल तासु प्रहस्त ।
कहत लंक खाली करहु याते हैं हम व्यस्त ॥'

६८
"आपुहि नै दीन्ह्यौ हुतौ, हमैं तहाँ को वास ।
अब कैसे वाकौ तजै, मानि बन्धु की त्रास ॥

६९
विद्याधर, किन्नर, उरग, यच्छ बसैं मम साथ ।
कैसे हम सहसा तजहिं, आपुहि सोचिय नाथ ॥

७०
तजिहैं जो पै लंक हम, मानि तासु भय भूरि ।
देव बंस की साख सब, ह्वै जैहै बस धूरि ॥"

७१
कह मुनीस गढ़ लंक हो, साँचहु तिनको ठाम ।
नाना मामा तासु रहि, भोग्यो भोग प्रकाम ॥

७२
हारि समर में विस्नु सौं, मानि चक्र की त्रास ।
गये सबै पाताल; हम, दीन्ह्यौ तुमहिं निवास ॥

७३
अब दसमुख समरथ भयौ, तप करि बिधि वर पाय ।
जो ऐसे दैहौ नहीं, बल सौं लेय छिनाय ॥

७४
सेना बल भुज बलहु सौं, सकत न तुम तेहि जीति ।
देह लंक गढ त्यागि तम, यहै कहति है नीति ॥

७५
लेहु अवधि त्रय मास की, तुम दसमुख सौं माँगि ।
जाय बसहु अलकापुरी, तासु लंक गढ़ त्यागि ॥

७६
मानहु बचन प्रहस्त के, लेहु बुद्धि सौं काम ।
ता सँग संगर करन कौ, भूलिहु लेहु न नाम ॥"

७७
सुनि मुनिवर के बचन इमि, पायो सान्ति कुबेर ।
चल्यौ बैठि निज यान पै, आवत लगी न देर ॥

७८
निज मन्दिर में सयन करि, चिन्तित बितई रात ।
बहन लग्यो सीतल पवन, गइ निसि भयौ प्रभात ॥

७९
अरुनोदय के होत ही, किन्नर गन गहि बीन ।
हरषित हिय गावन लगे, धनपति सुयस प्रवीन ॥

८०
होन लगी सिव-आरती, लगे घंट घहरान ।
त्याग्यौ नींद प्रहस्त तब, सुनि तिनकी धुनि कान ॥

८१
प्रात क्रिया निबट्याय कैं, बैठ्यौ भोजन पाय ।
तौ लगि सचिव कुबेर कौ, तेहि लैं गयो लिवाय ॥

८२
माल्यवान बैठत जहाँ, तहँ अब लसत कुबेर ।
भयौ छोभ वाकैं हिये, देखि दिनन कौ फेर ॥

८४
कह धनपति "दससीस है मेरौ छोटौ भाय ।
जो मेरौ वाकौ सोऊ, सब कछु सकत बटाय ॥

८५
पै वाकौ अनुरोध सुनि, त्यागि देहुँगौ लंक ।
नयौ सौध बनवाइहौं, रहिए आपु निसंक ॥

८६
अवधि देहु त्रय-मास की, लेहु भवन बनवाय ।
हौं जैहौं अलका पुरी, तुम निवसहु उत जाय ॥"

८७

गौरव राखन हेतु पुनि, बैठि गयौ सिरनाय।
दसमुख कौ अभिप्राय सब, ताहि दियौ समुझाय॥

८७

सुनि इमि बचन कुबेर के, वीर प्रहस्त उताल।
लौटि गह्यौ हरषित हिये, पठ्यौ पुर पाताल॥

८८

माल्यवान सौं आयकै, कही तहाँ की बात।
सुनि हरषे राकस सकल, आनँद उर न समात॥

८९

होत प्रात धनपति इतै, बिसकरमहि बुलवाय।
कह "मम हित कैलास पै, सौध बनावहु जाय॥"

९०

पाय धनद आदेस इमि, सपदि संभु-गिरि जाय।
विरच्यौ तासु निवास हित, भव्य भवन हरपाय॥

९१

लंका त्यागि कुबेर इमि, रहे तहाँ पै जाय।
लीन्ही अलका नाम की, ता पर पुरी बसाय॥

९२

इत धनपति कौ एक चर, आयौ पुर पाताल।
अरु कुबेर के जान कौ, भाख्यौ सकल हवाल॥

९३

माल्यवान नृप मुदित मन, कुल गुरु लियौ बुलाय।
पूछ्यौ गेह प्रवेस दिन, चल्यौ लंक हरपाय॥

९४

पहुँचे सब सागर निकट, आवत लगी न देर।
यंत्र-सेतु कौ जात खन, तोर्‌यौ हुतौ कुबेर॥

९५

तब वोहित मँगवाय इक, सब राकस परिवार।
ता पर भये सवार अरु, कियौं सिन्धु कौ पार॥

९६

स्वागत पुर वासिन कियौ, जे न सके सँग जाय।
माल्यवान पुनि दुर्ग मैं, दियौ ध्वजा फहराय॥

९७

यथा योग सबकौ सदन, दीन्ह्यौ बाँटि नरेस।
पुनि सुखेन अरु संकु कौं, भेज्यौ सपदि सँदेस ॥

९८

या विधि सब राकस प्रबल, माल्यवान सँग जाय।
बसन लगे गढ़ लंक मैं, उर आनँद अधिकाय ॥

९९

इमि दसमुख बल बुद्धि सौं, मिल्यौ लंक कौ राज।
माल्यवान मन मानि मुद, करन लग्यौ पुर काज ॥

१००

लग्यौ करन पुर काज थाप्यौ राज या विधि जाय कैं,
जेहि तोरि डार्‌यौ धनुप चलतहि भाग सो बनवाय कै।
वह यंत्र सेतु बिनासि, अरु पुष्पक विमानहु लै गयौ,
अति सोच तेहि लै जान कौ दसमोस के हिय मैं भयौ ॥

पाँचवाँ सर्ग

१

निवसि सानंद लंक मैं इमि कछुक मास बिताय
लियौ पुरजन मंत्रि-मंडल माल्यवान बुलाय।
पाय नृप-संकेत तब प्रस्ताव कीन्ह प्रहस्त,
जासु अनुमोदन समर्थन कियौ सभा समस्त ॥

२

माल्यवान महीप नैं तब सभा-अनुमति पाय,
तथा गुरुवर सुक्र सौं सुभघरी सुदिन सोधाय।
लियौ औषधि सकल तीरथ पुन्य-तोय मँगाय,
दियौ सिंहासन तिलक करि दससिरहि बैठाय ॥

३

कियौ सैन विभाग सब घटकन के आधीन,
त्यौं प्रधान अमात्य पद पायौ प्रहस्त प्रवीन।
भई दससिर स्वसा सूर्पनखा समुद नृप-दूत,
करन लागी राजनीतिक काज कितिक अकूत ॥

४

ताड़का मारीचि खर की समिति दियौ बनाय,
ह्वै प्रधान सुमालि ताकौ देत समुचित राय।
कियौ न्याय विभाग तिमि सब विभीषन आधीन,
भई इमि सासन-व्यवस्था लङ्क-राज्य नवीन ॥

५

कियौ अर्थ-विभाग मैं संहादि नवल सुधार,
लह्यौ सिच्छा-सचिव कौ पद भास-कर्ण उदार।
भयौ स्वास्थ्य-विभाग कौ तिमि बज्रमुष्टि प्रधान,
अभय हू कृषि-योजना सहयोग कियौ प्रदान ॥

६

सेतु नव निरमान-हित दसमुख अयोजन कीन्ह,
सचिव-गन पर-चक्र-भय सौं तेहि सलाह न दीन्ह।
कह प्रहस्त प्रधान मंत्री "अबहिं हौ तुम बाल,
समुझि पावत देस की अरु काल की नहिं चाल॥"

७

लै गयौ सिव-भव्य-मूरति धनद जाहि उठाय,
बाग मैं अलक पुरी के जेहिं लगायो जाय।
करत बाल-मयक जहँ हर-भाल-थल मैं वास,
भरत अँधियारिहु निसा मैं भवन धवल उजास॥

८

वैसियै मूरति रचन हित अति उछाह बढ़ाय,
माल्यवान महीप मयदानवहि लियौ बुलाय।
करि अनेक उपाय वानै दई मूर्ति बनाय,
मंजु माली बाग मैं तेहि आपु थाप्यो ल्याय॥

९

रच्यौ माली कौ समारक सैल-सिखिर गढ़ाय,
भस्म बसुधा-अस्थि की तेहि मैं धरयौ पुनि ल्याय।
मनि-खचित-आखरनि सौं तेहि माँहि इमि लिखि दीन्ह,
"चक्र पै चढ़ि विष्नु के इन गमन सुर-पुर कीन्ह॥"

१०

चहूँ दिसि लङ्का पुरी के लौह-चक्र बिसाल,
भ्रमत जो अति वेग सौं जलरासि मैं सब काल।
पुहुप यान कुबेर कौ खगपतिहु जुपै उड़ाय,
जान चाहैं पार तिनकौ लेत खैंचि डुबाय॥

११

माल्यवान महीप चाह्यौ देन तेहि उपहार,
ताहि मयदानव कियौ नहिं काहु-विधि स्वीकार।
अरु कह्यौ मन चाहतौ कछु देहु मोहि नरेस,
रावरौ गुन गान जातें रहौं करत हमेस॥"

१२

"देहुंगौं चित चह्यौ तुम्हरौ" कह्यौ नृप त्रय बार,
लह्यौ मयदानव हिये मैं मोद-रासि-अपार।

"देहु मोहि दस-सीस कौ इमि कह्यौ सो सउछाह,
करहुँगौ अपनी सुता कौ संग याके ब्याह।"

१३

लगे सोचन भूप यह ह्वै गई अजुगुत बात,
पै प्रथम दै इमि बचन कबहूँ कोउ न पाछे जात।
सुमिरि पुनि निज बंस-गौरव कह्यौ "दीन्ह्यौ, तोहि,
आपनौ अब बिसद-परिचय तुम सुनावहु मोहि।"

१४

"मोहि दानव बंस संभव भूप लीजिय जानि,
अप्सरा-कुल-रत्न-हेमा प्रिया मम गुनखानि।
भये वासौं तीनि मेरे महिप मनि ! सन्तान,
दुन्दुभी, मायावि, मन्दोदरी, चन्द्र समान॥

१५

रही चौदह बरस मो सँग गई पुनि सुरलोक,
रह्यौ सहतहि आजु लौं वासी प्रिया कौ सोक।
पाय बर-अनुरूप वाकी सुता कौ करि ब्याह,
होन चाहत तासु रिन सौं मुक्त मैं नर नाह॥"

१६

माल्यवान महीप के आनन्द उर न समात,
आय कै गृह माँहि रानिन सौं कही सब बात।
सुन्दरी अरु केतुमति कौ भयौ मोद अपार,
कैकसी सुख कौ न कौहूँ रह्यौ पारावार॥

१७

पुनि नरेस सुमालिहू सौं मंत्रणा कछु कीन्ह,
सुपनखा अरु कुम्भकरनहि भेजि वा सँग दीन्ह।
कह्यौ तिनसौं "कन्यका तुम देखि आवहु जाय,"
साथ जान प्रहस्तहू कौं दियो भूप रजाय॥

१८

सजे स्यन्दन चारि अति जव बाजि जिनमैं लागि,
चढ़ी तिनि मैं घटकरन सँग सुपनखा अनुरागि।
चढ़े मय-सेवक प्रहस्तहु चल्यौ लंका त्यागि,
सारथी संकेत लहि हय चले सरपट भागि॥

१९

बैठि बोहित अंबुनिधि कौ कियौ सबनै पार,
चल लाँघत विपुल मग बन सरित और पहार।
गये केतिक मास तब कहुँ मय-नगर-नियरान,
परसि सीतल-पवन लाग्यौ सबन हिय हरषान॥

२०

लख्यौ मय के भव्य भौंनहि घटकरन तब आप,
मनहु वह बढ़िकरन चाहत नील-नभ की नाप।
बसत पुर नग-अंक नीचे बहत सरिता, धार,
लसत प्रीतम-गोद बामा बसन कौ न सँभार॥

२१

जटित हीरन सौं कँगूरे तासु अति अभिराम,
नवल-दिनकर-करन-परसे लगत और ललाम।
लसत बर-उद्यान वाकौ घेरि चारिहुँ ओर,
नटत जहँ केतिक कलापी करत बहु-विध रोर॥

२२

दीसत हरेरी भूमि जहँ लगि दीठि है चलि जाय,
पाँवड़े जनु हरित पट के दियौ प्रकृति बिछाय।
देवदारु असोक अर्जुन लगे बहु मंदार,
परसि कर सौं लेत ऐसे झुके फूलनि भार॥

२३

कहुँ सरोवर माँहि बिकसे बनज-बन बहु भाँति,
अरु करत गुञ्जार तिन पै मत्त-मधुकर-पाँति।
गिरत पीत-पराग सर इमि रह्यौ सोभा धारि,
मनहुँ कीन्ह्यौ तासु कौ बिधि तरल-हाटक-वारि॥

२४

सुनत पितु कौ आगमन सुत निकरि आये द्वार,
कियौ आगत अतिथि जन कौ दुहुन बहु सत्कार।
न्हाय करि जलपान लागे करन पुनि बिस्राम,
दुन्दुभी सँग सुपनखा तब गई मय के धाम॥

२५

ताहि आवत देखि मंदोदरी कछुक लजाय,
लियौ अपनो इन्दु सौं बर-बदन बाल नवाय।

दियौ तुरतहि हेम पटुरिन ल्याय दासि बिछाय,
लगी धोवन सुपनखा के कमल-कोमल-पाँय ॥

२६

लगे सीतल सलिल पाँयन उठी कछु सिसिआय,
कह्यौ "लावहु गरम पानी" मय सुता मुसकाय।
सहज परसत पानि वाके होत ऐसे पाँय,
मनहुँ तिन मैं सद्य-जावक दियौ कोउ लगाय ॥

२७

लगो थोरिहि देर भोजन भयौ रुचिर तयार,
और परस्यौ हेम-भाजन ताहि चतुर सुवार।
लै गयौ द्वै जनन हित दुन्दुभी ताकौ द्वार,
इतै मंदोदरी ल्याई सुपनखा हित थार ॥

२८

मधुर भोजन तेहि करायौ दियौ हाथ धुवाय,
आपने ही पानि सौं पुनि दियो पान खवाय।
बिहँसि सुपनखा कह्यौ "अब भई तुम स्वीकार",
मेलि दीन्ह्यौ कंठ में करि-कुम्भ-मोतिन-हार ॥

२९

हरित-मनि-मय-माल मय नै घटकरन कौ दीन्ह,
दै प्रहस्तहि हेम-मुद्रा बिनय बहु बिधि कीन्ह।
बीति यहि बिधि सौं गयो तँह रहत एक सप्ताह,
करत गिरि वन सैर हिय मैं धारि अमित उछाह ॥

३०

हुतो विद्वज्जीह तँह एक दुन्दुभी कौ मीत,
सिखत जो गंधर्व वर सैलूष सौ संगीत।
दारिका इक हुती वाके तासु सरमा नाम,
बीन बादन जेहि सिखायो तुम्बुरु गुन धाम ॥

३१

भई प्रमुदित जानि विद्वज्ज्वाल कौ तिय साथ,
कह्यौ "यह संयोग है सब सुपनखा के हाथ।
बनै जैसे आपु निज-वंस बाल कौ करि लेहु,
ब्याह सऊर होन मैं तब है न कुछ सन्देहु ॥"

३२
दूसरे दिन भयौ न्यौतो सबन कौ तेहि गेह,
गये जेवन काज वाके धाम सहित सनेह।
लियौ दुन्दुभि आपु विद्युज्जीहि कौ बुलवाय,
ताहि लीन्हौ संग अपने खान मैं बैठाय॥

३३
तब कह्यौ घटकरन "याकौ मोहि परिचय देहु",
"लगत मेरो बन्धु है" तिन कहि दियो ससनेहु।
ह्वै गयौ यहि भाँति विद्युज्जीह वाकौ मित्र,
बढ़न लागी दुहुन में परतीत प्रीति पवित्र॥

३४
दैत्य-वैरोचन-जमाई बसत हो तेहि ठाम,
सुता वाकी हुती विद्युज्ज्वाल जाकौ नाम।
निरखि घटकरनहि तिया तन-मन निछावरि कीन्ह,
आपनो सब हाल मंदोदरी सों कहि दीन्ह॥

३५
मातु विद्युज्ज्वाल की तब सुपनखाहि बुलाय,
करि विपुल मनुहारि अरु बहु बिनय बचन सुनाय।
कह्यौ "मेरी सुता कौ अब ब्याह देहु कराय,
आपने बरबन्धु सों, जो गयौ या थल आय॥"

३६
हरषि हिय तब सुपनखा नै दियौ ताहि सुझाय,
"तुम करावहु जाय मय सौं ब्याह कौ प्रस्ताव।
जुपै मातुल मानि वाकौ लेहिं करि स्वीकार,
पूजि है अभिलाष राउर लागि है नहि वार॥"

३७
तबहि विद्युज्ज्वाल माता मयहिं निकट बुलाय,
दियौ कन्या ब्याह कौ प्रस्ताव मुदित कराय।
कह्यौ वीर प्रहस्त सौं मय "हानि यामें है न,"
जानि कुल-कीरति-कथा तिन मानि लीन्ह्यौ बैन॥

३८
एक दिन सैलूष विद्युवज्जीह कौं बुलवाय,
दियौ सरमा ब्याह की सब बात ताहि बताय।

कह्यौ तुम निज मीत अब घटकरन कौं समुझाय,
देहु याकौ व्याह वाके बन्धु सौं करवाय॥

३९

दूसरे ही दिवस विद्रुज्जीह गुनि गुरु-बैन,
मीत के ढिग जाय लाग्यौ कहन इमि भरि नैन।
गुरु-भगिन मेरी, सुता याकी सबै गुन खानि,
बन्धु सौं निज व्याहि लीजै बिनै मेरी मानि॥"

४०

मानि कै घटकरन विद्रुज्जीह की सब बात,
कह्यौ मातुल सौं बचन नहिं हरष हिये समात।
लियौ वीर प्रहस्त नै प्रस्ताव करि स्वीकार,
भयौ इमि गंधर्व बर सैलूष कौ उद्धार॥

४१

रहे मय के नगर या बिधि सबै द्वै सप्ताह,
दैत्य कुल के संग पकरी लङ्क की पुनि राह।
दुन्दुभी, मायावि, मय, मंदोदरी, सुख पाय,
चले स्यन्दन सुवर पै चढ़ि इष्ट-देव मनाय॥

४२

चल्यौ विद्रुज्ज्वाल-माता-पिता अरु परिवार,
चल्यौ सरमै साथ लै सैलूष बुद्धि उदार।
फिर्यौ विद्रुज्जीह जब दै बिदा कहि मृदु बानि,
लियौ रथ बैठाय वाको घटकरन गहि पानि॥

४३

आय लंका मैं दियौ तिनकौ नवल आवास,
अरु गयौ घटकरन गृह मै कैकसी कै पास।
इतै वीर प्रहस्त प्रमुदित भूप के ढिंग आय,
त्रय कुमारन-व्याह की सब बात कही बुझाय॥

४४

प्रात होतहि लियो गुरुवर सुक को बुलवाय,
सोधिकै सुभ-दिवस तिनसौं लगन लियौ धराय।
होत मंगल भूप कै गृह बजत मंद मृदंग,
सुनत जा-धुनि जात ह्वै वारिदन को मद भंग॥

४५

भई परिजन-प्रजा-जन की भीर बहु नृप द्वार,
कोऊ आवत जात कोऊ मुदित लोग अपार।
गई कुछ निसि तब भयो त्रयराज-नन्दन-ब्याह,
भूप रानिन कहिये कौ कहि न जात उछाह॥

४६

मुदित मन घटकरन विद्वज्जीह लीन्ह बुलाय,
सुपनखा की भांवरैं तेहि सँग दई, डराय।
भयौ या विधि ब्याह सबकौ रह्यौ आनन्द पूरि,
दानधन परिजनन पायौ, दुह न भरिपूरि॥

४७

सुता इक हेमा स्वसा की धान्यमालिन नाम,
सकल गुन गन खानि ही अरु रूप रासि ललाम।
ताहि ल्यायौ हुतौ मय मन्दोदरी के साथ,
दससिरहिं पकराय दीन्ह्यो मुदित वाकौ हाथ॥

४८

दूसरे दिन भोज दीन्ह्यो सबन मय हरषाय,
प्रजा-परिजन-बन्धु-जन कौ निज अवास बुलाय।
भाँति भाँतिन सौं भई तेहि राति मैं ज्यौनार,
अरु बिदा दै हेम-मुद्रनि कौ दियौ व्यवहार॥

४९

कियौ परछ्रान वृद्ध रानिन सम्भु-विधि-हरि ध्याय,
आय तीनिहु बधुन परस्यौ मुदित सासुन पाँय।
देखि कै विधु-बदन तिनकौ हरष हिय न समाय,
दियौ मुख-दिखरावनी मै आभरन पहिराय॥

५०

दारिकनि कौ ब्याहि दानव लौटि आये धाम,
राजकुल मैं ह्वै गयौ सम्बन्ध इमि अभिराम।
रहन विद्वज्जीह लाग्यौ घटकरन के साथ
तथा सासन में बटावन लग्यौ तिनकौ हाथ॥

५१

यौं भयौ राजकुमारन-ब्याह,

औ तेहि कौ सिगरौ-समाचार,
कुबेर नै दूतनि सौ सुनि पायौ ॥
विस्रवा के मन बाढ्यो अनंद,
असीस दियौ जेहि कौ फल लायौ ।
कैकसी कैतुमती अरु सुन्दरी,
रानिन हीय न मोद समायौ ॥

छठा सर्ग

१

जा दिन तें मय-दानव-नंदनी,
ब्याहि कै लंक पुरी महँ आई।
मान-सरोवर मैं मनो हेम,—
सरोज खिल्यौ सुखमा बगराई॥
कै नभ-नील मैं राजत मंजु,
कला-धर-मंडल मंडि जुन्हाई।
तारिका-माल सी आलिन सौं घिरो,
या बिधि बाल रही छबि छाई॥

२

केतुमती—पद—बन्दन — काज,
बधू जब ही जबै वा ढिग आवत।
रंचक सीस सौं सारी खसे,
परिचारिका आपने हाँथ उढ़ावत॥
भीतर सौध सौं बाहर लौं,
चहूँ ओर जुन्हाई की धार सो धावत।
ता पर मंद हँसी की छटा,
बसुधा पै मनो सुधा-धार बहावत॥

३

जावक सौं रँग पंकज पायन,
बाल जबै बसुधा पै धरै है।
कोमलता तिनकी इमि सोंचि,
मही मन माँहि संकोच करै है॥
त्यों ही जपा-दल, बिद्रुम, और—
बधूकनि की प्रभा मंद परै है।
औ गुललाला, गुलाबनि की,
सुखमा सिगरी कौ निसंक हरै है॥

४

पूजती पारवती-पद-पंकज,
बाल हिये अभिलाषनि धारी।
सैलजा को बिनवै कर जोरि,
सबै मन-कामना पूजौ हमारी॥
तासु की भक्ति लखे यहि भाँति,
प्रसन्न भई गिरि-राज-कुमारी।
"माँगहु जो वर भावै तुम्हें,"
मुसक्याई गिरा इमि मंजु उचारी॥

५

जानि कै सैल सुता अनुकूल,
मंदोदरी तौ हिय मैं सकुचाई।
त्यों दोऊ-कंज से पानि कों जोरि,
लियो कहिबौ मन में ठहराई॥
पै अपनो-चित-चीती जबै हौं,
निवेदन कौ चह्यो बाल लजाई।
श्री-ससि-माल के सामुहे तो,
मय दानव-नन्दिनी बोलि न पाई॥

६

"धारन गर्भ करैं अरु संतति,
है उपजावती राकस नारी।
पै सिसु-क्रीड़ा बिलोकन के—
सुख सों रहै वंचित वै सुकुमारी॥
त्यौं तिनकी प्रसौ-वेदना कों,
मुनि कै बर दीन्हो हुतो त्रिपुरारी।
आसिरबाद ह्वै साप गयो,
सुत गोद खिलाय सकै न बिचारी।

७

लै सिसु गोद खिलाइबै को वर,
या विधि मातु हमैं अब दीजिये।
आन तियान समान ही वँस की,
वामन कों वड़-भागिनी कीजिये॥

लंक के गौरव-रच्छन-भार कौ,
हे जननी ! अपने कर लीजिये ।
है हम किंकरी पाँयन की,
इतनी बिनती मन-मानि पतीजिये ॥

८

यौं मय-दानव-नंदनी की,
बिनती सुनी सैल सुता मुसकानी ।
औ तेहि के सिर पै अपनौ,
धरि दीन्ह्यौ प्रसन्न ह्वै पंकज पानी ॥
आजु तें लंक की भामिनियाँ,
लखिहैं सिसु-क्रीड़ा महा मुद मानी ।
रावरी भक्ति सौं दीप की भूमि,
बनी रहि है सब-मंगल खानी ॥

९

पुत्र तुम्हारो सुनौ मय-नंदिनी,
जीतन वारौ सुरेस कौ ह्वै है ।
संगर मै महाकाल हू कै,
समुहे लरिबै मैं न नेकु सकैहै ॥
त्यों यहि की तरवारि की छाँह कै,
साथ ही लागो बिजै चली जैहै ।
छोरनि हों लौ दिगंतनि के,
निज बाहुन के बल सौं जस छैहै ॥

१०

अत्रि मुनीस की नैननि जोति कौ,
कै मन मोद अकास सँभारौ ।
देव नदी जिमि संकर के दिये,
बीज को आपनी धार मै गारौ ॥
कस्यप-तेज को लै दिति नै,
कुल दैत्यनि कौ ज्यों कियो उजियारौ ।
राकस-बंस विभूति के काज,
मंदोदरी ने तिमि गर्भ को धारौ ॥

११

सुभ गर्भ के लच्छन लंक नरेस की,
जाया सबै दरसावै लगी।
कछू छीनता छाई सुगातनि पै,
पियराई कछू मुख आवै लगी॥
नित मृत्तिका-खान मै मै-तनया,
अपनी रुचि बेस दिखावै लगी।
कुच दोउन के मुख मंडल पै,
कछू स्यामलता अब धावै लगी॥

१२

गर्भ के भार के आरस सौं,
पलका परी मंदोदरी दुःख पावती।
केतिक वीर-कथा केहि कै,
सबै दासी तबै मन कौ बहरावतीं॥
लै कर बीन प्रबीन तिया कोऊ,
तारक के बिजै गीतनि गावती।
देव औ दैत्य महा रन के,
उपख्यानंनि कौ पढ़ि ताहि सुनावती॥

१३

ह्वै गई दीपन की प्रभा मंद,
सिंहासन सक्र कौ डोलन लाग्यौ।
जम्बुक, बायस, रासभ, स्वान,—
समूह सभीत ह्वै बोलन लाग्यौ॥
जन्मत ही करि केहरि-नाद,
भुजानि दुऔ निज तौलन लाग्यौ।
देव अदेवन के हित सो,
जम-द्वार-किवारनि खोलन लाग्यौ॥

१४

घेरि लियो बदरानि घुमंडि कै,
भाँदव मास की ही निसि कारी।
हाँथ पसारे न सूझि परै,
इमि सूचिका भेदी झुकी अँधियारी॥

लंक-नरेस के मंदिर में मनि,
दीपनि की तऊ छाई उज्यारी।
'राजकुमार के जन्म भयो,
परिचारिका यौं कह्यो आप पुकारी॥

१५

स्रौननि कौ सुख दैनी महा,
सुनते सिसु रोदन की प्रिय बानी।
सूतिका-गेह में आय गई,
तजि आलिन को धनि मालिनी रानी॥
सूपनखा परिहास का लगी,
सो सुनि मै-तनया मुसक्यानी।
मंगल साजनि साजै लगीं,
दुऔ माता-मही मन मैं मुद मानी॥

१६

लै सुत-जन्म कौ मंगल-मै,
समाचार कौ दास नरेस पै आई।
ता खन जो कछु पास हुतो,
मलिवान सुमालिहू दीन्ह्यो लुटाई॥
सर्वस दान कियो दसकंधर,
छत्र औ' चामर दोऊ बिहाई।
आनंद जो उमगौ गढ़ लंक मै,
सो केहु भाँति कह्यो नहिं जाई।

१७

नील-सरोरुह सौ सिसु कौ,
बर-आनन देख्यो मंदोदरि रानी।
त्यौं सुत कौ निज गोद मै लै,
गुनि गौरि प्रसाद हिये हरषानी॥
डारि दियो धनिमालिनी के पग,
देन असीस लगी मुद मानी।
"सारे सुरासुर हूरन मैं,
जुरि कै पहुँचाय सकैं नहिं हानी॥

१८

जोतसी कौ बुलवाय कै लंक—
नरेस महा मन मै अनुराग्यो।
औ सुत भाग्य कौ वासौं फलाफल,
आप प्रसन्न ह्वै पूछन लाग्यो॥
त्यों ग्रह और नछत्र को जोग,
विचारिकै सो फल भाखन लाग्यो।
रावन हूँ तेहि कौ सुनि कै,
हिय विस्मय हर्ष औ'सोक सौं पाग्यो॥

१९

अंक मै लै परिचारिका ताहि,
खिलावन कौ जबै बाहर ल्यावतीं।
तेज सों पूरन वा सिसु कौ लखि,
लंक की बामा महा सुख पावतीं॥
देखन कौ सुत कौं लैं समोद,
तिया निज गोद मै आपु खिलावतीं।
कोऊ उछारतीं ताहि सहास,
लिए कनियाँ चुटकौनि बजावतीं।

२०

दूध के दाँत दिखावै कबौ,
हँसि कै किलकारिन कौ कबौ मारै।
नील सरोरुह सौ मुख देखि,
तिया दबी जाती अनन्द के मारै॥
दासिन की अँगुरी गहि कै,
हरुयेई लग्यो महि पै पगु धारै।
जीरत पानि बड़ेन कै देखि,
लगे गुरु लोग तनौ मन वारै॥

२१

पाँचक वर्ष वितीत भये,
तेहि सिच्छक लागे सुयोग्य पढ़ावन।
त्योंही बड़े धनुधारिहु ताहि,
सिखावत लच्छ पै बान चलावन॥

रोपि मही पै जबै पग दाम,
लगै वह चोपि कै चाप चढ़ावन।
अंक मयंक के जाय दुरै,
निज प्राननि कौ सस चाहै बचावन॥

२२

मुगदर, पास, भुसुण्डी, गदा,
फरसा, औ त्रिसूल कौ सीखौ प्रहारन।
भाँतिन भाँतिन व्यूहनि कौ,
निरमान तथा घुसि आपु बिदारन॥
त्यों घटकर्न सिखायौ समोद,
सुतै भुज युद्ध के पाँव हजारन।
आयुध दिव्यन हू कै समंत्र
प्रयोग तथा तिन्हैं बेगि •निबारन॥

२३

कुन्तल लै कर मैं सहजैं,
जब ही घननाद हलावन लागै।
चंचला पाहि पुकारि मनौं,
घनमंडल मैं दुरियौ अनुरागै॥
केहरि नाद सुनै जेहि कौ,
घनराय के बारन कौ गन भागै।
त्योंही सुरासुर के हिय माँहि,
प्रलै ह्वै गो इतनो भय जागै॥

२४

लै करबाल चलावै जबै,
तौ सिलान हू कै जुग खंड कै डारै।
चूर करै गिरि अंगनि कौ,
जब ही जबै कोपि गदा कौ प्रहारै॥
फाटि ही जात मही कौ हियो,
तेहि तें निकरै लगैं बारि फुहारैं।
बारिद-नाद महाबल-सालि,
सरोख धरा पै जबै पग मारै॥

२५

संगर मै जुरिबे हित वाकी,
उतावली दोऊ सदा रहै बाहैं।
त्यों सुर - सुता - बिनासन - काज,
निरंतर जै मन माँहि उमाहैं॥
साध भरी यै रहै हिय मै,
कब धौं रन - सागर कौं अवगाहैं।
सोवती छाह मै लंक रहै,
अरि-बृन्द गहैं सुरलोक की राहैं॥

२६

सम्भु के सैल पै बाल गयौ,
दससीस के साथ महा अनुराग्यौ।
सैलजा - बाहन ताकि लखै,
सहसा गरराय उठ्यौ रिस पाग्यौ॥
पै सुनि बारिद-नाद की डाट,
छिनैक ही मै तेहि कौ मद भाग्यौ।
सब ही स्यान सौं ह्वै कै सभीत,
समेटि कै पूँछ दिखावन लाग्यौ॥

२७

लाग्यो उड़ै भय पाग्यौ सिखा,
तऊ पिच्छ के मारन ही सौं भुकै लग्यो।
त्यों महामूस गजानन कौ,
घबराय कै कंदरा माँहि लुकै लग्यो॥
सम्भु कौ बैल भज्यो मेहराय,
निवारित भृंगी न नैकु रुकै लग्यो।
बाये - बड़ो - मुख - भैरव - स्वान,
सभीत ह्वै बार ही बार भुकै लग्यो॥

२८

होते बिना उपवीत महेस,
जटान के जूट सबै खुलि जाते।
लाजन ही गरते सबै कौंधनी,
और कोपीन दुओ खुलि जाते॥

रोपि मही पै जबै पग दाम,
लगै वह चोपि कै चाप चढ़ावन।
अंक मयंक के जाय दुरै,
निज प्रानति कौ सस चाहै बचावन॥

२२

मुगदर, पास, भुसुण्डी, गदा,
फरसा, औ त्रिसूल कौ सीखौ प्रहारन।
भाँतिन भाँतिन व्यूहनि कौ,
निरमान तथा घुसि आपु बिदारन॥
त्यों घटकर्न सिखायौ समोद,
सुतै भुज युद्ध के पाँव हज़ारन।
आयुध दिव्यन हू कै समंत्र
प्रयोग तथा तिन्हैं वैगि निबारन॥

२३

कुन्तल लै कर मैं सहजैं,
जब ही घननाद हलावन लागै।
चंचला पाहि पुकारि मनौं,
घनमंडल मैं दुरियौ अनुरागै॥
केहरि नाद सुनै जेहि कौ,
घनराय के बारन कौ गन भागै।
त्योंही सुरासुर के हिय माँहि,
प्रलै ह्वै गो इतनो भय जागै॥

२४

लै करबाल चलावै जबै,
तौ सिलान हू कै जुग खंड कै डारै।
चूर करै गिरि अंगनि कौ,
जब ही जबै कोपि गदा कौ प्रहारै॥
फाटि ही जात मही कौ हियो,
तेहि तैं निकरै लगैं बारि फुहारैं।
बारिद-नाद महाबल-सालि,
मरोख धरा पै जबै पग मारै॥

२५

संगर मैं जुरिबै हित बाकी,
उतावली दोऊ सदा रहैं बाहैं।
त्यौं सुर - सुना - बिनासन - काज,
निरंतर जै मन माँहि उमाहैं॥
साध भरी ये रहै हिय मैं,
कब धौं रन - सागर कौं अवगाहैं।
सोवती छाह मैं लंक रहै,
अरि-बृन्द गहैं सुरलोक की राहैं॥

२६

सम्भु के सैल पै बाल गयौ,
दससीस के साथ महा अनुराग्यौ।
सैलजा - बाहन ताकि लखै,
सहसा गरराय उठ्यौ रिस पाग्यौ॥
पै सुनि बारिद-नाद की डाट,
छिनैक ही मैं तेहि कौ मद भाग्यौ।
सब ही स्वान सौं ह्वै कै सभीत,
समेटि कै पूँछ दिखावन लाग्यौ॥

२७

लाग्यो उड़ै भय पाग्यौ सिखा,
तऊ पिच्छ के मारन ही सौं झुकै लग्यो।
त्यौं महामूस गजानन कौ,
घबराय कै कंदरा माँहि लुकै लग्यो॥
सम्भु कौ बैल भज्यौ मेहराय,
निवारत भृंगी न नैकु रुकै लग्यो।
बाये - बड़ो - मुख - भैरव - स्वान,
सभीत ह्वै बार ही बार भुकै लग्यो॥

२८

होते बिना उपवीत महेस,
जटान के जूट सबै खुलि जाते।
लाजन ही गरते सबै कौंधनी,
और कोपीन दुआो खुलि जाते॥

पावते डोरी कहाँ ते पिनाक की,
पानि मैं कंगन कैसे सजाते।
ब्याल के कान जो हते कहूँ,
घननाद की हाँक जुपै सुनि पाते॥

२९

पूजन काज पिता - पद कौ,
घर ते घन - नाद जबै निकरै हैं।
मूढ़ सौं ह्वै कै तबै सुर नायक,
हीतल मैं भय भूरि भरै है॥
अर्गला डारि कै सो सहसा,
अमरावती द्वारनि बन्द करै है।
मूँदे बिलोचन भीति भरी,
अबला सी पुरी वह जानि परै है॥

३०

संकर सैल पै वारिद नाद,
गयौ हिये भाव भयौं कछू जाग्यो।
मौलि मयंक के पंकज पाँय,
अराधन मैं अतिसै अनुराग्यो॥
धारि कै मंजुल मूरति हीय,
समाधि कौ साधि कै ध्यावन लाग्यो।
या विधि आयु के वर्ष अनेकन,
कै तप घोर बितावन लाग्यो॥

३१

ह्वै तप उग्र सौं वाके प्रसन्न,
दियो वरदान हुतो त्रिपुरारी।
जाहु जहाँ हो जहाँ रनि-माँहि,
तहाँ ई तहाँ बिजै होय तुम्हारी॥
सक्ति अमोघ दई तेहि कै कर,
मंजु गिरा यहि भाँति उचारी।
ब्रह्म कौ दंड औ सक्र कौ वज्र,
पिनाक सकै न प्रहार निवारी॥

३२

यों वर अस्त्र अमोघ लह्यौ,
घननाद हिये न अनन्द समायौ।
मातामही के निकेतन कौं,
वह नागपुरी मैं समोद सिधायौ॥
नित्य ही खेलै लग्यो मृगया,
औ वराह कौ या विधि सौं रपटायौ।
रम्य - सरोवर के नियरे,
बड़े वेग सो भागत ही चल्यो आयौ॥

३३

लच्छ कौ बाँधि अनेकन बार,
रह्यो घननाद नराच चलावत।
पै वह पीवर - छद्म - वराह,
रह्यो छल कै निज गात बचावत॥
भागन मैं बहुवार सो कोल,
समीरन कौ रह्यो बेग लजावत।
लंक के राजकुमार कौं सो,
मति मंद रह्यो यहि भाँति भुलावत॥

३४

कान लौं तानि सरासन को,
घननाद ने सायक ऐसे प्रहार्‌यो।
भूमि पै कौल पर्‌यो अरराय,
पहार मनो पविधार कौं मार्‌यो॥
ताहि निपाति कै पोंछत स्वेद,
जलासय की दिसि वीर सिधार्‌यो।
नाग सुतानि कौ मंदिर तैं,
तहाँ आवत राजकुमार निहार्‌यो॥

३५

बैठि सरोवर कै नियरे गयो,
औ मृगया स्रम को लग्यो खोवन।
त्यौं कर संपुट मैं जल लै,
सरसीरुह आनन को लग्यो धोवन॥

केतिक बेर लौं नाम सुतानि कौ,
रूप मनोरम को लग्यो जोवन।
सीरी समीर लगै तन मैं,
पटिया पर सो परिकै लग्यो सोवन॥

३६

बाजनी पायल, नेवर की,
झनकार परी तेहि स्रौन सुनाई।
या लगि राजकुमार के नैननि,
नेकौ नहीं निंदिया नियराई॥
पौढ़ेई पौढ़े बिलोकत ही रह्यौ,
नाग - सुतानि की रूप लुनाई।
तौ लौ महा मधुरी धुनि बीन की,
मंदिर ते तेहि कान में आई॥

३७

आपुस मैं बतरान लगी सखी,
आवौ ! सरोवर माँहि अन्हावैं।
आपने हाथ सौं ल्याय सरोजनि,
सैलजा-सीस समोद चढ़ावैं॥
या बिधि पारबती कौ रिझाय कै,
औ चित-चीतौ सबै बर पावैं।
ह्वै बड़ भागिनी गौरी प्रसाद सौं,
आपुनौ जीवन धन्य बनावैं॥

३८

ल्याईं लिवाय सखी सिगरी,
अपने सँग ही इक नाग-सुता कौ।
लोचन बाँके हुतै यहि लागि,
सुलोचना नाम हतो पुनि वाकौ॥
हो बहु नागनि कौ अधिराज,
पतालपुरी के पिता पुनि ताकौ।
ताहि लिवाय अनारी सबै,
मिलि वाही सरोवर की दिसि ताकौ॥

३९

दूरि पै लाग्यौ सरोज हुतो,
तेहि ल्याइबें कौ हिय मैं निरधार्यौ।
पैरिबै काज सरोबर माँहि,
जबै वहि नै अपने मन धार्यो ॥
दाहिनी बाहु बिलोचन हू,
फरक्यौ भलौ ह्वै है न होय विचार्यो।
थोरिही दूरि गई हुती नीर मैं,
धावत नक्र कौ बाल निहार्यो ॥

४०

काल लौं वक्र कौ आवत देखि,
सुलोचना ऐसी गई घबराई।
जोर सौं हाय दई कहि कैं,
सहमी, गिरी औ मुख बोलि न पाई ॥
तौ लगि सो जल कौ मृगराज,
लियो तेहि कौ मुख माँहि दबाई।
औ पल मारत लै डुबकी कौ,
गयो मँझधार मैं लै तेहि धाई ॥

४१

नील निचोल बहै लग्यो नीर पै,
देखि सखी कोऊ रोवन लागी।
कोऊ सरोवर कूल गिरी,
कोऊ चेतना-ही न परी भय पागी ॥
दौरि कै एक अली तट पै,
घननाद कौ आय जगावन लागी।
औ सिगरी करुना की कथा,
वर वीर कौ आय सुनावन लागी ॥

४२

बिलोकि दसा तिनकी दयनीय,
तिन्हैं घननाद नै धीर बँधाय।
धर्यो निकट ही हुतौ कर मैं,
बर बीर लियो निज चाप उठाय ॥

चढ़ाय कै मौरवी कौ तेहि पै,
दियो नक्र पै ताकि नराच चलाय।
बहै लगी सोनित धार तुरन्त,
परासु सरीर बह्यौ उतराय ॥

४३

छूटि कै ग्राह के आनन सौं,
वा सुलोचना धार मैं जाय बहै लगी।
वारिद-नाद सों वाकी सखी,
सिर नाय गिरा यौं विनीत कहै लगी ॥
औ' बहु भाँति सों राजकुमारि कै,
प्राननि कौ परित्रान चहै लगी।
लालिमा पूरित नैनन मैं,
नहि रोकेहु ते जलधार रहै लगी ॥

४४

आलिन की बिनती सुनि कै,
तिनको पुनि धीरज लाग्यो बँधावन।
आपुनो चाप ते नक्र सरीर पै,
या बिधि बानन लाग्यो चलावन ॥
त्यौं ही सरोवर के तट लौं,
सर-सेतु लग्यो बर बीर बनावन।
भाष्यौ सहेलिन सौं मुसकाय कै,
राजकुमारि कौ जाहु लिवावन ॥

४५

धार्‌यो 'कला' सरसेतु पै पाँय,
लियो अपनी पुनि देह कौ तोली।
आनँद विस्मय मैं परि कै,
सहसा 'चपला' सौं उठी इमि बोली ॥
'आवो निसंक चलौ महि पै,
अरु ल्यावो मनाय सुलोचना भोली।'
या बिधि सों सिगरी सखियाँ,
सरसेतु खड़ी करैं लागी ठिठोली ॥

४६

ऐस्यो बन्यो सर-जाल हुतौ,
जल धार मैं बाल बहै नहीं पाई।
'चंचल' त्यों पहिले ढ़िग जाय कै,
लीन्यो सुलोचना कौ हथियाई॥
फूलहू तै हरुई हुती देह,
पै बाहर वाकौ सकी नहिं ल्याई।
औ' अपने बल पै खिसियाय,
लियो तिय ने निज सीस नवाई।

४७

बोली अली तब वारिदनाद सौं,
आपु ही ने हुतौ याहि बचायौ।
नीर सौं याको उठाइबे मैं,
अब क्यों वृथा एतौ बिलम्ब लगायौ॥
सो सुनि मन्द कछू मुस्क्याय कै,
बानन सेतु पै बीर सिधायौ।
अंक में लीन्हे सुलोचना कौ,
वह संग सखीन के कूल पै आयौ।

४८

शैलजा - मन्दिर-माँहि सुलोचने,
ल्याइ कै वारिद-नाद नै धारयो।
मंजुल-आनन पै सखियानि नै,
आनँद के अँसुवानि कौं ढारयो॥
त्यों तेहि तै करि कै परिहास,
'कला' यहि भाँति कौं बैन उचारयो।
'प्रान कौ दान दियो जेहि नै,
तुमने तेहि के हित का धौ बिचारयो॥'

४९

सो सुनि चेतना पाय कै नेकु,
सुलोचना मंजु चलाय कै आँखी।
चंचला कौ गहि पंकज-पानि,
कह्यो मृदु बैननि कौं इमि भाखी॥

दै चुकी या युवकै तन औ' मन,
है यहि बात की सैलजा साखी ।
लाज है रावरे हाथ मैं मातु !
औ पूरो करौ हम जो अभिलाखी ॥

५०

सुनि के सुलोचना के मंजुल बचन इमि,
माँग में तिया के गौरि-सिंदुर लगाय कै ।
अरु मनि-मंडित-अँगूठी को उतारि निज—
आँगुरी तैं बाल कौ तुरत पहराय कै ॥
अलि-अनुरोध सौं लजाती-नाग-नन्दिनी कौ,
आपने-जुगल-पद-पंकज छुआय कै ।
अंक भरि वाको निरसंक लंकनाथ-सुत,
आयो निज राज लौटि हिय हरषाय कै ॥

सातवाँ सर्ग

१

बारिद-नाद को लंक में आये,
पतालपुरी तें किते दिन बीते।
गंधर्व-ब्याह भयौ तौ भयौ,
पै सुलोचना के न भये चित चीते॥
हेम के सौध में राजकुमार,
निवास करैं लै मनोरथ रीते।
मंजुल-मूरति नाग-सुता की,
बिसारेउ तें निसरै नहिं हीते॥

२

रंग औ' तूलिका लै कर में,
पटिया पै रहै कबौ चित्र बनावत।
अंकित कै तिय को मनुहारि,
बड़े खन लौं रहे अंक लगावत॥
बोलै नहीं तबै भामिनी जानिकै,
वाकौ रहै परि पायं मनावत।
आँखिन में अँसुवा उमड़े,
तेहि राजकुमार निहारि न पावत॥

३

नील-सरोज सौ कोमल गात,
गयौ घननाद को यों कुम्हिलाई।
जाड़न को रतियानि से जैसे,
तुषार सौं पंकज जात सुखाई॥
डारि दियो पट भूषन कौ हूँ,
कहूँ सरचाप को दीन्हो बिहाई।
बाल-सखा लखि ताकी दसा,
लियो आँगुरी दाँतन माँहिं दबाई॥

४

कोहूँ बराह अखेट की औ',
कहूँ गौरि के मंदिर की करैं बातैं।
त्यों सर सेतु बनावन की कथा,
औ' कबौं नाग सुतानि की घातैं॥
ऐसो प्रलाप सुने घननाद को,
भूत लग्यो है कहैं कोऊ यातैं।
नानी निकेत गयौ हुतो बाल पै,
ब्याधि अपूरब लायो तहाँ तैं॥

५

या बिधि बीति गये दिन चारि,
रहस्य न रावन जानन दीन्हो।
त्यौं परिचारि कै रानी पढ़ाय,
बुलाय हौं वैद्य को सौध मैं लीन्हो॥
राज-कुमार प्रलाप सुन्यो,
गहि कै कर नारी-परिच्छन कीन्हो।
जानि गयौ सिगरी छिपी बात,
निदान कै रोग सुखेन नै चीन्हो॥

६

"भैषज दैहै" कह्यो इमि रानि सौं,
वैद सुखेन नरेस पै आयो।
औ घननाद कौ रोग-निदान,
सबै कहि रावन को समुझायो॥
ह्वै ज्वर मनमथ या कौ गयौ,
तेहि के उपचारन आपु बतायो।
राजकुमार-निवास के हेतु,
पयोनिधि के तट सौध बनायो॥

७

होत प्रभात सभा मँह जाय कै,
दूत दसानन ने बुलवायौ।
त्यौं मय दानव के लिये पत्र,
लिखाय कै वा ढिग बेगि पठायौ॥

दौहित की सुनि वैसी दसा,
तिनकै सँग लंकपुरी वह आयौ।
वारिदनाद-निवास कै हेतु,
अकास विचुम्बित भौन बनायौ॥

८

धौल बिलौर कौ सौध बन्यौ,
दुति मैं जड़ी तारावली हुती जाकी।
भौन की भीतिन पै चहुँओर,
मनीन की बेलैं खँची हुती बाँकी॥
मोती चुनै कहूँ बाल-मराल,
गहैं सिखी पुच्छ को नागनिया की।
नाहीं बनै कहते केहु भाँति सौं,
सोभा मनोहर पिच्छ-प्रभा की॥

९

मँजु-हरी-मनिरासि कौ टीलौ,
अकास त्यों नील मनीनिही को है।
ता मधि पूरनचन्द कौ बिम्ब,
लिख्यौ जो बिलोकत ही मन मो है॥
चन्द्रिका-पान करैं हैं चकोर,
वियोगिनि देखे नहीं तेहि सो है।
चोर लुटेरनि के तिमि वृन्द,
किये इरषा तेहि की दिसि जो है॥

१०

अंकित कौहू हुती सरिता,
जेहिको बहै भानु सुता समवारी।
खेवैं मलाहिनियाँ तरनी,
जेहि मैं एक बैठी हुती सुकुमारी॥
नासिका भाँर नचाय दृगें,
रही केसनि कौ ककई तै सँवारी।
जात बिकौ बिन दामन ही,
छबि बालम वाको निहारि निहारी॥

११

मोहि ही नन्दन को मन जात है,
जासु को देखते ही फुलवारी।
रम्य खुदी जेहिमैं नहरैं,
जिनमैं बहै स्वच्छ सुधा सम वारी॥
सो इति पाँति फुहारनि की,
जे रही सलिलैं अविराम निकारी।
जाकी अनूप लखै सुखमा,
मन में रथचैत्र है मानत हारी॥

१२

दीठि जहाँ लगि जात चली,
तहाँ सुन्दर छाय रही हरियारी।
बेलिन के तने चारु वितान,
खिली कुसुमावली हूँ अति प्यारी॥
रौसैं गुलाबनि की चहूँ ओर,
रहीं जहाँ मंजु सुगंध बगारी।
त्यौं ही सरोजनि के मकरंद सौं,
सौन लौं सोहि रह्यो सरवारी॥

१३

मंजरी मंडित मंजु रसाल की,
डारनि पै चढ़ी क्वैलिया गावत।
सीतल मंद सुगंध, समीर,
जहाँ हिय ते स्रम दूर भगावत॥
त्यौं खग-वृन्द कौ चारु अलाप,
सुधा रस स्रौननि मैं मनौ नावत।
हेम-कुरंग चहूँदिस दौरि,
उद्यान की सीमा अपार बढ़ावत॥

१४

कूजती कोकिल माती जहाँ,
बहु भाँति मलिंदन ही सौं घनौ रहै।
त्यौं ही नवेलिन बेलिन कौ,
जेहि मैं अतिमंजु वितान तनौ रहै॥

चंपक सेवती नाही जुही के,
प्रसूननि की सुखमा सौ सनौ रहै।
बारिद-नाद के वा बर बाग मैं,
बारहू मास वसंत बनौ रहै॥

१५

वाही उद्यान के सौध मैं लाय कै,
राजकुमार कौ रख्यो है रावन।
त्यौंही सुखैनै बुलाय तहाँ,
उपचार अनेकन लाग्यो करावन॥
होन लगे बहु भाँतिन सौं,
नृप-नन्दन के सिगरे मन भावन।
चंद के खंड-सी आलिन की,
अवली तेहि कौ मन लागी लुभावन॥

१६

गहबीले गुलाबनि के गजरा,
गुहिकै गरे मैं पहिरावै कोऊ।
घनसार, उसीर के मंजु प्रलेपनि,
अंगनि लै लै लगावै कोऊ॥
बर बीन मिलाय रँगीली तिया,
धरि अंक मैं मंजुल गावै कोऊ।
सुरनाथ सचौ के बिहारनि के,
नये गीत बनाय कै गावै कोऊ॥

१७

नील मयंक की घौल छटा मैं,
सखी मिलि चोर मिहीचिनी खेलैं।
औ' कबौं राजकुमार के कंठ,
मृणाल-सी मंजु भुजानि कौ मेलैं॥
सीरी समीर लगैं तन मैं,
लचकैं तिय मानौं हिलैं बर बेलैं।
जानि न पावती वै सखियानि,
कपोलनि चुम्बन को मग झेलैं।

१८

पै ये अमोद प्रमोद के साज,
न राजकुमार कौ लागत नीके।
एकै सुलोचना के बिन-ताहि,
लगै सबै विस्व के बैभव फीके॥
बावरौ सौं बनौ बैठो रहै,
अभिलाषनि कौ न कहै निज ही के।
कैसे लहैं चित नैकहू चैन कौ,
नैन-नराच बिंधे युवती के॥

१९

मानि के वैद्य-निदेस जबौं कोऊ,
तासु के ब्याह की बात चलावत।
तौ सिसकी भरि बारिद-नाद,
विलोचन मैं अँसुवा भरि लावत॥
पै हिय की वा छिपी भई बात,
न खोलि कै राजकुमार बतावत।
कै सुधि बीर सुलोचना की,
कैहू भाँति रहै मन कौ बहरावत॥

२०

बिकसौ अरविन्द लखे सर मैं,
तेहि पै कबौं दीठि न डारा करैं।
कदली जो मवास के पास लगी,
भरि नैननि वाकौ निहारा करै॥
निसि मैं निसानाथ बिलौकै नहीं,
लखि आरसी कौ हियौ हारा करैं।
पंखुरी पै गुलाब को मोतिन से,
अँसुआ वड़े बुन्दनि ढ़ारा करैं॥

२१

क्वार की पूनौ विभावरी में,
छिटको हुतो धौल मयंक उज्यारी।
काम - कृसानु - जगावन - हारि,
बहै लगी सीतल मंद बयारी॥

वारिद-नाद के गातनि में,
वह जाय लगी मनौ तीखी कटारी।
मंजु मयंक की मूरति देखि,
सँभारि गिरा यहि भाँति उचारी॥

२२

सोय गईं सखियाँ सिगरी,
तब राजकुमार हियै यौं विचारौ।
क्यों न मयंक सौं भेजौ सँदेस,
सुलोचना के ढिग यौं निरधारौ॥
लोक कौ है उपकारी महा,
निहचै दुख में लगि जैहैं सहारौ।
नाग-सुता कै निकेतन लौं,
पहुँचाय ही देहैं सँदेस हमारौ॥

२३

है यह तौ सुधा-धाम निरो,
अरु औषधि वृन्दनि कौ अधिकारी।
मंजु मयूखनि सौं यहि की,
निसि की सिगरी नसि जाति अँध्यारी॥
त्यौं बिकसावै कुमोदिनी कौ,
अपनी छिटकाय छटा उजियारी।
प्यास बुझावै चकोरनि की,
लगै चन्द्रिका याकौ सबै कौ पियारी॥

२४

आपने हाथनि वारिद-नाद,
गुलाबनि के पुहुपानि कौ तोरी।
ठाढ़ौ भयौ निसिनायक कै,
समुहे अपने कर संपुट जोरी॥
अर्घ दियो औ' चढ़ायो प्रसूननि,
औ' विनयो यहि भाँति निहोरी।
"राजकुमार ह्वै हौं ही दुखी,
अब पूरी करौ मनकामना मोरी॥

२५

वाम विलोचन हौ ही विराट के,
औ सिव-सीस पै बाम तुम्हारौ।
है गति मंद दिवाकर की जहाँ,
रावरौ होत तहाँ उजियारौ॥
लोकनि कौ उपकारी बड़ौ गुनि,
आपुही कौ यहि जोग विचारौ।
मो पै दया करि प्रान प्रियै,
पहुँचाय हो दीजौ सँदेस हमारौ॥

२६

पार करौ नित ही नभ मंडल,
है सिगरौ पथ जानौ तुम्हारौ।
तौ हूँ प्रिया के निकेत की राह,
बताइबौ है करतव्य हमारौ॥
जोतियौ स्यन्दन तीखे मृगानि,
न आरस कौ कहूँ लीजौ सहारौ।
बाम-बियोग के सागर में परौ,
या दुःखियै गहि पानि निकारौ॥

२७

एक ही राति में मेरौ सँदेस,
प्रिया ढिग तौ निहचै पहुँचैहौ।
औ तेहिकौ सबै हाल हवाल,
लिये इतै दूजे दिना चलि ऐहौ॥
नित्य कौ है परिचै तुम सौं,
यह जानि कै मित्रता आपु निबैहौ।
मीत कौ कारज सीस धरे,
तुम भूलि कहूँ नहीं चित्त चलैहौ॥

२८

नित ही तौ सुभ-काजनि के,
करिवे मँह विघ्न सदा परते रहैं।
वीर मनस्वी तऊ तिनके,
सिर पै निज पायन कौ धरते रहैं॥

या विधि सौं तिनपै विजै पाय,
मनोरथ पूरन वे करते रहैं।
आपने बाहुन के बल सौं,
हिये साहस औरन के भरते रहैं॥

२९

उत्तर ओर जबै चलिहौं,
उछरै लगि है तबै सिंधु कौ बारी।
कै तिन पै निज-पाद-प्रहारन,
बीचिन कौ तुम दीजौ विदारी॥
बारिद-बृन्द किते नभ मैं,
करिहैं गति कौ अवरोध तुम्हारी।
तौ बदरानि के ब्यूहन कौ,
करि जाइयौ पार करेजनि फारी॥

३०

आयसु सिंधु कौ देहौं अबै,
सकिहै नहीं मेरे निदेस कौ टारी।
धोवत है पग लंकपुरी के,
अतीव विनीत प्रजा है हमारी॥
ह्वै है सहायक सो तुमरो,
सबै मारग कौ स्रम दैहै निवारी।
बारिद हू सुनते मम नाम,
सबै तन-ताप हरैंगे तुम्हारो॥

३१

विस्नु के चक्र सौं जानि तुम्हैं,
नहिं भूलिहु राहु ग्रसै हित धैहे।
लाखन लौं अभिलापन के,
तुव ओर चकोर समोद चितैहैं॥
पै सित वीथीं मरीची लखे,
गति हाय वियोगिनी की कहा ह्वै हैं।
ओढ़नी स्याम निसा-तिय की,
घबराय कै भागन में फाट जैहैं॥

३२

दच्छिनी भारत मंजु त्रिकोन,
बिलोकियो सोभा रह्यो सुधि धारी।
नील गिरी के गुहानि हूँ की,
हरियो जनि भूलि के आपु अँध्यारी॥
किन्नर द्वन्द्व बिहार करैं तहाँ,
संग तियानि लिये सुकुमारी।
रावरी दीठि परे ते लजाय,
मरै अबला अकुलाय बिचारी॥

३३

याही तपोमयी भूमि में बैठि,
तपोधन इंद्रिय बेगनि बाँधैं।
दूसरे जन्म सुधारन काज,
भुजा को उठाय महा तप साधैं॥
बारि पँचागनि चारिहुँ ओर,
महेश्वर को मन में अवराधैं।
छ्वाय सुधा सौं सिंची किरनैं,
तिनके हिय की सबै पूजियो साधैं॥

३४

कै गति तीखी कुरंगनि की,
तुम बिंध्य-पहारिन पै चढ़ियौ ना।
कानन-दृस्य बिलोके बिना,
कतौं भूलिहू वा बनते कढ़ियौ ना॥
त्यों ही जबालि मुनीस के आश्रम-,
भूमि कौ त्याग कहूँ बढ़ियौ ना।
दोष न या बन देखिबै कौ,
बलि माथे हमारे कहूँ मढ़ियौ ना॥

३५

नाहर कौ रव घोर सुने,
जुपै रावरे स्यन्दन के मृग भागैं।
रोकेहुते केहु भाँति रुके नहिं,
हीतल में यौं महा भय पागैं॥

पीठ पै दे थपकी कर सौं,
पुचकारियो हौलैं सँभारि कै बागैं।
दंडक कानन मंजुल दृश्य,
निहारिबै कौं जेहितैं अनुरागैं॥

३६

भारत खंड की भूमि में जाय,
नये नये लोगनि आपु निहारियौ।
त्यों ही नवेलिन नारिन की दिसि,
आपुनी दीठि सँकोच सौं डारियौ॥
है यह रत्न की खानि धरा,
यहि की सुखमा पै तिहूँ पुर वारियौ।
पै सम वेदना याहि दिखाय कै,
आंखिन ते अँसुआनि को ढारियौ॥

३७

वीर - दिवाकर - बंसिन की,
कछू दूरि पै देखि वहै नगरी परै।
त्यों सरजू के कछारनि में,
दुहू छोरनि मुक्ति जहाँ बगरी परै॥
लै अनुरूप कौ पुन्य प्रताप,
प्रजा अमरावती कौ डगरी परै।
आपने धर्म सुकर्मन के,
बल सौं जमराज हूँ सौं झगरी परै॥

३८

टेढ़ौ परे मग उत्तर कौ,
जनि या डर सौं रहियौ मन मारिकै।
त्यों बढ़ियो अपने पथ पै,
सिव सैल के उन्नत शृंग निहारिकै॥
चंचल लोचनी कामिनियाँ,
लखि तो मुख मंजु रहैं हिये हारिकै।
क्रीड़ा नहीं तिनकी निरख्यो,
तौ लह्यौ फल कौन धौ जीवन धारिकै॥

३६

जच्छ तिया तहाँ हेम सरोज के,
मालनि कौ गुहै ल्यावती ह्वै हैं।
औ' मेरी भक्ति के भावन सौं,
गिरिजा के गरे पहरावती ह्वै हैं॥
सैल - सुता पद-पंकज - पुंजि,
अखंड सुहाग कौ पावती ह्वै हैं।
या विधि सौं सिगरी युवती,
निज जीवन धन्य बनावती ह्वै हैं॥

४०

सैल की सोभा निहारन में,
मन रावरो मीत कहूँ रमि जाय ना।
सीत की भीति सौं ह्वै कै बिहाल,
मृगानि की जोरी कहूँ थमि जाय ना॥
रावरौ हूँ करजाल को व्यूह,
तुषार परे ते कहूँ जमि जाय ना।
औ मम कारज सोधिबै कौ,
अनुराग तुम्हारो कहूँ समि जाय ना॥

४१

पूरब उत्तर में बढ़िकै,
कसमीर की घाटी बिलोकियो बाँकी।
केतिक केसर क्यारिन कौ,
मुख बाहर कै निज लीजियो झाँकी॥
बिस्व की सारी बिभूति समेटि,
रची विधि खानि तहाँ सुषमा की।
त्यों अमरावती कौ कोऊ खंड,
तुलै समता मैं न रंचक वाकी॥

४२

देव-तिया-सी किती बनिता जहाँ,
झील पै नावैं चलावती ह्वै हैं।
औ कोऊ भौंहनि बाँकी भ्रमाय कै,
प्रेमिन कौ ललचावती ह्वै हैं॥

वंज से हाथिन सौं अपने,
तिनके मुख बीरी खवावती ह्वै हैं।
त्यौं दरनो पर आँखि बचाय,
भुजा भरि कंठ लगावती ह्वै हैं॥

४३

पै कसमीरी तियानि के नेह मैं,
प्यारे सखा न कहूँ मढ़ि जैयौ।
कीजियौ ढीली कुरंग लगाम,
पमेर-पठारनि पै चढ़ि जैयौ॥
त्यौं ध्रुव-छोर पयोनिधि पार कै,
भूमि की सीमा सबै कढ़ि जैयौ।
होनै न पावै निसा अवसान,
सखा! तुम नागपुरी बढ़ि जैयौ॥

४४

धाय कै अंक मैं पौढ़ी निसंक,
सुलोचना कौ जु पै सोवत पैयौ।
तौ बिनती कौ इती मम मानि कै,
प्रान पिया कौ न नैकु जगैयौ॥
मंद-ही-मंद सुधा-रस-बिन्दु;
सरोज से आनन पै बरसैयौ।
यौं सुकुमारि की नींदि निवारि,
हमारो सनेह-संदेसो सुनैयौ॥

४५

राखत आपने प्रानन कौं,
हिय लाखन सौं अभिलाषनि धारी।
थोरेहि मासनि कौ अब आर,
बिताय दै माँग भरी सुकुमारी॥
लंक मैं लैहैं तुम्हैं बुलवाय,
सुनैं सबै हाल जबै महतारी।
खोय कै दुःख के द्यौसनि कौ,
फिरि हैं फिरि सौं वह भाग्य हमारी॥

४६

गति रावरी जैसे सखीन के साथ,
अबाध हुती पहिले हूँ उतै।
निहचै मम मातु के जानत ही,
वह होयगी काल कछूक बितै ॥
रथ-चक्र के नेमि फिरै तर ऊपर,
त्यौं मग मैं चलिबे के हितै।
क्रम काल कौ लै जग त्यौं नर की,
फिरती रहै भाग्य की रेखा नितै ॥

४७

तेरे बियोग के वारिद हाय,
रहैं इमि बारिदनाद कौ घेरे।
मातु पिता गुरु लोगनि हूँ कौ,
प्रताप सं बैन लगै तेहि केरे ॥
कोऊ कहै लग्यौ भूत इन्हैं,
मदनज्वर है इन्हैं डारत पेरे।
यों हीं सुनौ औ सहौ सबके,
बिस सौं भरे बैननि साँझ सबेरे ॥

४८

नाक पताल लौं वायु ले बेग सौं,
हैं जिनके बल सौं हम धाये।
ह्वै सोई हाय गयो अब छीन,
धरा पर पाँय उठे न उठाये ॥
डाटिकै कैतिक बार भवानी कै,
वाहन हूँ कौं गुमान गिराये।
सेवकहू न पुकार सुनै अब,
वारिद-नाद बृथा ही कहाये ॥'

४९

सोवत मैं एहि भाँति मयक,
संदेस सुलोचना को दियौ आई।
औ तेहि को घननाद की ओर तं,
धीर सबै विधि दीन्हों बँधाई।

बाल हू की दयनीय दसा,
सबै आपनी आंखिन सौं लखि पाई।
आठक याम कियो बिसराम,
प्रतीची दिसी मैं कह्यौ पुनि आई॥

५०

भोर ही ते साँझ लौं निसाकर के आवन की,
बाट रह्यो जोवत कुमार अति चाय कै।
त्यों ही बिधु-बिम्ब जबै रंचक लखान लाग्यो
ठाढ़ो तासु सामुहे भयो है सिर नाय कै॥
सुनि कै कुसल-बृत्त भामिनी-सुलोचना कौ,
आनँद-पयोनिधि में डूब्यो उतराय कै।
गौरी-गिरिनाथ-पद बंदत मनै ही मन,
आयो निज सौध को अमित हरसाय कै॥

आठवाँ सर्ग

१

एक दिन सानंद दसमुख अर्चना गृह जाय।
बैठि आसन रह्यौ मौलि-मयंक-सिव-पद ध्याय ॥
यदपि मूँदे नैन तौ हूँ पर्‍यौ लखि उजियार।
जग्यौ वाके हीय तल में नयौ एक विचार ॥

२

सिवहि आवत जानि 'जय' सहसा उठ्यौ मुख बोलि।
ध्यान कौ तजि दियौ वा नै युगुल लोचन खोलि ॥
लख्यौ पूरब दिसि रह्यौ है फैलि अमित उजास।
यदपि ऊषा-काल में नहिं भयो भानु-प्रकास ॥

३

लग्यौ सोचन रवि उदय को अबहि नहिं यह काल।
है तदपि परतच्छ दीसत तेज पुञ्ज बिसाल ॥
दृष्टि-विभ्रम भयौ मोकौ लखत प्राची मांहिं।
बहुरि कीन्ह विचार कोऊ भूल कीन्ही नांहि ॥

४

दिवस-मनि निज पंथ में हैं वक्र गति सो जात।
तेज पुञ्ज परन्तु सीधी चलत मोहि लखात ॥
अनल हू की सिखा ऊँची उठत है बर जोर।
पै रह्यौ यह आय दीसत मोहि माहि की ओर ॥

५

धाम की वह रासि आगे बढ़त परी लखाय।
देह-धारी-सरिस कछु-कछु फेरि दीस्यौ आय ॥
लगे अंग दिखान तब है मनुज लीन्हौं जानि।
है मुनीस पुलस्त्य आवत लियो सो पहिचानि ॥

६

अमित प्रनति दिखाय आसन दियौ अपर बिछाय।
समुद दीन्ह्यौ अर्घ्य परस्यौ जुगुल पंकज पाँय ॥
निज कमंडल सौं महामुनि सलिल पावन लीन्ह ।
सीस पै दसकंठ के पुनि छिरकि सीकर दीन्ह ॥

७

तब सनाल सरोज सौं दससिर दुश्रौ कर जोरि ।
कहन लाग्यौ बचन या विधि अमिय-रस सौं घोरि ॥
बाल की बाचालता प्रभु सामुहे अभिमान ।
बिस्व जिनके हेतु कर-धर-बदर के उपमान ॥

८

नसत हैं सब पाप पूरब पुन्य होत उदोत ।
आपु-से तापस जनन कौ दरस सब-सुख-सोत ॥
आजु है निज-बंस-जन पै करी कृपा अपार ।
कियौ पावक लंक, खोल्यौ दया कौ भंडार ॥

९

कह्यौ मुनि तपसीन को नहिं होत जग सौं काम ।
तऊ कोमल-भाव उनके रहत हैं हिय धाम ॥
तुम धनद हौ बन्धु दोऊ लगत पौत्र हमार ।
करत हौं मैं तदपि वासौं अधिक तुमरौ प्यार ॥

१०

त्रिदस पति जमराज लौं वह ह्वै गयौ दिगपाल ।
देवगन हैं मीत वाके तथा विभव-बिसाल ॥
पै न जानी रहत वे तुम्हरे सदा प्रतिकूल ।
सोचि समुझि भविष्य मेरे हिये उपजत सूल ॥

११

कह्यौ दसमुख "मोहि है निज भाग्य पै संतोष ।
देव ही कौ दोष सो गुनि होत मोहि न रोष ॥
कहत मो कौ रच्छ अरु यह है कहावत जच्छ ।
सकल सो वृत्तान्त मुनिवर कहहु मम परतच्छ" ॥

१२

कह्यौ मुनिवर "सुनहु निज पुरखानि कै अब हाल।
बिस्व बन्दित रहे हैं जे त्रिजग अरु तिहुं काल॥
पितृ-कुल-गौरव सुनहु जो विदित सब संसार।
मातृ-कुल कौ हाल हूँ कहि हौं सहित बिस्तार॥

१३

विष्नु-नाभि-सरोज है मम जनक सम्भव हेत।
है सरस्वति मातु मेरी ज्ञान सबको देत॥
मोहि दियो तृण-बिन्दु-रिषि ने निज सुता करि हर्ष।
भये वासौं विश्रवा जब बहुत बीते वर्ष॥

१४

देव वरर्णिनि सुवन सोई ह्वै गयौ धनपाल।
कैकसी के पुत्र हौ तुम भये लंक-भुवाल॥
अब सुनहु निज मातृ-कुल कौ विभव अरु विस्तार।
भये जामै एक से बढ़ि एक वीर उदार॥

१५

भरद्वाज मुनीस दुहिता देव-वरर्णिनि नाम।
अरु सुमाली की सुता जो हुती सब गुन-धाम॥
कैकसी-ससि-खंड-सी हो सबहि भांति ललाम।
भई दोऊ आय मुनिवर बिश्रवा की वाम॥

१६

राकसन मैं भये हेति, प्रहेति अति बल-धाम।
ह्वै प्रहेति विरागि राख्यौ जगत सौं नहि काम॥
काल-भगिनी-भई भूपति हेति की प्रिय वाम।
भयौ वाकौ पुत्र विद्दुत-केस जाकौ नाम॥

१७

बदन विद्दुत केस लाग्यौ जलज की अनुहारि।
साल कंटकटा भई वाकी परम प्रिय नारि॥
जन्म वाके गर्भ सौं तब लियौ भूप सुकेस।
ग्रामिणी की सुता देववतीहि वर्यौ नरेस॥

१८

भये त्रेता अनल के सम तासु के त्रय पूत ।
माल्यवान, सुमालि, माली, ओज-तेज-अकूत ॥
नर्मदा गन्धर्विणी जो हुती इच्छा-जात ।
तीनि कन्या तासु पटतर जग न अपर लखात ॥

१९

सुन्दरी अरु केतुमति लघु हुती वसुधा नाम ।
सारदा वरदा रमा-सी रूपरासि ललाम ॥
सुन्दरी-कर-कंज पकर्यौ माल्यवान महीप ।
त्यौं सुमाली केतुमति कौ नहिं बंस-प्रदीप ॥

२०

गयौ माली साथ ह्वै वसुधा कुँवरि कौ व्याह ।
होन लागे लंकपुर मैं नितहि नवल उछाह ॥
सुन्दरी के गर्भ सौं उपजे सुघर सन्तान ।
वज्रमुष्टि, विरूपलोचन, सुप्तहन बलवान ॥

२१

मत्त अरु उन्मत्त दुर्मुख, यज्ञकोप, सकाम।
और अनला जासु के सम जग न दूजी वाम ॥
भये भूप सुमालि के सुत दस महा बल धाम ।
तथा कन्या चारि जिनके लेहु अब सुनि नाम ॥

२२

कालिका मुख, दंड कम्पनि, विकट प्रघस प्रहस्त ।
धूमलोचन, भासकर्ण, सुपार्श्व, संह्राद मस्त ॥
कैकसी, पुष्पोत्कटा, राका महा छबिधाम ।
और एकहि सुता कुम्भीनसी जाकौ नाम ॥

२३

रानि वसुधा गर्भ सौं वर सुवन उपजे चार ।
अनल,हर,सम्पाति, अनिलहु, विमल दिव्य विचार ॥
कैकसी के सुवन हौ दसकन्ध तुम बल-धाम ।
आपने पुरखानिहू के सुन लियो तुम नाम ।'

२४

यच्छ राकस हुते जद्यपि बन्धु आपुस मांहि।
तदपि बिषम-बिरोध उनमें रहत रह्यौ सदाहि॥
यच्छ हे नय-निपुन तिनके हुते देव सहाय।
बाहु तप-बल पाय राकस तिन्है पै न डराय॥

२५

एक तिन मिलि यच्छ देवन कह्यौ हरि सौं जाय।
"बाहु-बल-दर्पित-निसाचर महि हमैं सताय॥
हमहिं बरुन कुबेर यम, ससि सूर अरु देवेस।
हमहिं मानहु विष्नु अज, इमि कहत रहत हमेस॥

२६

देत ही तुम रहौ हमकौ नितहिं-प्रति मष भाग।
चरन-पंकज मैं हमारे करहु नव अनुराग॥
जुपै अनुसासन हमारा मानिहौ तुम नांहि।
रहि सकत न त्रिलोक मैं गुनि लेहु सो मन मांहि॥"

२७

देव-गन कौ है सदा मष-भाग पै अधिकार।
हरत राकस सकल वाकौ करत कछु न विचार॥
आपु हौ रच्छक हमारे करहु कोउ उपाय।
राकसन सौं छीनि सो अब देहु हमहिं दिवाय॥"

२८

कह्यौ हरि "तप करि निसाचर विधिहि लियो रिझाय।
मन चह्यौ बरदान दैवे गये या लगि पाय॥
एक तौ तिनकी सरीरिक सक्ति है अप्रमेय।
तथा तपबल सौं भये हैं समर माँहि अजेय॥

२९

कौन विधि करि सकत तिनकौ आपु लोग अनिष्ट।
ह्वै निसाचर कुल गयौ है सबहिं भाँति वरिष्ठ॥
तुमहि सब मिलि सोचि मोसौं कहहु सोउ उपाय।
जेहि किये तैं देव-कुल कौ भलौ तौ ह्वै जाय॥"

३०

कह्यौ देवन एक स्वर सौं "और कोउ न उपाय।
चक्र सौं सिर काटि उनके देहु आपु गिराय॥
सकल राकस-वंस कौ करि देहु प्रभु संहार।
बहुरि पावैं देव-गन मष-भाग पै अधिकार॥

३१

कह्यौ हरि "यह काम काहू भाँति सीधौ नांहि।
सिमिटिहैं रन हेतु जिते अदेव हैं जग मांहि॥
होयगौ देवन-अदेवन कौ समर अति घोर।
देव अथवा रच्छ-कुल कौ जाइहै ह्वै छोर॥

३२

सोचि पहले जुद्ध के सिगरे कुफल परिनाम।
तब करहु राकसन सौं तुम मिलि सबै संग्राम॥
अवसि करिहैं रावरी हम समर मांहि सहाय।
देव-सेना सकल संग रहित सजावहु जाय॥"

३३

बोलि जय-जय विष्नु की सब देव लौटे धाम।
दूत-मुख इमि कहि पठायौ "अब करौ संग्राम"॥
संख दुन्दुभि बजन लागी देव सेना मांहि।
भये सुभट तैयार सिगरे बार लागी नांहि॥

३४

दूत-मुख सौं सुन्यौ जब मलिवान नृप सब हाल।
आपु हू तैयार संगर हेतु भयौ उत्ताल॥
कह सुमाली "विष्नु अज सौं वैर हमरौ नाहि।
कहा उनकी परी जो वै लरन हम सौं जाहिं॥

३५

देत है मष-भाग-भूखे-देव-गन उकसाय।
हरिहु बातन मांहि तिनकी जात कबहूँ आय॥
मूल सब आपत्ति के हैं करत नित अपकार।
करहु याते देव-गन कौ आजु अवसि संहार॥

३६

ठानि इमि मन मांहि रन-दुन्दुभि दई बजवाय।
युद्ध-हित सन्नद्ध भौ राकसन कौ समुदाय॥
विविध वाहन पै सवारी किये अगनित वीर।
लरन देवन सौं चले राकस महा-रन-धीर॥

३७

विविध आयुध धारि खगपति-पीठ भये सवार।
आयें सोभित चक्रधर हरि देव-सेन-मँझार॥
पाँच-जन्य बजाय कीन्ह्यौ समर-भैरव घोर।
तथा बरसन लगे तीखन बान चारिहुँ ओर॥

३८

भगत सेना देखि माली खैंचिकै निज चाप।
लग्यौ बरसावन कठिन सर करि हिये अति दाप॥
भभरि भागे देव, हरिने दीठि करि निज वक्र।
काटि माली सीस लीन्ह्यौ, छांड़ि कैं निज चक्र॥

३९

बन्धु कौ वध निरखि इमि मलिवान अतिहि रिसाय।
गदा खगपति सीस पै करि कोप मारी जाय॥
और हरि कै वच्छथल मैं प्रबल मुष्टिक मारि।
दियो दोहुन वीरवर संग्राम महि सौं टारि॥

४०

गरुड़ हू निज-प्रबल-पंखन करी पवन अपार।
अरु समरि हरि नै करी निज-सक्ति प्रखर प्रहार॥
सो लगी मलिवान कै हिय गिरयौ वह मुरझाय।
लै सुमाली गयौ सबकौं रसातल दुख पाय॥

४१

या विधि राकस वृन्दन कौ,
हरि नैं रन खेतन मैं बिचलाय कै।
त्यौं ही कुबेर को लंक दई,
सुर लोगनि के सब काज सजाय कैं॥

रावन कौ कथा एती सुनाय,
तथा सिष आसिष दै हरषाय कै।
आपने आश्रम कौ मुनि वर्य,
पुलस्त्य जू आये महा मुद पाय कै॥

नवाँ सर्ग

उत मुनि प्रवर पुलस्त निज आस्रम पहुँचे जाय।
दसकन्धर बन्धुन सहित आसन बैठ्यौ आय॥

१

लग्यौ करन हिय मांहि विचारा।
नानहि समर विष्नु संहारा॥
देवन मिलि उनकौं उकसायौ।
अरु अति - प्रबल - बैर बँधवायौ॥
देवहि सब आपति के कारन।
इन ही कौ अब करौ संहारन॥
ह्वै ही धनद गयौ दिगपाला।
मानत मोहि तुच्छ तिहुँ काला॥
याते ताहि प्रथम संहारौ।
देवन दर्प समूल उपारौ॥
सम विधि सौ निज बलहि बढ़ावौ।
अरु साका तिहुँ लोक चलावौ॥
भूप सुकेस सरिस बल धारी।
भयौ नाहि कहुँ विस्व मँझारी॥
याते बड़ो लाभ कोउ नाहीं।
फहरै विजय-धुजा जग माँहीं॥
अस निज मन गुनि दस बदन, लै मंत्रिन की राय।
तिहुँ लोकन की विजय हित, डंका दियौ बजाय॥

२

बाजी समर दुन्दुभी जबहीं।
सैनिक लगे सजन सब तबहीं॥

गज, रथ, ऊँट, वृषभ, बहु जाती।
सेना सजी बरनि नहिं जाती॥
सुक सारन रनधीर सहोदर।
धूम-नयन मारीच धनुर्धर॥
वीर-बाहु नर-अंतक वीरा।
निसिचर विकट महा रनधीरा॥
जेते हुते असुर जग माँहीं।
अस को नहिं तयार जो नाहीं॥
थोरेउ सुभट राखि निःसंका।
सौंपि विभीषन कौ गढ़ लंका॥
दससिर चल्यौ विजय मन दीन्हें।
राकस-विकट-कटक सँग लीन्हें॥
माल्यवान वरवीर सुमाली।
कियौ पयान धरा सब हाली॥
चल्यौ घटकरन समर-हित, कज्जल कुञ्जर समान।
मेघनाद आगे गयौ, लीन्हें कर धनुबान॥

३

चल्यौ प्रहस्त बजाय निसाना।
अलकापुर दिसि कियौ पयाना॥
धनपति समाचार जब पायौ।
सकल यच्छ सेना सजवायौ॥
सब संयोग-कटक आधीना।
चले यच्छ-गन-समर-प्रवीना॥
सेना दुवौ भिरी रन जबहीं।
जलद गँभीर भयौ रव तबहीं॥
केहरि-नाद सुमाली कीन्हा।
तीछन बान फाँक धर दीन्हा॥
उत मनिभद्र प्रचारन आयौ।
चहुँ दिसि बान बुन्द झरि लायौ॥
वे सुमालि सब विसिप निवारयौ।
ताकौ सीस काटि महि डारयौ॥

सूर्य भानु निज दंड प्रहारा।
ताकौ धूमनयन संहारा ॥
इमि निज दल विचलित सुन्यौ, जब धनपाल कुबेर।
आये वे रन खेत में, नैकहु लगी न देर॥

४

स्वर्न धुजा रथ पै फहरानी।
आये धनद गये सब जानी॥
रनतें यच्छ भभरि जे भागे।
लौटे बहुरि सकल भय-त्यागे॥
कोपि धनद निज धनुप सँभारा।
लागे बरसन बिसिप अपारा॥
दससिर तिनहिं सकोप प्रचारा।
अरु निज गदा सीस पर मारा॥
गदा घाव यच्छेस सँभार्यौ।
तीपन सर दससिर सिर मार्यौ॥
पै न नैकु दसकन्धर डरेऊ।
सर संधानि महारन करेऊ॥
बज्र बान धनपति सिर मारा।
गिरे अवनि नहि रह्यौ सँभारा॥
तब कुबेर इमि मूर्छित भयऊ।
स्पन्दन सपदि सूत लै गयऊ॥
भगे यच्छ रन छांड़ि इन्ह विजय संख धुनि-कीन्ह।
पुहुप-यान मनि-कोष लै आगे को पग दीन्ह॥

५

इमि धनदहि रन मांहि हराई।
सरवन गयौ निसाचर राई॥
इमि-गिरि-शृंग रुधिर कैलासा।
हर-गिरिजा जहँ करत निवासा॥
गनप नंदि षट-बदन कुमारा।
सानँद रहत लहत सुख सारा॥
वीरभद्र भृंगी अरु भैरव।
मूषक केहरि स्वान महा रव॥

तेहि थल गयौ निसाचर नाहू।
चन्द्रहि ग्रहन चल्यौ जनु राहू॥
जदपि कामगति पुष्प विमाना।
गयौ तदपि ह्वै अचल समाना॥
सोचन लग्यौ निसाचर राजा।
चलत न यह विमान केहि काजा॥
तब मंत्रिन इमि कह्यौ विचारी।
हैं विमान धनपाल सवारी॥
धनपति की इच्छा बिना यह न सकत कहुँ जाय।
परम निपुन चालक चतुर, सके न ताहि उड़ाय॥

६

वामन-तनु वानर-मुख-वारे।
नंदी फिरत सूल बर धारे॥
कह कैलास वास सिव केरा।
खगपति हू न करत इत फेरा॥
तिनकौ निदरि चहत तुम जाना।
याही लगि नहिं चलत विमाना॥
सुनि इमि वचन रोष सौं पाग्यौ।
तब दसकन्ध कहन अस लाग्यौ॥
जौ रोकहि गति यहै हमारी।
डरिहौं याहि समूल उपारी॥
अस कहि जुगल ठोंकि भुजदंडा।
आगे बढ़्यौ वीर बरिबंडा॥
अरु दोऊ निज पाँव जमाई।
गिरिहि उपारन लग्यौ रिसाई॥
पहिले ताहि समूल हलायौ।
अरु भुज बल करि बहुरि उठायौ॥
गुह गनेस अरु केहरी, नन्दी भृङ्गी संग।
भय बस काँपे, गौरि कौ लीन्हौ संभु उछंग॥

७

बल बिलोकि संकर हरखायौ।
दिन बुलाय तेहि वचन सुनायौ॥

"तुम सम सुभट न कोउ जग आना।
अब सुत माँगि लेहु बरदाना॥"
दससिर कह्यौ "कृपा जो कीजै।
पहिले विजय—पत्र लिखि दीजै॥
बिनु जीते रन मौलि—मयंका।
वर माँगत बड़ कुलहि कलंका॥"
कह्यौ संभु "हम तुम सन हारे।
ह्वै है विजय प्रसाद हमारे॥"
अस कहि चन्द्र-हास तेहि दीन्हा।
सिर धरि पानि अभय पुनि कीन्हा॥
अरु पसुपति प्रयोग सिखरायौ।
तासु निवारन मंत्र बतायौ॥
दसमुख सिव-पद-सीस नवाई।
चढ़ि वर पान चले हरषाई॥
या विधि सौं निज बाहु बल, गिरि कैलास उठाय।
रावन तब आगे बढ़्यौ, संकर आसिष पाय॥

८

सेना सहित चल्यौ दस आनन।
जहाँ उसीर- बीज कौ कानन॥
तहाँ करत तप मारुत राजा।
सम्वर्तन साजत मप-साजा॥
हुतौ बृहस्पति कौ वह भाई।
रह्यौ नरेसहि यज्ञ कराई॥
तासौं कह्यौ निसाचर राई।
आयौं इतै कुवेर हराई॥
अब उठि कै मोसौं रन कीजै।
अथवा विजय-पत्र लिखि दीजै॥
तब कर पकरि पुरोहित भाष्यौ।
"नृप तुम करन कहा अभिलाष्यौ॥
अब न भूलि रन कौ मन दीजै।
निज कर यज्ञ भंग जनि कीजै॥
याते समुझि करिय नृप सोई।
जाते काज नष्ट नहिं होई॥"

सुनत पुरोहित के वचन, रह्यौ भूप अरगाय।
हते राकसन मुदित मन दीन्ह्यौ संख बजाय॥

९

दसमुख हरषि बढ़्यौ पुनि आगे।
अपर भूप मिलि सोचन लागे॥
तप बस फिरत वीर वरि बंडा।
लिये साथ निज चमू प्रचंडा॥
जौ याकौ रन माँहि प्रचारैं।
तौ यहि सौं निहचै हम हारैं॥
अस मन सोचि 'सुरथ' अरु 'गाधी'।
गवय आदि बैठे चुप साधी॥
'पुरूरवा' अरु नृप 'दुष्यंता'।
नहिं जिनके बल कौ कछु अन्ता॥
तासौं हार मानि सब लीन्ह्यौ।
अरु तेहि विजय-पत्र लिखि दीन्ह्यौ॥
जीतत अवनि अवध चलि आयौ।
नृप 'अनिरन्य' समर मन लायौ॥
कीन्ह्यौ भूप घोर संग्रामा।
पै नहिं जीति सके बल धामा॥
वीर प्रवर अनिरन्य कौ इमि रन माँहि हराय।
दच्छिन दिसि दसमुख चल्यौ विजय-पत्र लिखवाय॥

१०

वसुधा के सब नृपन हराई।
रावन चल्यौ महा मुद पाई॥
नभ-पथ परम प्रकास बढ़ावत।
दस सिर लख्यौ देव रिषि आवत॥
दूरहि तें पुनि कियो प्रनामा।
आसिष दियौ होय मन कामा॥
रावन कह कोउ या जग माँही।
मम-रन-साध पुरायौ नाहीं॥
कहहु मुनीस "कहाँ अब जाऊँ।
जासौं जयति-पत्र लिखवाऊँ"

कह मुनीस "तुम सब जग जीते।
तउ जन रहत मीचु-भय-भीते॥
याते रन मह जमहि प्रचारौ।
वासौ जीव-लोक उद्धारौ॥"
रावन कह्यौ सोई हम करिहैं।
असि जमहि रन मांहि संहरिहैं॥
जग - नासक यहि काल कौ हम करिहैं संहार।"
निज मन मैं तब देवरिषि, लागे करन विचार॥

११

जमपुर तब नारद चलि आये।
रवि सुत कौ सब हाल सुनाये॥
कह्यौ "दसानन सबन हरावत।
रन हित सब नगरी कह आवत॥
ह्वै सतर्क अब आयुध धरहू।
भुज-बल-दर्प तासु कौ हरहू॥"
प्रेत नृपहिं या विधि समुझाई।
ब्रह्म लोक गवने रिषि राई॥
दसमुख कौ सुनि निजपुर आवन।
लगे सैन जमराज सजावन॥
मृत्यु, पास, मुद्गर, अरु दंडा।
चले साथ लै अस्त्र प्रचंडा॥
सात दिवस अतिसै रन भयऊ।
चतुरानन तहँ आवत भयऊ॥
अरु जम कौ बहु विधि समुझायौ।
तिनहि युद्ध सौं विरत करायौ॥
जमहूँ सौं दसमुख लियौ, विजय-पत्र लिखवाय।
हरषित चल्यौ पतालपुर, निज जय-संख बजाय॥

१२

तब जलेस को जीतन काजा।
घुस्यौ सिन्धु मँह निसिचर राजा॥
भोगपुरी कहँ सो चलि गयऊ।
वासुकि तेहि आगे बढ़ि लयऊ॥

मनिपुर कौ दसमुख तब आयौ।
देखि नगर अति अचरज पायौ।
रहत निवात-कवच तेहि ठामा।
अतुलित वीर अचल-संग्रामा॥
तिनके संग संधि ठहराई।
अस्मा-नगर गयौ हरषाई॥
कालकेय तहँ अति बलधामा।
तिन सौं भयौ घोर संग्रामा॥
अन्धाधुन्ध रन भयौ अबूझा।
बिद्‌दुत जोइ तहाँ बढ़ि जूझा॥
याकौ हाल न रावन जान्यौ।
पै सब जानि महा दुख मान्यौ॥
बिनु जाने निज भगिनिपति कीन्ह्यौ आजु निवास।
यदपि विजय पायौ तहाँ पै हिय रह्यौ हरास॥

१३

रावन कियौ पताल प्रवेसा।
करत राज जहँ बरुन नरेसा॥
दूत एक तेहि निकट पठायौ।
जल नृप सौं वह जाय सुनायौ॥
"आयौ इतै निसाचर राजा।
साजहु सकल समर के साजा॥
ताके संग युद्ध चलि कीजै।
अथवा जयति-पत्र लिख दीजे॥
भाख्यौ बरुन न समर हम करिहैं।
विजय-दर्प वाकौ सब हरिहैं॥
अस कहि विकट कटक सजवायौ।
'गौ', 'पुस्कर', तेहि साथ पठायौ॥
दोऊ सेनप अति बलधारी।
कियौ समर राकसन प्रचारी॥
दसकंधर नहिं नैकु सकान्यौ।
महायुद्ध जलपति सौं ठान्यौ॥
पै दसमुख सों हार निज, जानि लियौ जलराय।
औ 'प्रहास' सौं सन्धि कौ दियौ संदेस पठाय॥

१४

चन्द्रलोक दसबदन सिधायौ।
ससि ढिग रन-हित दूत पठायौ॥
पै विधि कौ निदेस तिन मान्यौ।
वाके संग समर नहिं ठान्यौ॥
पच्छिम सिन्धु माँहि पुनि गयऊ।
कपिल मुनिहिं तहँ देखत भयऊ॥
देवदूति के चरनन लागी।
लौट्यौ अवध अमित अनुरागी॥
यौवनासु - सुत - नृप - मनधाता।
सोई हुतौ तासु परित्राता॥
तेहि दसमुख रन हेतु प्रचारा।
भयौ युद्ध तेहि संग अपारा॥
सब बिधि देखि प्रजा की हानी।
आये तहँ पुलस्त मुनि ज्ञानी॥
तिन दसमुखहिं बहुत समुझायौ।
अरु तेहि कौ रन-विरत करायौ॥
मानि पितामह कौ लियौ, दसकन्धर अनुरोध।
दियौ अवध-महिपाल सौं या लगि त्यागि विरोध॥

१५

रावन लंक हुतौ नहिं आयौ।
अरु दिग-विजय-करन-मन लायौ॥
राकस एक जासु मधुनामा।
अरु जो हुतौ अचल संग्रामा॥
लंका कोऊ काज बस आयौ।
ताकौ स्वागत भयौ सुहायौ॥
आदर बहुत विभीपन कीन्हा।
अपनेहि गृह निवास-हित दीन्हा॥
पै तिन करी अमित सठताई।
कुम्भी नसिहि लियौ फुसिलाई॥
औसर पाय लंक गढ़ त्याग्यौ।
अरु निज साथ ताहि लै भाग्यौ॥

जब यह हाल विभीषन जान्यौ।
तौ अपने मन माहि लजान्यौ॥
अरु दससिर-ढिग दूत पठायौ।
जब यह समाचार सुनि पायौ॥
तुरतहि निज सेना सहित मधुपुर कियौ पयान।
लियौ घेरि वाको नगर, छेड्यौ युद्ध महान॥

१६

सुनि निज पुर दससीस अवाई।
कुम्भीनसी तहाँ चलि आई॥
सैनिक ताहि गुप्तचर जाना।
लाये पकरि जहाँ मलिवाना॥
तिन अपनी दुहिता पहचानी।
अरु तिनसौं बोल्यौ इमि बानी॥
"दसमुख-सिविर याहि पहुँचावौ।
बहुरि करौ जो आयसु पावौ॥"
आई लंक नाथ ढिग बाला।
ठाढ़ी भई नाथ पद-भाला॥
अरु इमि वचन कह्यौ कर जोरी।
"छमिये बन्धु! विनय सुनि मोरी॥
जीवन दान याहि अब दीजै।
निज कर मोहि विधवा जनि कीजै॥"
दससिर तासु विनय मनमानी।
ताके संग गयौ रजधानी॥
एक वर्ष तहँ वास करि, मधु सहायता पाय।
चल्यौ अमरपुर विजय हित, रावन संख बजाय॥

१७

दसमुख लियौ अमरपुर घेरी।
लिये साथ निज सेन घनेरी॥
दियौ सुरप ढिग दूत पठाई।
सो तिन सौं इमि कह्यौ सुनाई॥
"जम कुबेर जलराज हराई।
लंकापति पहुँच्यौ रन आई॥

तासौं आपु समर उठि कीजै।
अथवा जयति-पत्र लिखि दीजै॥"
सो सुनि अति सुरेस अनखायौ।
अरु तासौं इमि कहि पठवायौ॥
होति प्रभात अवसि रन करिहौं।
सकल गर्व राकस कौ हरिहौं॥
सुरन बुलाय अमर पति बोले।
मधुर हास सुनि कुण्डल डोले॥
"देखहु रावन केरि ढिठाई।
धस्यौ मूढ़ अमरपुर आई॥
तुम सब मिलि अब राकसन या विधि देहु छकाय।
जातुधान पावै कोऊ जियत लंक नहिं जाय॥"

१८

सुरपति वचन सुन्यौ जब काना।
देवन अमित हर्ष मन माना॥
द्वादस भानु, पवन उनचासा।
ग्यारह रुद्र अष्ट वसु भासा॥
बरुन कुबेर जमहु पगु धारे।
जे पहिले रावन सौं हारे॥
भयौ जयन्त सैन उपनायक।
अरु षटमुख कौ बन्यौ सहायक॥
होत प्रभात समरथल आये।
दोउ सैनप निज व्यूह बनाये॥
समर अरम्भ संभु-सुत कीन्ह्यौ।
तेहि घननाद उतर बढ़ि दीन्ह्यौ॥
ग्यारह रुद्र अमित बल-भारे।
ज्वलत-त्रिसूल प्रबल-कर धारे॥
कुंभकरन तिन सबन प्रचारयौ।
करि अति कोप गदा सिर फारयौ॥
संभु-तेज-पूरित सबै, मुरे न पै रन मांहि।
तौहू समर उछाह कछु रह्यौ हिये मैं नांहि॥

१९

भिरयौ अदित्यन संघ सुमाली।
एकौ बार जात नहिं खाली॥
फिरि सवित्र रन ताहि प्रचारयौ।
गदा घाव ताके सिर मारयौ॥
देवन सँग रन भयौ अबूझा।
लड़तहि - लड़त सुमाली जूझा॥
सुरगन मुदित संखधुनि कीन्ह्यौ।
दसमुख कोपि समर मन दीन्ह्यौ॥
अरु सुरपतिहि आय ललकारा।
लाग्यौ मारन बान अपारा॥
मरुत, अष्टवसु दससिर घेरो।
लागे करन मारु बहुतेरी॥
पै दसकंठ न नेकु सकान्यौ।
सर संधानि प्रबल रन ठान्यौ॥
तब जयन्त निज रथ दौराई।
बन्यौ आय सुरनाथ सहाई॥
आवत निरखि जयन्त कौ मेघनाद हरखाय।
ताहि प्रचारयौ सिंह सम, सायक चाप चढ़ाय॥

२०

रावन-सुत जयन्त बल धामा।
लागे करन और संग्रामा॥
सायक अमित जयन्त प्रहारे।
दससिर-सुमन काटि सब डारे॥
अरु सकोपि कीन्ह्यौ सर-जाला।
करि फुंकार चले जनु व्याला॥
हाहाकार सैन मँह भयऊ।
तेहि पुलोम निजपुर लै गयऊ॥
या विधि बान बुन्द झरि लायौ।
सकल देव - सेना विचलायौ॥
पुनि सकोपि या विधि सर साध्यौ।
नाग पास इन्द्रहिं गहि बाँध्यौ॥

तिनहि बाँधि जय संख बजाई।
चल्यौ लंक अति हिय हरखाई॥
तीनिहु लोकिन जीति इमि विजय-धुजा फहराय।
दसमुखहू लंका चल्यौ जस दिगन्त लौ छाय॥

२१

छायो सुजस तिहुँ लोक हीय-उछाह नहिं बरनत बनै।
पूज्यौ भुजा घननाद की मलिआन अति हर्षित भनै॥
तिंहु लोक चौदह भुवन दस सिर की दुहाई तब फिरी।
नित करति नृप सौं नेह आनन्द सौं भरी लंका निरी॥

दसवाँ सर्ग

१

उत्तर पथ कौ राज्य देखिबै जाहि लजायौ।
सोई गुप्तचर-प्रमुख लंक गढ़ कौ चलि आयौ॥
वृत-पानि दरवार माँहि तब खबरि जनायौ।
सुनि दसमुख कौ सचिव ताहि ढिग निकट बुलायौ॥

२

दूरहिं ते दससिरहि देखि चर कियौ प्रनामा।
पाय सचिव संकेत आय बैठ्यौ तेहि ठामा॥
अरु दोऊ कर जोरि तासु कौ आयसु माँगी।
लग्यौ निवेदन करन दूत या विधि अनुरागी॥

३

"कहँ मो सम चर-अधम अबोधहि कौ तनु धारे।
कह नृप-मुनि-जन-चरित सहज-नहि-जानन-वारे॥
तिनके गूढ़-विचार - नीति - चासनि - सौ - मोरे।
जान्यौं मैं महाराज सकल परताप तुम्हारे॥

४

बहुधा है कटु सत्य लगत लोगनि नहिं नीकौ।
साँचौ - करुवौ - बोल लगत याही ते फीकौ॥
सति-कटु-पै-प्रिय-वचन कहनहारी जग माँही।
महाराज! यहि काल हमें कोउ दीसति नाँही॥

५

है वह चर अति अधम सत्य बच जो नहिं भाषै।
सचिवहु नहिं पद योग्य कान वापै नहिं राखै॥
यातें जो कछु कहौ ध्यान सौं तेहि सुनि लीजै।
वाकौ सोचि-विचारि मनहि आवै सो कीजै॥

६

राजनीति इमि कहत होत नृप के चर लोचन।
मृदु अथवा कटु कहौं सुनिय तेहि छाँड़ि सँकोचन॥
गुप्त बात एक सुनी लखी तेहि कहत सकाहीं।
पै बिन वाके कहे चैन पावत चित नाहीं॥

७

मुनि जन उत्तर वसत करत मख रहत सदा ही।
पढ़त अपूरब-मन्त्र कहत स्वाहा मुख जाहीं॥
जपत उचाटन-मारन अरु आकर्षन मंत्रहिं।
करत विकट वनवास रहत सब भाँति स्वतंत्रहि॥

८

लै मारीचहिं साथ किये मुनि के वर वेषहिं।
रहि आश्रम कछु काल यज्ञ-विधि लखी असेषहिं॥
ते इमि निहते मन्त्र जपत सब मिलि अभिचारा।
सोचत रहत अनिष्ट दिवस-निसि नाथ! तुम्हारा॥

९

मख प्रभाव है विदित नाथ तिहुँ लोकनि माँही।
ताहि सकत करि विफल आपु चतुरानन नाँही॥
मारन अरु अभिचार सिद्ध जो पै ह्वै जैहैं।
महाराज नित नव अनिष्ट लंका के ह्वैहैं॥

१०

याही के बल लियो सक्र घननादहिं बाँधी।
बिभीषनहि आकर्षि लियो निज कारज साधी॥
रहत बन्धु प्रतिकूल मन्त्र कौ प्रकट प्रभाऊ।
मुनि जन की यह चाल आजु लौं लख्यौ न काऊ॥

११

छत्रिय-कुल-अवतंस गाधि-नरपति कौ नन्दन।
करत रहत षड्यन्त्र रचत नित-नव-छल-छन्दन॥
रिषि वसिष्ठ सौं भई तासु बहुबार लराई।
निज-तप-बल सौं दियौ ताहि मुनि तदपि हराई॥

१२

हार जीत मैं होत यदपि नहिं नरपति दोषू।
तऊ प्रबल अति होत छत्रि-बंसन कौ रोषू॥
मुनि सौं रन मै हारि मानि मन मांहि गलानी।
काया-कष्ट उठाय लियौ हिय में यह ठानी॥

१३

करिहौं तप अति घोर हंस-वाहनहि रिझैहौं।
ऐसौ है विस्वास मनोवांछित वर लैहौं॥
हारि विप्र सौं गयौ ब्रह्मरिषि अब कहवैहौं।
विधिहू सों करि होड़ आपनी सृष्टि चलैहौं॥

१४

हरिश्चन्द्र पैं क्रोध कबहु याही नै कीन्ह्यौ।
राज-पाट सौं भ्रष्ट कियौ दारुन दुख दीन्ह्यौ॥
सोई है अब बन्यौ सकल-मुनि-जनकौ नेता।
ह्वै जैहैं यह नाथ! कबहुँ उत्तर-पथ जेता॥

१५

यातैं याकी सक्ति और अब चढ़न न दीजै।
मुनि मुखतें अभिचार-मन्त्र कटु बढ़न न दीजै।
ऐसौ देहु निदेस यज्ञ मुनि करन न पावैं।
रहहि सुबाहु सतर्क हुतासन जरन पावैं॥"

१६

या विधि सौं मुख भाषि गुप्तचर चुप ह्वै रहेऊ।
तबहि सचिव कर जोरि बैन दससिर सौं कहेऊ॥
"याकी बातन पै विचार पहिले करि लीजै।
फिरि जैसौ प्रभु चहैं सोचि कै आयसु दीजै॥

१७

तब लगि तँह मारीच भगत हाँफत चलि आयौ।
राजद्वार पै गिर्‌यौ ताहि प्रतिहार उठायौ॥
तासु वच्छथल लग्यौ हुतौ एक सरखर-धारा।
जासौ स्रवत अजस्र सद्य-सोनित की धारा॥

१८

लीन्ह्यौ सायक काढ़ि ताहि द्वारप पहिचानी।
अरु ब्रन बन्धन कियौ तासु अपनै ही पानी॥
आज्ञा लहि मारीच सभा-मन्दिर में आयौ।
दसकन्धर-पग परसि बचन यहि भाँति सुनायौ॥

१९

"महाराज! नृप-गाधि-सुवन अति-तप-बल पाई।
प्रभु अनिष्ट के हेतु करत मष रहत सदाई॥
अबहिं काल्हि की बात अवधपुर आपु सिधायौ।
नृप-दसरथ सौं माँगि राम-लखनहि लै आयौ॥

२०

तिन दोउन मिलि "प्रान्त-सासिका"[1] कौ संहार्यौ।
करु सुबाहु के सहित सकल-राकस-दल मार्यौ॥
ऐसौ विषम नराच हन्यौ बच्छस्थल माँही।
महि गिरि पर्यौ अचेत रही तनु की सुधि नाहीं॥

२१

मुर्छा भई व्यतीत उठ्यौ निज गात सँभारी।
व्याकुल कीन्ह्यौ दुहुन मोहि निज बानन मारी।
बिनु फर कौ वर विसिप राम यहि भाँति चलायो।
मष मण्डल सौं मोहि व्योम पथ माँहि उड़ायो॥

२२

उड़त उड़त इत गिर्यौ आय प्रभु चरनन माँही।
ऐसौ लाग्यौ धका चेतना रंचक नाही॥
हम बिनु आयुध गये हुते मुनि मख अवरेखन।
बालक अनुपम हुते लगे तिनकी दिसि देखन॥

२३

लहि मुनि कौ संकेत लियौ तिन धनुष चढ़ाई।
हम दोउ हुते निरस्त्र दियौ पै बान चलाई॥
झेल्यौ बार सुबाहु पाँव पीछे नहि डार्यौ।
ह्वै परासु महि पर्यौ जबै लछिमन सर मार्यौ॥

1, ताड़का

२४

एतेहि मँह करि कोप राम ब्रह्मास्त्र प्रहार्यौ।
श्री ताड़का समेत छावनी कौ सब जार्यौ॥
या विधि सौं बतरात एक मुनि सौं सुनि पायौ।
स्कन्धावर की छार उड़त नैनन लखि आयौ॥"

२५

सुनि मारीच मुख बैन गये सब खाय सनाका।
तथा विभीषन कछुक सकुचि रावन रुख ताका॥
अरु बोल्यौ इमि बैन "नाथ! मम छमिय ढिठाई।
बाल विनयहू सुनत नीति-कोविद चितलाई॥

२६

कीन्ह्यौ ह्वै है खेलत ही ब्रह्मास्त्र प्रहारन।
बालक-निपट-अजान न जानत तासु निवारन॥
ताते लागी आगि छावनी सकल जराई।
ज्वाल-जाल परि जरी ताड़का भागि न पाई॥

२७

देखत रह्यौ सुबाहु हस्त-कौसल तिन केरौ।
सहि बानन आघात भयौ घायल बहुतेरौ॥
ह्वै है लाग्यौ विसिख मर्म-थल मैं कहु आई।
ह्वै है महि गिरि पर्यौ वीरवर प्रान विहाई॥

२८

यद्यपि करनी कठिन सुनी दोउ बालम केरी।
वृद्ध-पिता पै मोहि दया आवति बहुतेरी॥
एक बात पै मोहि तदपि विस्वास न आवत।
जाकौ बहुत दृढाय गुप्तचर हुतौ बतावत॥

२९

कानन मैं मुनिरहत नितहि परमारथ साधत।
तासु सिद्धि कै हेतु चन्द्रसेखर अवराधत॥
ते कैसे अभिचार-मंत्र लंका जर जपिहैं।
लै धारना अनिष्ट भला कैसे तप तपिहैं॥

३०

संका जो पै होय फेरि सौं जांच कराइयै।
अरु प्रहस्त के साथ चतुर मंत्रिन पठवैइयै॥
होनी तौ ह्वै चुकी कहा तेहि माँहि धर्यौ है,
वन-प्रदेस-अधिकार-माँहि का लाभ भर्यौ है॥

३१

है विदेह कौ राज्य निकट कछु संक न वाते।
बूढ़े दसरथ भये कछू करि सकत न याते॥
सो प्रदेस अब देहु आपु चुपचापहिं त्यागो।
रहिहै राउरि संक अवास सबके हिय लागो॥

३२

नहिं वासौं राजस्व लाभ कछु यही विचारौ।
है सासन-व्यय होत नितहि सोऊ निरधारौ॥
बढ़ति बालि की सक्ति जानि पंपापुर माँही।
याकौ बढ़िबौ नाथ! भलौ काहू विधि नाहीं॥

३३

मुनि-विद्रोह-दवारि फैलि जो पै कहुँ जैहै।
दंडक वन की भूमि छार वामें ह्वै जैहै॥
घटि है प्रभु-आतंक संक रिपु की बढ़ि जैहै।
लंक-राज की साक धाक माटी मिलि जैहै॥

३४

छाँड़ौ निर्धन प्रान्त इतहिं सब सक्ति लगावौ।
अरु निज राज्य-सिवान विंध्य-भूधरहिं बनावौ॥
रहौ बालि पै गुप्त रीति सौं दीठि लगाये।
करन न पावै घात कबहुँ दुर्दिन हू पाये॥

३५

कहिहै जग में कौन बाल राकसन हरायौ।
जिन सुरपति कौ बाँधि धुजा अपनी फहरायौ॥
उत भृगुपति-आतंक बढ़त जाहि छिन-छिन है।
तप-बस-दर्पित मुनिहि रोकबौ महा कठिन है॥"

३६

सुनत बन्धु के बैन सान्त दसमुख तब भयऊ।
अरु मंत्रिन दिसि निरखि बचन या विधि सौं कहऊ॥
"अपनौ हू मत कहौ और जो कछु कहिबौ है।
अथवा जो कछु कहत भ्रात सोई गहिबौ है॥"

३७

तब सुक सारन कह्यौ मंत्र याही है नीकौ।
याही मैं है भलौ यहै मत भावत जीकौ॥
पंचवटी मैं नई राजधानिहि बनवइयै।
अरु सासक नय-निपुन कोउ तेहि ठाम पठैइयै॥

३८

रहै वाहनी-विकट तहाँ राकस-कुल केरी।
बाली दीठि उठाय सकै जा दिसि नहिं हेरी॥
मुनिजन कौ विद्रोह-अनल तहँ बढ़न न पावै।
कीजै ताकौ दमन जुपै अरि आँखि उठावै॥

३९

सुनि सारन-मुख-बैन सभा सिगरी हरषानी।
मानहु सूखत सालि-खेत पर बरस्यौ पानी॥
दसकन्धर मुद मानि निकट सचिवहि बुलवायौ।
अरु या विधि आदेस आपनौ ताहि सुनायौ॥

४०

सूर्पनखा की अध्यच्छता मैं,
खरदूषन पंचवटी रहै जाही।
राकस कौ बल चौदा-सहस्र,
रहै त्रिसिरा के अधीन तहाँ ही॥
विंध्य लौ राज्य सिवान है वै,
फिरतै रहै दन्डक-कानन माँही।
त्यौं मुनि लोगनिहू कौ विद्रोह,
औ बालि की सक्ति-बढ़ै कहूँ नाँही॥

ग्यारहवाँ सर्ग

१

इमि दसबदन निदेस पाय कै सचिव महा मुद पायौ ।
सिल्पकार अरु बहु स्रमजोविन पायक भजि बुलायौ ॥
दीन्ह्यौ तिनहि निदेस सबै तुम पंचवटी कहँ जावौ ।
नवल-राजधानी-हित नृप कौ सौध बिसाल बनावौ ॥

२

सचिव-निदेस पाय वै लागे पंचवटी महँ आवन ।
चौरस अरु चौकोर भूमि पै लागे सौध बनावन ॥
विरच्यौ हाल बिसाल समाहित उन्नत सिखिर सजाई ।
ता पर सिंह-ध्वजा लंका की रही फहरि लहराई ॥

३

उरझत पाँय दिवाकर रथ के बाजिन के जिन माँहीं ।
पट ते टूटि - टूटि मुक्ताहल परै आय महि माँही ॥
मनहु प्रकृति नै धवल-सीस के केस दियौ छिटकाई ।
तिनकौ झारि सीप-सुत-गुच्छनि दीन्ह्यो चँद बरदाई ॥

४

घेरे रम्य वाटिका वाकौ, लगे विटप बहु जाती ।
राजत मध्य कुण्ड एक जामैं लगी फुहारन पाँती ॥
ऐसे लगीं तहाँ पाटल की क्यारन मैं चहुँ सोहै ।
गुञ्जत चंचरीक बहु तिन पै देखत जन-मन मोहै ॥

५

चढ़ि बिसाल डारनि रसाल की कूजति कोकिल माती ।
मंजरीनि सौं लेत मुदित रस फिरत रहत इतराती ॥
नील-कंठ, कल-कंठ, कलापी-महार कुहुक कहुँ बोलैं ।
तरु-साखन पर फरफराय कहुँ करत अनेक कलोलैं ॥

६

चौदह-सहस-सुभट-राकसगन गये छावनिन माँही।
फिरतैं रहत झुण्ड बहुतिन के दंडक-कानन माँही॥
गिरि-कंदर-खोहनि सरितन-तट होम होत जँह पावैं।
मख निरखन के व्याज तहाँ तहँ सबही सपदि सिधावैं॥

७

खरदूषन-त्रिसरा-विराध अरु तिनके चरगन नाना।
घूमत रहत दण्डकारनि मैं भेद मुनिन नहिं जाना॥
सुर्पनखा कै सरिस नहीं कोउ राजनीति कौ ज्ञाता।
तेहि बनाय भेज्यौ दसमुख ने सासन-सूत्र-विधाता॥

८

बीते बहुत दिवस तिन सबकौ या विधि रहत तहाँ ही।
घूमत फिरत सूर्पनखा हूँ प्रमुदित कानन माहीं॥
दीठि लगाय कबहु सुरनायक सकत न वा दिसि देखी,
अपर जनन की कहा चलाई सकहिं जो तेहि अवरेखी॥

९

चर-मुख सुन्यौ तीन जन एक दिन दंडक बन मैं आये।
मुनि लोगन सौं मिले तिन्हैं बहु यज्ञ हेतु उकसाये॥
तिनकौ पाय सहाय करन मुनि मखन नितहि प्रति लागे।
जदपि रहत दस-सिर-सासन मैं तदपि तासु भय त्यागे॥

१०

खरदूसन, त्रिसिरा, विराध ने इक योजना बनाई।
सूर्पनखा के हस्ताक्षर हूँ ता पै लियो कराई॥
वाही के अनुसार घोसना या विधि मुनिन सुनाई।
अरु दंडक कानन मैं चहुँ दिसि डौंडी दियौ पिटाई॥

११

"कोऊ बिसाल-यज्ञ-आयोजन होय जो कहुँ बन माँही।
बिन सासक-निदेस के पाये करै कबहु कोउ नाहीं॥
बसीकरन, मोहन, उच्चाटन, मंत्रन जो कोउ जपिहै।
राज-रोष प्रज्वलित-अनल की ज्वालन मैं बहु तपिहै॥"

१२

यद्यपि राजघोषना या विधि भई सकल बन माँही।
करते रहे यज्ञ मुनि-मन पै ताकौ मान्यो नाहीं॥
नृप-निदेस कौ इमि अवहेलन महि न सासिका पाई।
अरु दण्डक-कानन मैं सैनिक-सासन दियौ चलाई॥

१३

लाग्यौ घूमन दमन-चक्र मुनि पिसन लगे तेहि माँही।
निरत रहत राज-सासन पै मन मैं नाँहि सकाही॥
जै-जै कहत राम लछिमन को छय बोलत रावन की।
फिरत निसंक करत भय नाँही राज-दंड पावन की॥

१४

सैनिक-सासन के विरोध मैं सभा मुनिन मिलि कीन्ह्यो।
तथा सभापति कौ आसन तिन मुनि सरभंगहि दीन्ह्यौ॥
तिन कौ ज्वलत-अनल-सम-भाषन सुनि मुनि भये सुखारे।
जय-जय राम तथा छय रावन ऊँचे स्वरनि उचारे॥

१५

बोले अत्रि, "अरुन्धति तप-बल मन्दाकिनि इत आनी।
यहि प्रदेस मैं आय एकसन कीन्ही निज रजधानी॥
नित-प्रति यज्ञ-विरोध करत अरु बोलत वचन अनैसे।
अत्याचार अनाचारिन के सहे जाँहि अब कैसे।"

१६

कह अगस्त, "कानन-प्रदेस सब है हम लोगनि केरौ।
अब लौं कियौ निसंक अमित मख कोऊ न या दिसि हेरौ॥
अत्याचार करन सौं राकस विरत जु पै नहिं ह्वै हैं।
एकहि घूँट माँहि सागर कौ सोखि बहुरि हम लैहैं॥

१७

ह्वै जैहै सीधो महि-मारग रहिहै कोउ न रुकाई।
देव-समूह कोपि करि दैहै तिन पै अवसि चढ़ाई॥
गौरव अमित दुर्ग लंका कौ छार माँहि मिलि जैहै।
तब रावन अपनी अनीति पै कर मलिकै पछितैहै॥"

१८

कह्यौ सुतीछन मुनि सकोपि तब "बदलो हम भरि लैहैं।
जो नहिं रोकि पाइहै तिनकौ साथ सुपनखहि दैहैं॥
लैहै परसुराम मुनिवर कौ यहि प्रदेस बुलवाई।
इत ही रक्त-कुण्ड वै भरिहैं सोनित सरित बहाई॥"

१९

कह जबालि मुनि "धर्म सनातन संकट माँहि पर्यौ है।
ताहि समूल उपारन कै हित राकस वृन्द अर्यौ है॥
तिनकै धर्म-हीन-आदेसन भूलिहु जनि कोउ मानौ।
जपहु नितहि अभिचार मंत्र अरु यज्ञ करन हिय ठानौ॥"

२०

कह हारीत "मुनिन कौ राकस फिरत जबहि कहुँ पावत।
उनको पकरि सीस पै तिनके काठ-भार लदवावत॥
ढूँढन देत नहीं वन-औषधि वन-फल लेत तुराई।
दुहि लै जाति दूध गायन कौ तुलसी लेत चराई॥"

२१

तब बोल्यौ सरभंग क्रोध करि दाहिनी बाँह उठाई।
"रच्छा हेतु धर्म की मुनिगन का हैं अवसि लराई॥
खरदूसन, त्रिसरा, विराध नहिं कछु हमरौ करि पैहैं।
धर्म-युद्ध में अवसि लंकपति हरि रावनहु जैहैं॥"

२२

"साधु-साधु सरभंग साधु" कहि साधु उच्च स्वर बोलैं।
"जै जै राम लषन सिय" भाखैं जटा जूट सिर डोलैं॥
ताखन सौं राकस विरोध कौ मुनिगन निज हिय ठान्यौ।
बारि अनल सरभंग चिता महँ तुरतहि धाय समान्यौ॥

२३

फैल्यौ समाचार यह बन मै "राकस अत्याचारी।
दियौ पकरि सरभंग मुनोसहिं जरत अनल मैं डारी॥
जटा-जूट दाढ़ी मुनीन की लियौ खंग सौं काटी।
तिनके भाल तिलक हूँ लीन्ह्यौ निज जीभनि सौं चाटी॥"

२५

सुनि रव तुमुल कोपि त्रिसरा नै सैनिक दियौ पठाई।
    अरु तिन जाय तहाँ तै बरबस दीन्ह्यौ मुनिन भगाई॥
करि सत्याग्रह डटे रहे ते भये दंड के भागी।
    भाग-दौर मै वृद्ध मुनिन के गई चोट कछु लागी॥

२५

करतहि रहै सत्याग्रह जे तिन्है सैनिक मारयौ।
    कीन्ह्यौ जिन विरोध चिमटन लै तिन कब कौ संघारयौ॥
ता दिन तै सुपनखहि बधन की मुनिन प्रतिज्ञा कीन्हीं।
    'रहियौ सजग राज-मन्दिर मै यहौ चुनौती दीन्ही॥'

२६

ताही दिन सों सूपनखा पै मुनि जन दाँत लगाये।
    घूमत फिरत फेर मैं वाके तीखन परसु उठाये॥
केते तौ चिमटन फटकारत या विधि कहत पुकारी।
    "मारहि जौ न याहि तौ डारहि निज उपवीत उतारी॥"

२७

कछु मुनि समाचार लै याकौ राम कुटी पै आये।
    सभा-भंग की सारी घटना तिन कौ रोय सुनाये॥
लछिमन कह्यौ सकोप "अवसि हो या अधमहि संघरिहौं।"
    बाँह उठाय राम हूँ बोले "अवनि अराकस करिहौं॥"

२८

चौदह सहस कटक राकस को चलत जासु भुज छाँहीं।
    या धमकी की रंचक चिंता कियौ सुपनखा नाहीं॥
घूमत रही इतहि उत बन मै लंक-सौध सम मानी।
    जानत नहीं होयगी केती रूप-रासि की हानी॥

२६

रितु बसंत कै आवत बन मै छटा और ही छाई।
    छिटकी चारु चाँदनी ससि की सुधा-धार बरसाई॥
सीतल-मन्द-सुगंधित तौ लौं लागी बहन बयारी।
    लागी मत्त-कोकिला बोलन चढ़ि रसाल की डारी॥

३०

टहरन चली सुपनखा निसि मैं अंग-रच्छकन बिहाई।
मारग भूलि राम कुटिया लौं मंद-मंद चलि आई॥
दूरहि तै घूमत लखि वाकौ लखन लियौ पहचानी।
और सुधारि कटारि आपनी कह्यौ कड़कि इमि बानी॥

३१

"अधमा! सँभरु बुलाउ सहायक काल आयगौ तेरौ।
भूलिहि गयौ तोहि कुलटारी! कियौ भयौ प्रन मेरौ॥"
यौं कहि बढ़ि मृगपति लौं सहसा दीन्ह्यौ ताहि पछारी।
जाहि निपातन हेतु हाँथ मैं लीन्ह्यौ कोपि कटारी॥

३२

बोलीं सरुष सिया "तुम देवर! लियौ लाज कौ जीतो।
रूपवती अबला पै ठाढ़े ऐसी करत अनीती॥
नारिन पै इमि हाथ डारिबौ लिख्यो कहूँ है नाहीं।
आपु समान महा-बल-योधा भयौ कौन जग माँहीं॥

३३

बैठे-ठाले बनबासिन पै जनि आपत्ति बुलावौ।
रावन की वह भगिनि आपु जनि सोवत सिंह जगावौ॥
जो पै याहि मारिहौ देवर! अयस रावरौ ह्वै है।
अबला-वध-कलंक कौ टीकौ भला कौन धौं ध्वैहै॥"

३४

सुनि इमि वचन जनक-तनया के लखन सान्त कछु भयऊ।
तौहू स्रवन नासिका दोऊ काटि तासु कर दयऊ॥
कह्यौ "इन्हें तुम निज पति खर कौ निहचै जाय दिखइयौ।
टहरन काज अवसिही या खन फेरि कृपा करि अइयौ॥"

३५

बोली कड़कि वचन सुरपनखा "तुम मोहि जानत नाहीं।
चौदह सहस कटक राकस की निवसत मम भुज छाहीं॥
साहस कियो अपार वायनौ भले भवन मह दीन्ह्यौ।
होतहि प्रात पाइहौ सो फल जैसौ हो तुम कीन्ह्यौ॥"

३६

असकहि लौटि सुपनखा अपने राज सौध महँ आई।
द्वार पाल वाकौ विरूप लखि गयौ हिये चकराई ॥
खर के भौन जाय कै वानै सारौ हाल सुनायौ।
सुनतहि अजुगुत बैन तुरत सौ सुरपनखा ढिग आयौ ॥

३७

रोई बिलखि सुपनखा तब तौ खर की ओर निहारी।
बोली "राम बन्धु नै कीन्ही ऐसी दसा हमारी ॥"
ह्वै सरोप वानै पल मारत रन-दुंदुभि बजवाई।
चौदह सहस कटक राकस की लीन्ही सपाद सजाई ॥

३८

सुनत चंड-ध्वनि-रन-दुंदुभि की लियौ राम सब जानी।
अरु करि कोप सरासन अपना लिया कान लगि तानी ॥
पढ़ि सुमंत्र ब्रह्मास्त्र प्रेरिकै तिन पै कोपि प्रहार्‌यौ।
चौदह-सहस-निसाचर-सेना जारि छारि करि डार्‌यौ ॥

३९

सयन कच्छ मै जाय सुपनखा दूतहि लियौ बुलाई।
दर्पन की दिसि देखि लियौ निज-चित्र-विरूप बनाई ॥
ताहि दियौ पाती सँग अपनी रावन पास पठाई।
मूँदि किवार लिये मंदिर मै आगी आपु लगाई ॥

४०

सूर्पनखा कौ लख्यौ इमि अन्तहि,
दूत गयौ अतिसै घबराई।
चित्र औ पाती लिये कर मै,
पहुँच्यौ दससीस कै भौन मै जाई ॥
पंचवटी की सबै घटना,
विस्तार सौ रावनै दीन्ह्यौ सुनाई।
सो सुनि चित्र-लिख्यौ-सौ रह्यौ,
औ' लियौ दससीस नै सीस नवाई ॥

बारहवाँ सर्ग

१

पढ़ि स्वसा कौ पत्र निरख्यौ चित्र दिसि दसकंध।
सुनि मरन खर कौ गयौ ह्वै क्रोध सौं अति अंध॥
मष्ट ह्वै पुनि रह्यौ सोचत हिय अनेक उपाय।
कौन विधि सौं तापसन सौं लेहुँ बदलौ जाय॥

२

जुपै करि निज बल प्रयोगहि लेहु तिनको जीति।
कहैगो संसार मैंने करी अमित अनीति॥
वीर कौ नहि उचित जूझै बालकनि सौं जाय।
करत हैं बनवास तिनकौ है न कोउ सहाय॥

३

जुपै तिनसौं लरौं तौ वै अवसि लरिहैं आय।
देहिंगे वे समर-महि मैं दोऊ प्रान गँवाय॥
होयगौ बनवास दुखकौ वा घरी सौं अन्त।
रहहिंगे हम दुःख सागर माँहि बहुत दुरन्त॥

४

देखिहौं यह चित्र जो लौं औ सुमरिहौं ताहि।
जरत रहिहै रक्त मेरौ दुख दवानल माँहि॥
करौं तापस-बन्धु कौ यह भाँति सौं अपकार।
जियैं जौलौं हीय उनको रहै होतहिं छार॥

५

करि अनेक विचार बनै लियौ हिय निरधारि।
बनै जैसे हरौं वाकी जाय कै प्रिय नारि॥
जारतै रहिहै तिया की तिनहिं दुःख दावारि।
बंधुहू हिय-छीन रहिहैं दुखित ताहि निहारि॥

६

करि विरूपा भगिनि कौ इन कियौ जिमि अपकार।
तैसे होहौं करौं इनकौ, हरन कै प्रियदार॥
जाइहैं जब अवधपुर मै पूँछिहैं कुसलात।
फैलि जैहैं जगत मैं तिय-अपहरन की बात!!

७

होयगौ अपमान निन्दा करैं सकल समाज।
छत्रियन मै बैठिहैं तौ अवसि ऐहै लाज॥
जाति-जन-अपमान सौं हिय होत सोक अथोर।
रहत वाके दुःख कौ कछु ओर न कछु छोर॥

८

सोचतै इमि रह्यौ मन मै पुन्य भयौ प्रभात।
तब बुला मारीच को सब कही वासौं बात॥
"चलहु दंडक-अटवि मै तुम आजु मेरे संग।
अरु बनहु तपसिन कुटी ढिग जाय हेम कुरंग॥

९

तुमहि पकरन हेतु जब ही दौरिहैं दोउ-भाय।
तब कपटि करि जाइयौ लै तिनहिं दूरि भगाय॥
जब अकेली जाइहै रहि जात आश्रम माँहि।
साजि दल हरि लाइहौं मैं अवसि तुरतहिं वाहि॥

१०

जुपै ह्वैहैं राम कौ निज बन्धु पै संदेह।
ताहि जो दुरभाग्य बस कहुँ आइजैहैं तेह॥
तौ अवसि ह्वै जाय तिनमै घोर अति संग्राम।
और ह्वैहैं सकल मेरे चित्त चीते काम॥

११

सोचि इमि दसकंध ने तब सीय कौ हरि लीन्ह।
ल्याइकै तेहि लङ्क में निज राज-बन्दी कीन्ह॥
तासु सुख की सब व्यवस्था करी लङ्क-नरेस।
तथा पूछत रह्यौ वाकौ कुसल-वृत्त हमेस॥

१२

रहे खोजत फिरत सीतहि सकल वन मैं राम।
लै गये हनुमान जहँ सुग्रीव कौ हौ धाम॥
राज्य-दारा-रहित दोऊ दुःख रहे उठाय।
कियौ दोउन मित्रता पावकहि साखि बनाय॥

१३

कियौ छल सौं बालि-बध सुग्रीव के हित राम।
तेहि बनायौ बानराधिप तिनहु कीन्ह्यौ काम॥
बानरन कौ कटक भेज्यौ सीय-हित चहुँओर।
जाय पहुँचे सिन्धु तट लौं करत रव अतिघोर॥

१४

मिल्यौ बानर बृन्द कौ सहसा तहाँ सम्पाति।
सिय पतौ पूंछ्यौ कपिन तब कही तिन यहि भाँति॥
रहत है वह लङ्क मैं जहँ सुरप जात डरात।
तुम सरीखे कपिन की तहँ कौन पूछत बात॥

१५

तदपि जो कोउ करैं साहस सिन्धु कौ तरि जाँय।
सकत है सो देखि सिय के परम पावन पाँय॥
भाषि या विधि बैन तुरतहि गयौ गीध उड़ाय।
लगे सोचन भालु कपि मिलि सीय-मिलन-उपाय॥

१६

सबन निज-निज बल बखान्यौ ह्वै गयौ निरुपाय।
लाँघि कै जलरासि कोऊ सक्यौ लङ्क न जाय॥
तब कह्यौ हनुमन्त सौं इमि जाम्बवन्त बुझाय।
सुमिरि निज-बल पवन-सुत तुमहीं सकत उत जाय॥

१७

रिच्छ पति कौ भेंटि कै भरि अंक अंजनिपूत।
ध्याय-सियपति-चरन साहस धारि हीय अकूत॥
मनहि मन पुनि सुमिरि कै रघुबीर प्रखर प्रताप।
गयौ एक छलाँग ही मैं तरकि सागर आप॥

१८

धरि मसक कौ रूप खोजत सीय को चहुँकोद।
मिल्यौ तेहि नृप-बन्धु[1] कौ गृह गयौ तहाँ समोद॥
बाँचि वाकौ नाम निसि मैं लियौ कपि सब जानि।
तथा वासौं जाय कीन्ही पवन-सुत पहिचानि॥

१९

तेहि नयौ-आयौ निरखि नृप-बन्धु अपने राज।
प्रस्न कीन्ह्यौ "या समै आयौ इतै केहि काज॥"
कह्यौ तब हनुमान "हौं हौं बानराधिप दूत।
तथा आयौ हौं इतै इक काज करन अकूत॥

२०

जुपै देहैं आपु मोहि तेहि काज माँहि सहाय।
रावरे-उपकार-रिन कौ देहुँगौ चुकवाय॥
सीय कौ सब पतौ मोकौ आपु देहु बताय।
होय प्रभु की विजय ऐसौ करहु बहुरि उपाय॥

२१

लङ्क पै आक्रमन हित हैं रामचन्द्र तयार।
है विकट कपि भालु सेना परी सागर-पार॥
या समै करतव्य पै निज तुमहुँ करहु विचार।
मिलत इमि अनुकूल औसर नाँहि बारम्बार॥"

२२

सुनत कपि मुख लङ्क पै आक्रमण की सब बात।
कह्यौ मन नृप-बन्धु ह्वैहैं सफल मेरी घात॥
देहु या खन सीय कौ सब पतौ कपिहि बताय।
राज पावन माहि मेरी करहि अवसि सहाय॥

२३

मंत्र दे दसकन्ध कौ जौ देहुँ सियहि दिवाय।
मिलहुँ अथवा राम सौं ऐसे समय मैं जाय॥
अवसि ही वे मानिहैं मेरो परम उपकार।
जीति लङ्कहि सौंपहैं मोहि राजकौ सब भार॥

१—विभीषण

२४

जियत है घननाद तौ सौं ह्वै न सकत अनिष्ट।
तथा है तिहुँ लोक मै घटकरन वीर वरिष्ट॥
जियत है दसकंध जौ लौं देवगन-कौ-सोक।
जीति हैं किमि राम, जो नहिं जात ये जमलोक॥

२५

सोचि इमि नृप बन्धु दीन्ह्यो सीय पतौ बताय।
तथा अपने गेह में पुनि लग्यौ सोवन आय॥
जाय उत हनुमान परस्यौ मैथिली कै पाँय।
राम की सब कुसल-छेमहि तेहि सुनाई जाय॥

२६

जानि निज-पति-कुसल विकस्यौ जानकी मुख-चन्द।
चौगुनी पुनि चढ़ी वा पै प्रभा आय अमंद॥
कह्यौ अब तुम कहौ प्रभु सौं "करैं नेकु न बार।
मारि पापिन करहिं मेरौ आय कै उद्धार॥

२७

आइहैं इक मास ही मै जो न लंका माँहि।
तौ जगत में मोहि जीवत पाइहैं प्रभु नाँहि॥"
परसि जानकि-चरन राकस-राज्य की करि हानि।
तरकि सागर कही हनुमत राम सौं इमि बानि॥

२८

"जियत सीता करत निज मन प्रभु मिलन की आस।
राज बन्दी भई याते रहत सदा सत्रास॥
वेगिही अब हरहु चलि कै सकल सिय की भीति।
अरु करहु उद्धार वाकौ सत्रु कौ रन जीति॥"

२९

उतै रावन सभा में प्रातहिं विभीषन जाय।
कहन लागे बैन इमि दसकंध कौ समुझाय॥
"राम की वरबाम तुमने हरी है उठ ठाय।
बहुत का हम कहैं वाकौ देहु अब लौटाय।"

३०

अपर मंत्री जदपि कीन्ह्यो तासु प्रबल विरोध।
करत तौहूँ रहे बारम्बार वे अनुरोध॥
लंक के आतंक की है किती यामैं हानि।
जान तौहूँ निज हिये नहि करत रेचक कानि॥

३१

जुधै हौ तुम कहत ऐसो राम सौं भय खाय।
रहो तौ चुप कै, सभा मत जनि बिगारहु आय॥
कह्यौ तब दसकन्ध ने निज बन्धु सौं यह बात।
करत प्रबल विरोध पै नहि नेकु हिये सकात?

३२

गुप्तचर हनुमत विभीषन मैं भई जो बात।
आय रावन सौं चलाई कुटिल वाकौ घात॥
सुनत सबल प्रसंग दसमुख तब रह्यौ गहि मौन।
जानि कै मध्यान आयौ लौटि सों निज भौन॥

३३

जानि लीन्ह्यौ लंक की ह्वै है कुसल अब नाँहि।
बन्धु ही है सत्रु, जब तौ हितू को जग माँहि॥
रह्यौ सोचत राति भरि वाकौ कुफल परिनाम।
और भेज्यौ दूत कौ प्रातहि विभीषन धाम॥

३४

कह्यौ वानै लौटि के तब लंकपति सौं आय।
भगि गयौ निसि मैं विभीषन लंक सौध विहाय॥
रहे सरमा और तरनीसेन अति घबराय।
अबहि आयौ हौं इतै प्रभु तिनहि धीर बँधाय॥

३५

उत विभीषन राति ही मैं कियो सागर पार।
वह, लजात डरात आयौ राम-सेन-मँझार॥
मिलि गये हनुमान याते बनि गयौ सब रंग।
लै गए रघुबीर के ढिग ताहि अपने संग॥

३६

जानि रावन-बन्धु प्रभु ने दियौ तेहि बहु मान।
तिलक दै तेहि आपु लंकापति कियौ भगवान॥
अरु बँधायौ सिन्धु पै इक सेतु राम उदार।
कियौ सेना सहित या विधि अम्बुनिधि कौ पार॥

३७

आय सैल सुवेल पै इत राम कीन्ह्यो वास।
रीछ बानर वृन्द ठहरे देखि सकल सुपास॥
होत पुन्य प्रभात लीन्ह्यौ बालि सुतहि बुलाय।
राजदूत बनाय वाकौ दियौ लंक पठाय॥

३८

तिन लख्यौ दसमुख सभा कौ अमित अचरज पाय।
बिबुध मंडल खड़े ताकत तासु दिसि घबराय॥
कह्यौ सीता हरन के तुम कियो अनुचित काम।
कहा ह्वै है रावरौ जब कोपि है रन राम॥

३९

देहु याते अवसि अब तुम सीय को लौटाय।
तथा परसौ आय के रघुवंस मनि के पाय॥
अन्यथा ह्वै है समर मैं सकल कुल-संहार।
तथा लंका विभव ह्वै है पलक मैं जरि छार॥

४०

अंगद सौ सुनि कै इमि बैन।
कह्यौ दससीस वे भौंह चढ़ाई॥
"दूत ह्वै आयौ अबध्य भयौ।
मग सामुहे ते यहि देहु हटाई॥
सो निज नाथ सौं जाय कहै।
नहि पैहौ सियै बिनु कीन्हे लराई॥
औ रनखेत मैं होन प्रभात।
दिखावहि आपनौ पौरुष आई॥"

तेरहवाँ सर्ग

हिय हरास आये चले, लंका ते युवराज ।
समुझायौ बहु दसमसिरहि, तदपि भयौ नहिं काज ॥

१

होत प्रभात जगे रघुराई ।
बैठे फटिक सिला दोउ भाई ॥
अङ्गद, हनूमान, सुग्रीवा ।
नल, सुखेन, रिच्छप, बलसीवा ॥
दुविद, मयंद, कुमुद बलधामा ।
धूमकेतु अविचल संग्रामा ॥
गव गवाच्छ अरु पनस प्रवीरा ।
औ नल नील महा रनधीरा ॥
औरहु भालु कीस बहुतेरे ।
सुभट एक ते एक घनेरे ॥
बैठे सब कपिपति रुख पाई ।
लङ्क-कथा युवराज सुनाई ॥
ह्वै निसंक दसमुख गढ़ माँहीं ।
दैहै युद्ध बिना सिय नाँहीं ॥
यातै और विचार न कीजै ।
सपदि घेरि अरि कौ पुर लीजै ॥
रन-खेतन दससीस की प्रबल सैन विचलाय ।
लाय जानकिहि देखि है सबै नाथ के पाय ॥

२

अंगद वचन सबन प्रिय लागे ।
भालु कीस जनु सोवत जागे ॥

'जयति राम जय' लखन पुकारी ।
एकै स्वर सब गिरा उचारी ॥
अब प्रभु नेकु विलम्ब न कीजै ।
हमहि समर हित आयसु दीजै ॥
तव प्रताप-बल सहज असंका ।
अब ही चूर करैं गढ़ लंका ॥
सकुल दसानन समर सँहारैं ।
राज विभीषन को बैठारैं ॥
जौ न इतौ कारज करि आवैं ।
तौ नहिं आनन प्रभुहि दिखावैं ॥
तब कपीस बोले मुसकाई ।
करहु राम कारज सब जाई ॥
कालिहि लेहु लंक गढ़ घेरी ।
साजि भालु-कपि-सेन घनेरी ॥
अरुनोदय के प्रथम ही, घेरहु चारिहु द्वार ।
अरु निज कोप कृसानु में, करहु लंक गढ़ छार ॥

३

होत प्रभात भालु कपि जूहा ।
लंका ओर चले करि दूहा ॥
जब दसकंधर यह सुनि पायौ ।
अति बल सुभट समूह पठायौ ॥
पूरब हनूमान बलवीरा ।
पच्छिम नील महा-रन-धीरा ॥
दच्छिन जामवन्त चढ़ि घेरो ।
उत्तर कुमुद करत बढ़ि फेरो ॥
चारिहु द्वारनि या विधि घेरी ।
ठाढ़ी विकट कटक बहुतेरी ॥
केहरि नाद भालु कपि करहीं ।
दिगवारन जेहि सुन चिक्करहीं ॥
इत दसकंधर के बहु योधा ।
रन हित सिमिटि बैठ करि क्रोधा ॥

लागे भीषण अस्त्र चलावन ।
गढ़ ते उन्नत सिखिर ढहावन ।।
गिरत सिखिर कपि कटक पै, वै नीचे दबि जात ।
तजत प्रान समुहे लरत, नैकु न हीय डरात ।।

४

उत्तर द्वार कुमुद कपि घेरे ।
लीन्हे विकट सुभट बहुतेरे ।।
लगे भालु गिरि सिखिर प्रहारन ।
उत गढ़ तें राकस सर मारन ।।
स्रमित युद्ध कपि-पति जब देखा ।
अपने जिय अचरज करि लेखा ।।
तब कुमुदहि निज निकट बुलायौ ।
अरु या विधि सौं मंत्र दृढ़ायौ ।।
"सैनिक कछुक द्वार तें आगैं ।
कायर सरिस छाड़ि रन भागैं ।।
राकसगन तिनकौ पछुवे हैं ।
ह्वै है जहाँ तहाँ तै धैहैं ।।
तब दृढ़ व्यूह सिथिल ह्वै जाई ।
पलटि देहु करि आपु चढ़ाई ।।
यद्यपि कपिपति आयसु दीन्ह्यौ ।
पै नहिं कान भालु कपि कीन्ह्यौ ।।
हौ तुम सब सैनिक नये नहि जानत रन-घात ।
छाड़ि वीरता दर्प निज, मानि लेहु यह बात ।।"

५

तब सँकेत कपिपति कौ पाई ।
भाग्यो भभरि कीस समुदाई ।।
भागत कपिन निहारयौ जब ही ।
धाये जातुधानगन तब ही ।।
धावा पलटि कुमुद करि दीन्ह्यौ ।
अनायास तेहि द्वारहि छीन्यौ ।।
अन्ध-धुन्ध ता खन रन भयऊ ।
राकस कटक जूझि बहु गयऊ ।।

निरभय कुमुदहि बढ़त निहारी ।
धावा वीरबाहु असि धारी ॥
कुमुदहि आयुध रहित बिलोकी ।
एक पल खड़ौ रह्यौ रिस रोकी ॥
मल्ल युद्ध हित ताहि प्रचारा ।
कुमुदहु बढ़ि आगे ललकारा ॥
ताल मारि तेहि सौं कपि बाजा ।
भिरे जुगुल मानहु गजराजा ॥
वीरबाहु बहु बल कियौ, गयौ तऊ वह हारि ।
कुमुद कोप करि तासु जुग, डारचौ भुजा उपारि ॥

६

वीरबाहु महि गिरत निहारी ।
धाये कोपि भालु कपि धारी ॥
निरभय बढ़न लगे कपि आगे ।
राकसहू बढ़ि जूझन लागे ॥
कोपि मकर-लोचन तब धायौ ।
बानन मारि कपिन विचलायौ ॥
झेलत विषम बार बहुतेरे ।
पहुँच्यौ कुमुद तासु के नेरे ॥
झपटत बाज लवा पर जैसे ।
बढ़्यो मकरलोचन दिसि तैसे ॥
तोर्‌यो पद-प्रहार सौ स्यन्दन ।
अस्व सारथी कियौ निकन्दन ॥
ताके बच्छ लात एक मारा ।
मुखतें बही रुधिर की धारा ॥
सहसा गिरयौ जूझि महि माँहीं ।
रही नेकु ताकौ सुधि नाँहीं ॥
जूझौ जब मकराच्छ रन, माच गौ हाहाकार ।
घुसे भालु कपि लंक मैं, टूटि गयौ वह द्वार ॥

७

टूटत द्वार भयौ रव भारी ।
परी नाव जनु भँवर मँझारी ॥

हाहा दूत सैन महँ भयऊ ।
चारिहु हत एकै मिलि गयऊ ॥
जब यह समाचार सुनि पावा ।
मेघनाद अति रोष बढ़ावा ॥
हनूमान तहँ करत लराई ।
छोड़त द्वार महा कठिनाई ॥
पर्वत बहु मारे हनुमाना ।
कियौ मारि सिर रेनु समाना ॥
पवन-तनय उर उपज्यौ क्रोधा ।
गरज्यौ प्रलय जलद सम योधा ॥
धायौ मेघनाद दिसि कैसे ।
झपटत हरि मृग सिसु पर जैसे ॥
दसमुख सुत निज धनुष सँभारयौ ।
सरन मारि जरजर करि डारयौ ॥
मारयौ तीखन बान उर, मुरछि गिरे हनुमान ।
कीन्ह्यौ मारुत देव नै, निज बल सुतहि प्रदान ॥

८

मुरछित भये पवन सुत जबहीं ।
पूरयौ संख वीरवर तबहीं ॥
रवि रथ चलन लग्यौ निज धामा ।
आई पुनि घनघोर त्रियामा ॥
उत राकस निज दुर्ग सिधाये ।
इत कपि भालु सैल पर आये ॥
घननादहि निज निकट बुलाई ।
पूछ्यौ राकसराज रिसाई ॥
"कहा आजु तुमको ह्वै गयऊ ।
जीवत पवन-सुवन जो गयऊ ॥
कोउ प्रवीर तुम सम जग नाहीं ।
तदपि नहीं मारे कपि जाहीं ॥
सकल देव - सेना संहारयौ ।
भयौ आजु बल व्यर्थ तुम्हारौ ॥"

पितु वच सुनि घननाद लजाई।
कह्यौ जोरि कर कछुक रिसाई॥
जौ न प्रात रनखेत मैं मारहु तापस-भाय।
तौ अपनौ मुख नाथ कौ फिरि न दिखावौं आय॥

९

सुनि सतोष दसमुख बहु भायौ।
मेघनाद निज मंदिर आयौ॥
करत विचार भयौ भिनुसारा।
लगे भालु कपि चहुँ दिसि द्वारा॥
होत प्रात निज आयुध बाँधे।
रन हित चल्यौ धनुष-सर साँधे॥
चढ़ि रथ प्रात भानु सौ राज्यौ।
चलत साथ राकसगन गाज्यौ॥
चल्यौ लंक तैं सुभट समूहा।
चतुरानन मुख जिमि श्रुति जूहा॥
रावन सुतहि युद्ध थल देखी।
कपिन हृदय भय भयौ बिशेषी॥
तौ लगि लखन साधि धनु बाना।
आगे बढ़े कृतान्त समाना॥
रन मैं तिनहि पदाति निहारी।
द्वै रथ भेजि दियौ असुरारी॥
राम लखन जुग रथन पै सानँद भये सवार।
करत घोर निज संख रव, आये सैन मँझार॥

१०

रावन सुतहि बढ़त जब ताक्यौ।
लछिमन तब आगे रथ हाँक्यौ॥
लागे करन कठिन सर जाला।
करि फुङ्कार चले जनु व्याला॥
या विधि राम बन्धु सर छार्यौ।
अवनि अकास बान तै पार्यौ॥
निज धनु मेघनाद टंकोरा।
चौदह भुवन भयौ रव घोरा॥

सर निवारि लछिमन-सर काट्यौ।
दसौं दिसा बानन सौं पाट्यौ॥
या विधि बान बुद्ध झरि लायौ।
वानर भालु मारि विचलायौ॥
अन्ध-धुन्ध रन भयौ अबूझा।
अवनि अकास कछू नहिं सूझा॥
इत रावन उत राम दुहाई।
जयति जयति कहि परी लराई॥
लछिमन अरु घननाद मैं होत घोर संग्राम।
लखत हस्त-कौसल समुद, निज रथ बैठे राम॥

११

लछिमन निज मन कीन्ह विचारा।
करौं विरथ लंकेस कुमारा॥
अस गुनि सत सहस्र सर मारयौ।
स्यन्दन सून वाजि हनि ठारयौ॥
विरथ भयौ रावन-सुत जबहीं।
कियो संख धुनि लछिमन तबहीं॥
उतै बिरथ लंकेस कुमारा।
भयौ आन रथ आय सवारा॥
अरु सारथि स्यन्दन पलटावा।
लै लछिमन सम्मुख पहुँचावा॥
निज धनु कठिन स्रवन लगि तानी।
बोल्यौ मेघनाद इमि बानी॥
अब लछिमन रन करहु सँभारा।
आजु परखिहौं तेज तुम्हारा॥
अस कहि कोपि कठिन सर मारा।
बही प्रवाह रुधिर की धारा॥
लाग्यौ तीखन बान उर; व्यापी तन बहु पीर।
अरु सोनित की धार सौं भीज्यौ सकल सरीर॥

१२

जौ लगि लछिमन आपु सँभार्‌यौ।
वारिद नाद सेन बहु मार्‌यौ॥

जैसे बाज लवा संहारै।
खगपति अही-विरूथ जिमि मारै॥
जथा सिंह करि निकर बिदारै।
जिमि तम-तोम भानु कर फारै॥
प्रबल पवन वन कदलि गिरावै।
जिमि तुपार सरसिज बिनसावै॥
सम्मुख सैन देखि जौ पाई।
वारिद नाद मारि विचलाई॥
अमित बान बीरन के लागे।
थकित भये पग बढ़त न आगे॥
देख्यो लखन भयावन खेता।
लीन्ह्यौ धनुप कीन्ह चितचेता॥
प्रबल तेज सोनित सर मारे।
मेघनाद सब काटि निवारे॥
काट्यौ सब अरि के बिसिख, अरु कीन्ह्यो सरजाल।
हन्यौ कोपि लछिमन हिये, केतिक बान कराल॥

१३

तब लछिमन निज तेज सँभारा।
रावन सुतहि कोपि ललकारा॥
बरसन बान जलद सम लागे।
राकस विकल प्रान लै भागे॥
कह्यौ कड़कि घननाद रिसाई।
प्रान हेतु किमि रहे पराई॥
नृप-सुकेश–कुल विमल–मयंका।
लग्यौ जात तेहि माँहि कलंका॥
अस कहि वज्र सक्ति कर लीन्हा।
हिये सम्भुपद सुमिरन कीन्हा॥
कामुक कोपि स्रवन लगि ताना।
छूटत सक्ति सब्द घहराना॥
छिटकी जोति चली नभ कैसे।
ग्रीषम के प्रचण्ड रवि जैसे॥

लागी हृदय परत नहिं सूझी।
रथ गिरि परे लखन तब जूझी॥
वज्र सक्ति के चलत नभ देख्यौ राम उज्यार।
सुन्यौ जबहि लखनहि गिरे, तब हिय भयो सँभार॥

१४

विचलत सेन राम जब जान्यौ।
आगे ह्वै कै सारँग तान्यौ॥
सर सौं मारु भयानक कीन्ह्यौ।
कीसन बहुरि समर मन दीन्ह्यौ॥
उत रावन सुत अति रन-रंगा।
सम्मुख चल्यौ तानि सारंगा॥
भयौ राम सौं रन अति घोरा।
लागे चलन बिसिख चहुँ ओरा॥
समर सुभट दससिर सुत कोपा।
बानन मारि राम रथ रोपा॥
या विधि बान अस्व-तन लागे।
सिथिल भये पग धरत न आगे॥
पुनि सकोप धनु सायक साध्यौ।
नाग पास सेना सब बाँध्यौ॥
व्याल-पास-वस भये खरारी।
यद्यपि जगत एक धनु धारी॥
इमि कपि कटक बिहाल करि अति रव संख बजाय।
मेघनाद निज सैन सँग चल्यौ लंक हरषाय॥

१५

इतै राम मुरछा तजि जागे।
अरु लछिमन कहँ पूछन लागे॥
नाग-पास-वस सैन निहारी।
भये व्यथित निज हीय खरारी॥
सुमिरि पच्छिराजहि बुलवायौ।
अति दृढ़ नागपास कटवायौ॥
कह कपीस लछिमन दिसि ताकी।
हिय रहि गई धुकधुकी बाकी॥

अंजनि-सुवन लंकगढ़ जानौ।
वैद सुखेनहि इत लै आवौ॥
लंका गये पवन सुत धाई।
जाय सुखेनहि बात जनाई॥
आये वैद्य लंकपति पासा।
कियौ वचन यहि भाँति प्रकासा॥
भेज्यौ दूत राम मोहि ल्यावन।
"तुरतहि जाहु तहाँ" कह रावन॥
आवत वैद्य सुखेनन कीन्हों सफल उपाय।
दै सजीवनी लखन के, लीन्ह्यौ प्रान बचाय॥

१६

समर खिन्न रामहिं गुनि लीन्हा।
रावन प्रात न रन मन दीन्हा॥
लछिमन जिये "सुन्यौ घन नादा।
भयौ तासु हिय अमित विषादा॥
व्याल पास काटी उरगारी।
सो सुनि भयो सोक हिय भारी॥
नृप सुत निकुंभिला चलि आयौ।
अरु सुक्रहि तहि ठाम बुलायौ॥
रिपु जय-यज्ञ करत मन लाये।
उतहि विभीषन राम बताये॥
"जो यह मष पूरन ह्वै पाई।
नाथ! अजय रिपु जीति न जाई॥
मेरे साथ लखन कौ कीजै।
करैं भंग मष आयसु दीजै॥
जौ अनुकूल सुअवसर पैहौं।
ताहि मारि जमलोक पठैहौं॥"
गये विभीषन लखन लै, जहँ निकुंभिलागार।
घुसे जाय मष भौन महँ इन रोक्यौ सो द्वार॥

१७

देख्यौ तेहि बैठ्यौ कुस-आसन।
करत यज्ञ प्रज्वलित हुतासन॥

इष्टदेव लछिमन कहँ मानी।
रावन सुत बोल्यौ इमि बानी॥
"आजु भाग लंका के जागे।
देख्यो मूर्तिमान प्रभु आगे॥"
यह कहि आसन दियौ बिछाई।
कह्यौ सुक्र तब गिरा सुनाई॥
"भूलि काहि सुत! करत प्रनामा।
आयौ राम बन्धु यहि ठामा॥
पै घननाद न नेकु सकान्यौ।
मृदुल वचन यहि भाँति बखान्यौ॥
"पहले अर्ध्यपाद लै लीजै।
बहुरि अपन आयसु मोहि दीजै॥
भये आजु तुम अतिथि हमारे।
कहत सत्य सब बैर बिसारे॥"
कह्यौ लखन जड़ मंदमति; मोहि अतिथि जनि जानु।
मूर्तिमती तव मीचुहीं अस अपने मन मानु॥

१८

अस कहि कठिन कृपान निकारी।
कह्यौ वचन यहि भाँति उचारी॥
"सँभरु मूढ़ हौं मारत तोहीं।
याते प्रथम युद्ध दै मोहीं॥"
कह रावन तोहि लाज न आवत।
जौ निरस्त्र पै अस्त्र चलावत॥
मौंहू निज आयुध लै आऊँ।
सब तुम्हरौ बल दर्प हटाऊँ॥
छत्रि धर्म तुम नेकु न जानत।
भूलि वचन यहि भाँति बखानत॥
खगपति गहे व्याल घुसि खावत।
जीवत कबहुँ जान नहिं पावत॥
तस्कर सम प्रविस्यौ मम धामा।
लायौ कौन तुमहिं यहि ठामा॥

असकहि घंट सकोपि प्रहार्‌यौ।
लछिमन सोस ताकिकै मार्‌यौ॥
रामानुज मूर्छित गिरे तुरत गेह के द्वार।
रावनि बाहर जान हित दीन्ह्यौ खोलि किवार॥

१९

बाहर पाँव धर्‌यौ तिम जबहीं।
देख्यौ खड़े बिभीषन तबहीं॥
सहमि गयौ निज हिय घननादा।
कह्यौ बचन इमि सहित बिषादा॥
"जानि गयौ सिगरौ मैं कारन।
भाग्य दोप को करै निवारन॥
हाय तात! यह काम तुम्हारा।
कियौ सकल राकस कुल छारा॥
राज्य-लोभ तुम्हरे हिय आयौ।
कुल-गौरव तुम सकल गँवायौ॥
दसकन्धर सम बन्धु तुम्हारे।
जिन सौं सकल सुरासुर हारे॥
वासव कौ रन जीतन वारौ।
बन्धु पुत्र हौं कका तुम्हारौ॥
सो सब लाज दीन्ह तुम त्यागी।
बने सत्रु-चरनन अनुरागी॥
पतन तुम्हारौ देखि मोहि नहिं जीवन की चाह।
भारत लंक अराति कौ याही रही उमाह॥"

२०

कहि घननाद बढ़्‌यौ कछु आगे।
ताहि विभीषन रोकन लागे॥
मूर्छा विगत लखन तब जागे।
काँपन लगे अमित रिस पागे॥
'सँभरु मूढ़' कहि खड्ग प्रहार्‌यौ।
करि अति क्रोध तासु रिस मार्‌यौ॥
ताकौ सीस काटि इन लीन्ह्यौ।
अरु अपने मग पै पग दीन्ह्यौ॥

सुत-बध सुन्यौ दसानन जबहीं।
कीन्ह्यौ अमित सोक हिय तबहीं॥
पै नहि नैनन वारि बहायौ।
नारिन ढिग बुलाय समुझायौ॥
"काल्हि साँझ लौं धीरज धारौ।
मानि इतौ अनुरोध हमारौ॥
प्रात होत घट करन जगैहौं।
लखन विभीषन पकरि मँगैहौं॥
तुम सबही के सामने, तिनके सीस कटाय।
बदलौ निज सुत घात कौ, तिनसों लेहु चुकाय॥"

२१

प्रातहि सुवन क्रिया करवाई।
बैठी चिता सुलोचनि जाई॥
जदपि सबन अँसुवा दृग ढारचौ।
पै न आइ दसकन्ध निकारचौ॥
करि सुत क्रिया लंकगढ़ आयौ।
अरु घटकरनहि जाय जगायौ॥
कुंभकरन बैठ्यौ उठि जबहीं।
रावन कह्यौ हाल सब तबहीं॥
बन्धु कपट की सकल कहानी।
कह्यौ आपु दसकन्ध बखानी॥
तब घटकरन कह्यौ अनखाई।
"पहले क्यों न जगायौ आई॥
अबहि जाय लछमनहिं संहरिहौं।
तथा विभीषन जियत पकरिहौं॥"
अस कहि कै कछु भोजन कीन्हा।
बन्धु चरन गहि रन मन दीन्हा॥
कुम्भकरन गिरिशृंग सम, आवत परचो लखाय।
निरखि रिच्छ कपि सैन तेहि, भयत्रस चलो पराय॥

२२

वारिद नाद निधन सुनि पायौ।
सुरपति सपदि राम ढिग आयौ॥

कह्यौ "देव-सेना प्रभु सारी।
करिहैं आजु सहाय तुम्हारी॥
तुरत बुलाय सम्भुसुत लीन्हा।
ब्यूह रचन हित आयसु दीन्हा॥
जब सुरेस अनुसासन पायौ।
गृद्ध ब्यूह गुह सुदृढ़ बनायौ॥
आपुहि ब्यूह द्वार पर आई।
रथ बैठे निज चाप चढ़ाई॥
देखत कुम्भकरन कहँ आगे।
वाहन सकल विडरिकै भागे॥
सुनत तासु वारिद सम नादा।
लगे देवगन करन विषादा॥
सुरगन दसा भई जब ऐसी।
बीती भालु कपिन पै कैसी॥
डोलन लागी तब धरा दिग्गज कियौ चिकार।
देव ब्यूह टूटन लगे, रह्यौ न नेकु सँभार॥

२३

कुम्भकरन जब ढिग नियरान्यौ।
गह सर जोरि सरासन तान्यौ॥
प्रबल तेज सोनित सर छूटे।
कुलिस सरीर लागि सब टूटे॥
ताहि कुधर सम अचल विलोकी।
रोष कुमार सक्यौ नहि रोकी॥
वज्रबान करि क्रोध प्रहारा।
रावन अनुज हिये तकि मारा॥
वंक बिलोकनि गुहहि निहारी।
धावा सिंहनाद करि भारी॥
रथ नीचे निज गदा लगायौ।
लै भुज बल गुह सहित उठायौ॥
करि अति क्रोध फेंकि पुनि दयऊ।
गिर्‌यौ न बीच कोस द्वै गयऊ॥

उठि सिव सुवन पयादेहि धायौ।
इत घटकरन ब्यूह मँह आयौ॥
धावत रन उनमत्त लौं, करब गदा परिहार।
भालुकीस अरु देवगन मारी सेन अपार॥

२४

अंगदादि कपिपति तब धाये।
नील पनस हनुमत चलि आये॥
सब मिलि कै घटकरन प्रचारा।
मल्लयुद्ध तहँ भयो अपारा॥
कुम्भकरन करि क्रोध निहारा।
तिनहिं पटकि रन खेत पछारा॥
भागी सेन धरत नहिं धीरा।
कह्यौ इन्द्र सन तब रघुबीरा॥
"तुम ससि मिलि सब सैन सँभारौ।
मै बढ़िकै याकौ रन मारौं॥
अस कहिकै निज धनुष चढ़ाई।
दियो राम रथ कोपि बढ़ाई॥"
रामहि लखौ सामुहे ठाढ़ा।
लाग्यौ कुम्भकरन हिय दाढ़ा॥
मारि हाँक रघुबरहि प्रचारी।
सम्मुख बढ्यौ महा बलधारी॥
ह्वै निरभय रघुनाथ सौं, रच्यौ महा रन रंग।
गदाघात चूरन कियौ, रथ, सारथी तुरंग॥

२५

भये विरथ रघुपति रन जब ही।
कीन्ह्यौ सिंहनाद तिन सब ही॥
सो सुनिकै कपि मातु डराने।
धाये कोपि राम धनु ताने॥
जे सर गाधि सुवन सौं पाये।
ह्वै सरोष सोइ बान चलाये॥
दोऊ भुजा काटि महि डारे।
भल्लक बान सीस पर मारे॥

बज्र बिसिख हिय माहि प्रहारा।
उर ते बही रुधिर की धारा॥
तदपि पाँव पीछे नहि धरेऊ।
चरनि प्रहारि महा रन करेऊ॥
लखि रघुनाथ कीन्ह अति कोपा।
सरन मारि वाकौ मग तोपा॥
खैंचि चाप तकि बिसिष प्रहार्‌यौ।
वाकौ सीस काटि महि डार्‌यौ॥
'जयति राम जय जय लखन कह्यौ कपिन करि हूह'।
भय व्याकुल गढ़ लंक में प्रविस्यौ राकस जूह॥

२६

बन्धु निधन रावन सुनि लीन्ह्यौ।
महा क्रोध अपने मन कीन्ह्यौ॥
भट समूह निज निकट बुलाई।
तिन सों कह्यौ बात समुझाई॥
जो कोउ चहै जाय वरु सोई।
पै रन बिमुख होय नहि कोई॥
अस कहि विकट कटक सजवाई।
चल्यौ यान चढ़ि चाप चढ़ाई॥
फिरत यान कै चक्र अगारी।
तिनते निकरि रही चिनगारी॥
इत सुरेस कौ आयसु पायौ।
चक्र-व्यूह षटबदन बनायौ॥
खड़े द्वार रच्छा ह्वै आपू।
लीन्हे हाथ कठिन सर चापू॥
व्यूह द्वार षटमुखहि निहारी।
अचरज कियो दसानन भारी॥
कह्यौ वीरवर करि कृपा, छाँड़ि द्वार अब देहु।
हौ मेरे गुरु पुत्र तुम, मानत बन्धु सनेहु॥

२७

षटमुख कह्यौ करौ का माई।
है करतव्य अमित दुखदाई॥

हौ हीं देव-चार-चय नायक।
याते तिनको भयौ सहायक॥
यह नित पच्छपात अवराधत।
वीरन कौ सनेह मै बाधत॥
अस कहि सर को दन्ड चढ़ायौ।
होहु सजग कहि बात चलायौ॥
तज दससिर निज धनुष सँभारा।
लाग्यौ मारन बान अपारा॥
छिन महँ देव चमू चय काटी।
दीन्ह मिलाय मास अरु माटी॥
अर्ध चन्द्र सर यहि विधि छाड्यौ।
सिवसुत धनुष कोप करि काट्यौ॥
अपर बिसिष करि कोप प्रहार्यौ।
चारिहु तुरग सारथी मार्यौ॥
खैंचि चाप पुनि स्रवन लौं, कीन्ह्यो बिसिप प्रहार।
विषम बान उर मैं लग्यौ, मुर्छित गिरे कुमार॥

२८

जब षटमुख रन मुरछित भयऊ।
वीरभद्र तिनकौ लै गयऊ॥
रावन विकट कटक रन काटत।
आगे बढ़्यौ भूमि को पाटत॥
निज दल विकल विलोक्यौ जबहीं।
सुरपति गजहि बढ़ायौ तबहीं॥
लंकनाथ करि क्रोध अपारा।
गदा एक गज के सिर मारा॥
बही प्रवाह रुधिर की धारा।
धरनि गिर्यौ करि घोर चिकारा॥
निज कर कुलिस देवपति लीन्ह्यौ।
करि अति कोप प्रहारन कीन्ह्यौ॥
ह्वै छत गई वीर की छाती।
पग पाछे नहि दीन्ह अराती॥

दससिर कोपि धनुष सर साध्यौ।
नागपास सक्रहि गहि बाँध्यौ॥
बँधे पास इन्द्रहि निरखि, भागे देव डेराय।
तबहि राम रावन निकट धाये रथ धौराय॥

२६

रामहि देखि निकट नियरान्यौ।
दससिर कोपि सरासन तान्यौ॥
बरसत बान झुकत अँधियरी।
भाँदव जलद घटा जनु कारी॥
दससिर इमि कीन्हीं प्रभुताई।
मारि भालु कपि सेन भगाई॥
या बिधि बान बुन्ध झरि लाई।
रन मैं रुधिर नदी बहि आई॥
जहँ सर धार बहत बिकराला।
गज बिसाल सोई जुगुल किनारा॥
भ्रमत सेन आवर्त समाना।
बहत जात कच्छप जनु नाना॥
चमकत खंग परे सरि माहीं।
तेई मीन समान लखाहीं॥
साजो सायं जाननहि जाने।
बार सेवार सरिस उरझाने॥
यहि विधि दसमुख राम सौं भयौ भयावन खेत।
नाचत चौसठि योगिनी, रुधिर पियत युत प्रेत॥

३०

निज कर खैंचि कोपि कोदंडा।
छाड्यौ राम नराच प्रचंडा॥
अवनि अकास बान ते छाये।
रवि रथ कोउ देखि नहि पाये॥
आवत देख्यो बिसिख अपारा।
दसमुख अग्नि बान फटकारा॥
प्रबल सिखा पावक बरजोरा।
जारन लगी सरन चहुँ ओरा॥

तब रघुपति जस बान चलायो।
पल मारत सब अनल बुझायो॥
दससिर तज्यौ पवन के बाना।
छनक मांहि सब सलिल सुखाना॥
अहि सर राम चलायौ जबही।
नागन पवन भख्यौ सब तबहीं॥
बर्हिवान दससीस चलायौ।
मोरन व्याल वृन्द गहि खायौ॥
अंधकार को विसिष तब राम प्रहार्यौ कोपि।
निसित बान बरसाय बहु दयौ संभु रथ तोपि॥

३१

पढ़ि रवि मंत्र-वीर सर मारा।
चहुँ दिसि फैलि रह्यौ उजियारा॥
तबहि राम परवत सर मारा।
गिरन लगे चहुँ ओर पहारा॥
राख्यौ थामि सूत रथ घोरे।
दससिर बज्र वान गुन जोरे॥
गिरि ते भयौ बज्र जब दूनौ।
फोरि पहार कियौ सब चूनौ॥
निसित विसिख तब राम प्रहार्यौ।
धनु गुनि खण्डि तासु करि डार्यौ॥
जौ लगि दससिर धनुष सँभार्यो।
अर्ध चन्द सर रघुपति मार्यौ॥
काटि सीस रावन कौ लीन्ह्यौ।
'जय जय कार' सुरन मिलि कीन्ह्यौ॥
राकस वृन्द अमित भय पागे।
सकल भभरि लंका दिसि भागे॥
तबहि बिभीषन राम कौ रन में आयसु पाय।
करी क्रिया दोउ बन्धु की सागर के तट जाय॥

३२

बिलपत नारि वृन्द बहु भाँती।
सो दुख कथा कही नहि जाती॥

मंदोदरिहि बहुत समुझायौ ।
धान्यमालिनिहि धीर बँधायौ ॥
इत रघुपति निज अनुज पठायौ ।
छत्र बिभीषन सीस धरायौ ॥
साज्यौ सकल तिलक कौ साजा ।
कियौ तिन्हैं लंका कौ राजा ॥
सिविका सुघर एक सजवाई ।
लछिमन साथ सियहि पठवाई ॥
रत्न रासि पट भूषन नाना ।
अतुल द्रव्य नहि जाय बखाना ॥
लाय बिभीषन रामहि दीन्हा ।
अरु कर जोरि विनय बहु कीन्हा ॥
पुष्पक यान साथ लै आयौ ।
प्रभु पद जलद सीस पुनि नायौ ॥

राम लखन सिय कपि कटक चढ़ हरपि हिय यान ।
राछस पति कौ अभय दै, कीन्ह्यौ अवध पयान ॥

किय अवध राम पयान राकस-पति हरपि लंका गये ।
अरु होन लागे राज्य पावन के नितहि उत्सव नये ॥
रहि गयौ धन नहि पास नित नव कर लगावन हू लगे ।
याते प्रजा के भाव सब प्रतिकूल नरपति के जगे ॥

चौदहवाँ सर्ग

१

सीतल स्वच्छ सुगन्ध समीर।
प्रभात की मंद ही मन्द बहै लगी॥
औ उठि कै निज काजनि में लगौ।
या विधि मानौ संदेस कहै लगी॥
कूजन सौ विहगावली के।
अँखियानि मैं रोकै न नींद रहै लगी॥
त्यों दिन नायक कौं कै प्रनाम।
उषा-रमनी गृह गैल गहै लगी॥

२

कैतिक द्यौस बिताय कै सोक में।
भागिन की सौ घरी वह आई॥
भैरवी राग को तान अलापि कै।
द्वार पै बाजै लगी सहनाई॥
उत्सव ऐसो भयो नहीं वा दिन।
जा दिन राज बिभीषन पाई॥
त्यों ही मंदोदरी के हिय माहिं।
बिचार की धारा उठी उमगाई॥

३

सो कर कैसे गहै जेहि ने।
अरि कौ पति-घात-उपाय बतायो॥
त्यौं घननाद से सूर-सपूत कौ।
जाने खड़े-खड़े सीस कटायो॥
कै छल बैरिन कौ दै सहाय।
भली विधि वंस कौ छार करायौ॥
देस, औ राष्ट्र और जाति को गौरव।
जाने सबै निज हेतु नसायो॥

४

पै अब कौन उपाय करैं।
जेहि तै अपनी मरजाद बचावैं॥
औ कुलघाती बिभीषन के—
परयंक की छाँह छुवै नहिं पावैं॥
ये कुटिनी कुतिया सी फिरैं।
दिन रात सबै हम को फुसिलावैं॥
लंक की रानी बनो रहिबै कौ।
चढ़ौ बढ़ौ लालच मोंहि दिखावैं॥

५

कौन सौ बैभव ऐसो रह्यो।
जेहिके सुख कौ अनुभौ कियो नाहीं॥
जीवन-नाथ रहे जब लौं।
तब लौं दुख छ्वै न सक्यौ परछाँहीं॥
जात अमोद प्रमोद के साज—
रहे जित ही जित ही हम जाहीं॥
ही बड़भागिनी मेरे समान।
नहीं नवला जगतीतल माहीं॥

६

पुष्प-विमान में नाथ कौ हाथ।
गहे-गहे व्यौम-विहारनि कै चुकी॥
देव-तिया-सिर-चँद्रिका-चारु।
हमारे दुऔ-पद-पंकज छ्वै चुकी॥
त्यौं अमरेस-समाज हमें।
कर जोरे खड़ी अभिनन्दन दै चुकी॥
बानी मघौनी उमा औ रमा।
के समान ही धन्य सुहागिनी ह्वै चुकी॥

७

ये अधमा कुटिनी नितै आय।
यहाँ लगि तौ कहती हम पाहीं॥
"एकै जो कंजकली न खिली।
तौ कहा कहो मौर कौ ठौर है नाहीं"॥

कंज-कली की बलाय सौं मार मैं।
मौर समूह चले भले जाहीं ॥
सूप सौं सावन की सरिताहि।
कबौ कोउ रोक सक्यौ जग माहीं ॥

८

हौ न कोऊ यहि ठौर कहा।
कुलटानि कौ दै गलबाँह निकारौं ॥
त्योंही लुकेठनि लै कर मैं,
दई मारे बिभीषन कौ मुख जारौं ॥
राम कौ नाम लगावत-मूढ़।
कहै यहि मै अब कौन है चारौ ॥
नारि के हेतु अकेलेहु पै।
लरिकै जिन रावन सौ अरि मारौ ॥

९

ह्वै गयौ हाय कहा यहि कौ।
तनि तौ यहि नीच की देखौ ढिठाई ॥
रावन से जग-एक-प्रवीर की।
नारि कौ मूढ़ रह्यौ हथियाई ॥
सिंह कौ भाग लह्यौ ससि ने।
पुरोडास सक्यो कहूँ रासभ खाई ॥
औ बिनता-सुत की बलि पै।
भला काग सक्यो कहूँ दीठि लगाई ?

१०

हा दई कैसी करौ अब तौ।
कपिला परी जाय मलिच्छ के पाले ॥
आजु मृगी करि दीन्हीं गई।
दुरभागिन सौं हहा व्याध हवाले ॥
देखते लाज लुटी यह जात है।
बोलि सकौं न परे मुख ताले ॥
हेरौ करै रुख जै हमरो।
ते दिखात न आजु बचावन वाले ॥

११

सैनिक हू अब साथ नहीं।
जिनके बल पै यहि नीचै प्रचारौं॥
रोवत-रोवत छीन भयो तन।
कैसे सरासन कौ कर धारौं॥
ह्वै अबला खल के परी फंद में।
का विधि सौं अब याहि निवारौं॥
कौन उपाय सौं हे ससि-भाल!
अचानक आई बिपत्ति कौ टारौं॥

१२

पै विधि वाम कौ बाम नै जानि।
परिस्थिति कौ प्रतिकूल बिलोकी॥
त्यों हिय दुर्बल भावनि और।
अवेगनि कौ हठि कै लियो रोकी॥
थोरिहिं देरि मै धीरज धारि कै।
मंदोदरी बनी ऐसी बिसोकी॥
दूतिनि की निर्लज्जता-पूरन।
कैसिहु बातन कौ नहीं टोकी॥

१३

एतैहि मै तहँ नाइनियाँ।
महारानी के मंदिर में चलि आई॥
बैठि गई अवनी पर बाम।
दुऔ पद-पंकज सीस नवाई॥
और कह्यौ ह्वै बिलम्ब गयो—
चलिये अब देहिं तुम्हैं अन्हवाई॥
सो सुनि मन्दोदरी निज भाव।
दुराय कै मन्द उठी मुसक्याई॥

१४

लै गई न्हान थली कौ लिवाय।
मन्दोदरी कौ तिय सीधे सुभायन॥
त्योंही उतारि धरी अँगिया।
लख्यौ पंकज के रँग सी सब ठायन॥

जावक एड़िन मै न लग्यौ ।
तऊ धोवती धूलि गुलाब के झाँयन ॥
देखै जकी सी खड़ी छबि कौ, वह ।
पाँय तै सीस लौं, सोस तै पाँयन ॥

१५

रूप रती कौ रती कौ रह्यौ ।
न तिलोतमा हू तिल तूलती याकी ॥
ह्वै गये मार-नराच सबै ।
हरुये, लखि बंक बिलोकनि वाकी ।
तीनिहू लोकनि की बनितानि की ।
ह्वै गई मन्द निहारतै झाँकी ॥
पै बिधि-बाम कौ काह कहै ।
पय फेनु कौ फोरि लख्यो पवि-टाँकी ॥

१६

ताहि न्हवाय अँगोछि कै गातनि ।
औ अंगरागनि दीन्ह्यो लगाई ॥
भाल पै केसर-आड़ दियौ ।
तन सारी मजीठी रही छबि छाई ॥
"लंक की रानी बनी रहौ भामिनी"
यौं कहि नाइनियाँ मुसकाई ॥
सो सुनि मन्दोदरी अनखाय ।
लख्यो सुरचाप सी भौंह चढ़ाई ॥

१७

थोरिहि देर मै मालिनियाँ ।
डलिया मै प्रसूननि कौ लिये आई ॥
औ गुहि सोन-जुही के हरा ।
मुसकाय दियो गर मै पहिराई ॥
साजि कै फूलनि सौं अलकावली ।
दीन्ह्यो मृगम्मद-बिन्दु लगाई ॥
तौ मुख की सकलंक प्रभा ।
निसिनाथ सौं लागी करै समताई ॥

१८

तौ लौ बिभीषन की पठई।
परिचारिका लागीं बधाई सुनावन ॥
फूलन - बन्दनि - बारन सौं।
सबै सेवक द्वारन लागे सजावन ॥
प्रेम पगी कोउ आय तिया।
कर मै गहि बीन कौ लागी बजावन ॥
आय गई चुरिहारिन हूँ।
इतने मै तहाँ चुरिया पहिरावन ॥

१९

कोऊ रह्यो जलदेवा नहीं।
अतिसै निज नाह के सोग मै पागी ॥
सोचत दीन दसा सबकी।
जेहि की सिगरी निसि आँखि न लागी ॥
होय गौ दोहद कौ कहा हाय।
बिभावरी मै जो विचारतै दागी ॥
बीन की मंद सुनै धुनि कौ।
धनिमालिनी हू निंदिया तजि जागी ॥

२०

रूखी घनी बिथुरी अलकैं।
अंगुरीनि सौं बाम लगी निरवारन ॥
सारी सुरी की सरौटनि कौ।
अपने कर कंज सौं लागी सुधारन ॥
स्वेद समोई तिया अँगियाहिं।
कछू अँगराय कै लागी उतारन ॥
आजु कहाँ धुनि बीन की होति।
कुतूहल सौं मन लागी बिचारन ॥

२१

सोग समै इमि रङ्ग औ राग कै।
साज - समाज सोहात न कैसे।
लूट्यौ सोहाग गयो जेहि कौ।
सहगामिनी अंग बिभूषन जैसे ॥

ह्वै गयौ हाय कहा ते कहा अब।
लागै हमै सबै ठाठ अनैसे॥
प्रात कौ गावत स्याम कल्यान।
औ साँझ अलापत भैरवी ऐसे॥

२२

लंक कौ आजु सबै विधि सौं।
मिलि देवन दीन औ हीन बिचारौ।
मेल मिलाप के कारज लागि।
बिभीषन ने सुरराजे हँकारौ॥
है यही हेतु सभा मैं रह्यौ लगि।
नाच औ रङ्ग कौ मंजु अखारौ॥
दासिहि से कह्यौ "देखि सबै।
इतै आय कुतूहल मेटौ हमारौ॥"

२३

कान लौं बाये बड़ी अँखियाँ।
त्रिजटा की सुता तहाँ आई सयानी॥
औ अनखैयन सौं लखि कै।
महिषी कौ लियो कर मैं गहि पानी॥
पूँछन लागी कुतूहल सबै।
"तुम देख्यौ सुन्यौ है कछू महारानी॥
होत तुम्हारे परोस कहा।
तुम आजु लौं हाय सकीं नहीं जानी॥

२४

कौ लौं परी रहिहैं दुख-सिंधु मैं।
धीरज सौं यहि कौ कब नाखिहौ॥
आपति-पंक फँसी मरजाद है।
कैसे भला तेहि कौ तुम राखिहौ॥
जो विधि नै लिखि दीन्हौं लिलार।
सबै तेहि कौ निहचै फल चाखिहौ॥
जानि परै न हमैं कछु हू।
अपने मन मैं धौं कहा अभिलाषिहौ॥"

२५

"पूछती हौ 'हम देख्यो कहा'।
सो सबै तुम कौ हौं अबै ही बतावत॥
आज लौं जो कछू कानन सौं सुनी।
सो बिसतार सौं तोहि सुनावत॥
सामुहे ठाढ़ी विपत्ति लखे।
नहीं नैकहूँ धीरज मो मन आवत॥
साहस तौहू समेटि सबै।
केहू भाँति रहौ मन कौ समुझावत॥

२६

बैस कौ भेद विचारती है नहीं।
बातें करै बनि जैसे सहेली।
जानत मेरे हिये की बिथा नहीं।
क्यों बनती इती नेह-गहेली॥
साँच ही साँच कहौ हमसौ।
औ बुझाओ वृथा जनि प्रेम पहेली॥
जाऊँ कहाँ औ कहा करौं बीर।
दई विधि नै करि मोहि अकेली॥

२७

हौं ही सुन्यो गुरु लोगनि सौं।
महराज सुकेस हुते भट-भारी॥
नाना तनै तिनके बड़भागी।
नारायन सौं रन कीन्ह्यौ प्रचारी॥
नाथ सयाने भये जब ही।
तौ धनाधिपै लंक सौं दीन्ह्यो निकारी॥
तीनिहू लोकन कौं तिमि जीति।
दिगंतनि लौं निज कीर्ति पसारी॥

२८

देखिबै को तुम बूझौ कहा।
नहि जानिये और कहा लखिबौ है॥
केतो बड़ो रस-हीन है जीवन।
औ कब लौं धौं हमै झाखिबो है॥

नाह विहीन दुखी विधवानि।
हलाहलै छाँड़ि कहा भषिबो है॥
हेरे दया कै नही जब लौं जम।
तौ लगि प्रानन कौ रखिबो है॥

२६

आपुने ही निज नैननि सौं।
हम नाह को राजभिषेक निहारौ॥
औ भुज-पूजा लखी घन-नाद की।
देव किरीटनि सौं पग झारौ॥
देख्यो सुलोचना कौ मुख मंजुल।
और सबै कछू वा पर वारौ॥
हाटक - लंक - मनोहर - दृश्य।
बिलोकन कौ हुतौ भाग हमारौ॥

३०

सोनित सौं सभी अच्छकुमार की।
लोथि परी महि पै अवरेखी॥
हालै धरा जेहिकै चलतै।
घटकर्न-दसा गई मोपै न देखी॥
त्यों मकराछ, महोदर हू की।
गई रहि हाय कथा अवसेखी॥
वा घननाद की बाँई भुजा।
रघुनाथ के बाननि सौं बिंधी देखी॥

३१

भीपन ज्वाल की जालनि ऊँची।
बिलोक्यौ सुलोचना सी वधू जारत॥
त्यों ही मंदोदरी सी भगिनी कौ।
लख्यो सुत-नाह-वियोग सौं आरत॥
लंक की भामिनी-बृंदनि कौ।
निरख्यो दुःख सो अँसुआनि कौ ढारत॥
सीस - विहीन - कबंध - भुजानि।
रही पति कै निज नैन निहारत॥

३२

देखिबै को अब काह रह्यो।
विधि बाम हमै कहा और दिखैहै॥
लंक की रानी भिखारिनि ह्वै गई।
ठोकरें हाय कहाँ कहाँ खैहै॥
ह्वै अधिकार गयौ अरि कौ।
या अनाथिनी कौन कौ आनन ज्वैहै॥
ढारयौ करै कब लौं अँसुआनि कौ।
भाग मैं जोइ लिख्यो सोई ह्वैहै॥

३३

यौं कहि कैं धनिमालिनी मौन।
भई औ लगी अँसुआ बरसावन॥
ताहि बियोग बिथा सौं बिहाल।
बिलोकि सहेली लगीं समुझावन॥
तौ लगि दासहू आप गई।
औ सँकोच भरी लगी हाल सुनावन॥
भाषी अनीति कथा सिगरी।
चुरिहारिन हूँ कौ कह्यो तहाँ आवन॥

३४

सुन्यौ परिचारिका सौं जब यौं।
धनिमालिनी पै भयो बज्र-निपात॥
परी महि पै इमि ह्वै कै बिहाल।
विवर्न भई मुख आई न बात॥
बिथा कछु तीखन या विधि व्यापी।
गये सबै चेतना हीन ह्वै गात॥
बिलोकि दसा तेहि की यहि भाँति।
सहेली - समूह उठ्यो बिललात॥

३५

केते कियौ उपचार सहेलिन।
चेतना तौ कछू बाम कौ आई॥
त्यौं विवसा - विधवा - भगिनी पै।
दया, हँसी, रोस, औ आई रोवाई॥

दासिहि दै कै निदेस तुरंत।
लियो एक तीखी कटार मंगाई॥
चादर ओढ़ि पयादेहि पाँय।
मंदोदरी-सौध मै आपु सिधाई॥

३६

मौन भई अधमा कुटिनी
जब ही तेहि की पग आहट पायो॥
सामुहे देखि खड़ी भगिनी कौ।
मंदोदरी के हिये धीरज आयो॥
त्यौंही लगीं कुलटा खिसकै।
औ बिभीषन सौं सबै जाय सुनायो॥
पानी गयो परि चालनि मै।
औ वृथा ही गयो प्रभु जाल बिछायो॥

३७

या विधि सौं तिनके सुनि बैन।
विभीषन तौ अतिसै घबरायो॥
त्यों ही उपायनि व्यर्थ बिलोकि।
कितौ अपने मन माहि लजायो॥
सूख्यौ ससेट्यौ तथा सहम्यौ।
तुरतै ही मन्दोदरि-भौन मै आयो॥
औ धनिमालिनी की लखि कै।
अपने मुख सौं कछू बोलि न पायो॥

३८

ऊँची अवाज सौ देखि तिन्हैं।
धनिमालिनी भौंह तरेरि कै बोली॥
"सोचि कहा तुम भेजत हौ इतै।
नित्त नई कुलटानि की टोली॥"
औ तिनकी सगरी करतूति।
विभीषन के समुहे कह्यो खोली॥
"चाहिये ऐसी भला तुमको?
दुःख मारी परी विधवा वह भोली॥"

३६

जानत नाहीं इतोहू भला।
तुम कौन की नारि पै दाँत लगाये॥
काँपि ही जात हुते सुरनायक।
जासु के रंचक भौंह चढ़ाये॥
त्यों तुम्हरी - करतूति - सँदेस।
पिता सों अबै सबै देत कहाये॥
राम के पास सबै समाचार।
सुनावन दूत हौं देत पठाये॥

४०

आपु से सासक हैं जेहिके।
बसुधा वह बास के जोग है नाहीं॥
याहि विचारि मनौ हिय मैं।
उड़े जात विहंगम हैं नभ माहीं॥
चंचल पावक की सिखा होत।
मही-रुह - पात हूँ काँपत जाँहीं॥
औ अबलानि के साथ ही साथ।
यहै लगि लागी फिरै परछाँहीं॥

४१

कैसे कुदीठि परी तेहि पै।
जेहि कौ तुम आजु लौं मातु सी मानी॥
आये जबै समुहे जेहिके।
तबै जोरि खरे अपने दुऔ पानी॥
बानी उमा औ रमा के समान।
सती की नहीं महिमा तुम जानी॥
हौ हठ पै कटि बाँधे खड़े।
न गनौ तुम नैकु समाज की हानी॥

४२

यौं धनिमालिनी के सुन बैन।
विभीषन तौ अतिसै सकुचान्यौ॥
त्यौ अपनी करनी कौ बिचारि।
बिचारि महा मन मांहि लजान्यौ॥

खोलि दियो मम आँखिन कौ।
यहि ते तिय कौ उपकारिनी मान्यो॥
मन्दोदरी ते विवाह की साधहिं।
ता खन ते तजि देइबो ठान्यौ॥

४३

कै तेहि कौ अभिवादन आपु।
विभीषन लौटि पर्यौ खिसियाई॥
आपने भौन मैं जाय ससंक।
पर्यौ परयंक महा दुख पाई॥
त्योंही मन्दोदरि कौ गहि पानि कौ।
लै गयो सो संग भौन लिवाई॥
औ पलिका पर बैठि असंक ह्वै।
या विधि वा सौं कह्यो समुझाई॥

४४

"जेठी बड़ी महरानी हौ आपु।
संकोच हमैं कहते कछू लागत॥
लाज भरौ पै प्रसंग गुने।
हियरौ हमरौ खरो खेद सौं पागत॥
त्यों दयनीय दसा लखि रावरी।
सोक की ज्वालामुखी जिय जागत॥
यौं विधवानि कौ सोचि भविष्य।
समाज सौं है अपनो मन भागत॥

४५

हौ मय-दानव-वंस विभूति।
तथा दसकंधर की पटरानी॥
बारिदनाद की हौ जननी।
तुम्हें गौरव देती उमा, रमा, वानी॥
लोक के त्यों व्यवहारनि मै।
तुम हौ तौ सबै विधि ही सौं सयानी॥
याखन या विधि सौं बातौं।
जेहिते कुल कौ चलौ जाय न पानी॥

४६

हौं अनुमानती सो मति-मन्द।
न रावरी छ्वै सकि है परछाँही ॥
औ तेहि पै पितु के भय सौं।
धरि है इतै भूलि कबौ पग नाहीं ॥
आजु से पाहरु कौ दै निदेस।
न आवन दीजै कोऊ खल काहीं ॥
आयसु मोसन पाये बिना।
न सुखेन प्रवेस लहै गृह मांहीं ॥

४७

एतेहु पै समै के अनुसार ही।
नीति की घात तुम्हें हौं बतावत ॥
फाँसियौ वाहि कुचक्रनि मांहि।
जु पै लखियौ बल सौं हठि आवत ॥
चाल की बातैं चलाय किती।
कहियो करिबौ तेहि कौं जिय-भावत ॥
पै मन औ वच काय हू सौं।
रहियो अपनी मरजाद बचावत ॥

४८

हौं पटरानी निसाचर राज की।
जेठी लगौ सबै भाँति हमारी ॥
या लगि लाज बचावन काज।
कहौं एक और उपाय बिचारी ॥
ल्याई हौं आजु तिहारे लिए।
अबलानि की रच्छिनी तीखी कटारी ॥
लै यहई कौ सुऔसर पाय।
नराधम कौ हियो दीजौ बिदारी" ॥

४९

मौन भई धानमालिनी यौं कहि।
मन्दोदरी मुख बोलि न पाई ॥
औ तेहि दोऊ भुजानि समेटि कै।
गाढ़े लियो निज कंठ लगाई।

रोकि अवेग सबै हिय कौ।
इतनौ तेहि तै सबिनै कहि पाई॥
औसर पै दै भली यै सलाह।
लियौ हमरी मरजाद बचाई॥

५०

या विधि विभीषनकी चालनि पै पानी फेरि।
मय-तनया कौ खरौ धीरज बँधाय कै॥
त्यौं ही कुटनीनि की कुटिल-कूटपास तोरि।
अरु निज नीति कौ अतंक दरसाय कै॥
करि सावधान द्वारपाल रखवारेन कौ।
पाहरुन हू कौ भली भाँति समुझाय कै॥
मंदोदरी-महल विराम थोरी देर करि।
आई धान्यमालिनी-सदन हरषाय कै॥

पन्द्रहवाँ सर्ग

१

बीतत गये दिवस बहु या विधि समय सोऊ पुनि आयो।
जब अनभ्र-नभ-असनि-पात सम सबहिन यह सुनि पायो ॥
अब वह त्रिजग-विदित बर-योधा रह्यो न या जग मांहीं।
जलदेवा कोउ विपुल वंस मैं गयो हाय रहि नाहीं ॥

२

हालत धरा धरत पग जाकै कुम्भकरन अब नाहीं।
रहि न गयो घननादहु बाँध्यो निज सुरपति रन माहीं ॥
त्यौं प्रहस्त त्रिसिरा खरदूषन अरु मकराच्छ बिचारे।
अच्छकुमार महोदर आदिक गये मनुज करि मारे ॥

३

पहिले अनहोनी बातन पै तेहि विस्वास न आयो।
पै अघटन-घटना-पटीयसी विधि-गति पै मन लायो ॥
कनककसिपु अरु हाटक लोचन रहै न या जग मांहीं।
अचरज कहा सवंस निसाचर राज रहै जो नाहीं।

४

पै तेहि निश्चय करन हेतु तिन निज मनमै निरधारयो
अरु एक पवन-गमन-कौ-निंदक-पद-चर सपदि हँकारयो॥
दीन्ह्यो ताहि निदेस अबहि तुम लंकपुरी कौं जावौ।
सिगरौ हाल हवाल तहाँ कौ तुरत हि लाय सुनावौ ॥

५

साज्यो सबल बाजि लागत जनु उच्चस्रवा कौ भाई।
पव सों धावन मांहि सकत जो प्रबल समीर हराई ॥
लांघत सरित-सैल-सर वाके केतिक द्योस बिताई।
मय दानव चर लंकपुरी के निकट पहुँचिगौ आई ॥

६

भटकन लाग्यौ चहूँ दिसि मारग कछू न ढूंढे पायो।
तब बहु पूँछ तांछ करि वानै एक नौका ठहरायौ॥
तापर भयौ सवार लंक कौ आवन चाह्यो जब ही।
बीचहि आप सिन्धु-रक्षक नै रोकि लियो मग तबही।

७

ताकौ विमल वंस कौ वाहन तासौं लियौ छिनाई।
जानि गुप्तचर ताहि लियो तिमि बंदी सपदि बनाई॥
बाँध्यो हाथ पाँय पुनि सासक—आयसु कौ सिरधारी।
कारागार माँहि लंका के दियो ल्याय तेहि डारी॥

८

बीते बहुतइ दिवस न चर कौ समाचार जब पायो।
तब अनिष्ट की आसंका मों मयदानव अकुलायो॥
बूढ़ो यदपि सुतन के बध सौं हिय मैं अमित दुखारी।
तऊ सुता को दुःख जानि कै आवन लंक विचारी॥

९

साज्यौ स्यन्दन-सघर जाहि लखि मन-गति जात लजाई।
गंध्रव-मन्त्र बहुरि पढ़ि वाजिनि दीन्ह्यो तुरत चलाई॥
थोरे दिनन माँहि इमि चलतै सो सागर ढिग आयो।
वाम-विलोचनि-बाँह फरकि तेहि असगुन मनहु जनायो॥

१०

हिय-अवेग सौं सलिल-रासि मैं लहरैं उठि बहुतेरी।
कोउ अनहोनी-बात कहै मनु यही ब्याज सौं टेरी॥
वगरी कूल भूमि पै जहँ-जहँ बहु मोतिन की पांती।
मानहु अश्रुमाल सागर-दृग ढरकि परै यहि भाँती॥

११

दूजो भग्न सेतु लखि निज मन यह बिचार पुनि कीन्ह्यो।
अपर समर्थ भये को जानै या मग में पग दीन्ह्यो॥
तौ लौं लंकपुरी कौ रक्षक तुरत तहाँ चलि आयो।
पकरि लगाम बाजि की या विधि बचन सरोष सुनायो॥

१२

जहाँ हतो छन-सेतु तहा ही मयदानव चलि आयो।
पै तेहि छिन्न-भिन्न लखि निज-मन मांहि अमित अकुलायौ ॥
थोरिहिं देर मांहि एक तरनिहि लियो आपु ठहराई।
तापै भयो सवार लंकपुर निकट पहुँचि गयो आई ॥

१३

"आज्ञा-पत्र पास तुम्हरे है तो तेहिं क्यों न दिखाओ।
पुर-प्रवेस-आयुसु कौ तुमने मोहि विहाय कहँ पायो ॥"
"हौं ही ससुर विभीपन कौ तेहि अभिनन्दन हित आयो।
ताके राज-अरोहन को जब समाचार सुनि पायौ ॥"

१४

तब तौ अति विनीति ह्वै सैनिक बढ़न अगारी दीन्हौ।
मय दानव निज स्यन्दन पै चढ़ि तुरतहि मग गहि लीन्हौ ॥
अब वह चहल-पहल नहिं दीसत लगत राज-पथ सूनौ।
जनु निरजीव परी है लंका निरखि होत दुःख दूनौ ॥

१५

बारिद-नाद-सौध निरमायौ हुतौ सिन्धु तट जोई।
अरु निकुम्भिला मंदिर कौ लखि सर्पद उठ्यो वह रोई ॥
बिनु पूछेहू राज-सुतन कौ निरदय निधन बतावत।
अरु कारी करतूति विभीपन वारी सकल जतावत ॥

१६

जाके उच्च सिखर पै लहरत सिंह-धुजा-छबि-खानी।
जाकी मंजु बाटिका सुखमा बानी बरनि सकानी ॥
कंचन-मृग की कौन कथा तहँ परत बराह न देखी।
करत निवास उलूक भीरु बहु अरु छुछुआत विशेषी ॥

१७

सद्य - बनी - छतरी वाही ढिग ता कहँ परी लखाई।
विलखि तासु रच्छक याहि विधि सौं बोल्यौ बचन सुनाई ॥
यहि-थल इन्द्रजीत की बामा बाम-बिलोचन-बारी।
चढ़ी स्वर्ग-सोपान नाह सँग अरु सुर-सदन सिधारी ॥

१८

कुम्भकरन की लखी समाधि लघु गिरि कौ जनु टीलौ।
राम-लखन सों लरत जासु कौ साहस भयौ न ढीलौ॥
रावन-अस्थि-भस्म अवलोक्यौ स्मारक एक बनायौ॥
तरु-समूह जाके चारिहू दिसि अबलौं बढ़न न पायौ॥

१६

आगे बढ़ि लंका को देख्यो अर्ध-दग्ध सी ठाढ़ी।
कैधौं रावन विरह-जनित-ज्वालनि सौं कर गहि काढ़ी॥
टूटि गये हैं व्योम-विचुम्बित-कनक-कलस बहु जाके।
जिनको भालु कपिन के जूथनि भूधर-शृंगनि ढाँके॥

२०

तोरन द्वार सामुहे जहँ पै सरवर सुभग सुहायो।
रत्न-राशि सौं जटित जासु वे सुठि सोपान बनायो॥
जिनपै जावक-रँगे-कमल-पद धरती लंका-नारी।
रत्न सने-पंजनि तहँ नाहर धरत कुरंगनि मारी॥

२१

जहाँ राज पथ महँ प्रेमिन सौं मिलन चलै अभिसारी।
मंथर गति सौं चलत करत पद पायल की झनकारी॥
वा पथ में केतिक स्यारिनियाँ खोजत आमिष धावैं।
मुख सौं चिनगारिन बरसावैं अरु रव घोर मचावैं॥

२२

अंकित भौन-भीति पै बाहर गज कौ चित्र सुहायौ।
मंजु-मनाल तोरि निज कर सौं करनी जाहि खवायौ॥
बीते काल जियत-बारन कौ निज मनमाँहि बिचारी।
ताके कुम्भथली पै नाहर निज नख जात प्रहारी॥

२३

देख्यो सौध बाटिका कौ जहँ सुमन गये कुम्हलाई।
भय सौं तपत जहाँ रवि पौनहु सकत न पात गिराई॥
सींचत रहत बारि-धर तरु-तर वायु बहारत जाकौ।
बारहु मास बसंत रहत जहँ सदन सकल सुखमा कौ॥

२४

जाकी झुकी डार सौं फूलनि काल दया दरसाई।
चुनती रुचिर सिंगारन के हित मन मँह मोद मढ़ाई ॥
मंजु मंजरी पै तिनकी अब भँवर-भीर नहिं भौरत।
औ पुलिन्द लौं कानन के कपि तिन साखनि पै दौरत ॥

२५

निसि मै जाल-रंध्र-सौ बाहर आवत कहुँ न उजेरयौ।
दिन मै नहि दिखात कहुँ पंकज-आनन कोउ तिय केरौ ॥
दियो गवाछ-द्वार पै मकरी जार सघन फैलाई।
तिन सौं बढ़त धूम की रेखा कतहुं न परत लखाई ॥

२६

टूटि गई छतरी पुर-केकी अब तरु बैठन लागे।
होत न कहुँ मृदंग-धुनि पाते सुघर नाचिबो त्यागे ॥
पूंछि समेटि बनानल सौं जे हुते आपु बचि भागे।
ते पालतू मयूर आजु बन बारे दीसन लागे ॥

२७

पूजन होत नहीं सर के तट सूने परे विसेषी।
केसर के रँग-रंगे-सलिल अब तासु परत नहि देखी ॥
मृग-मद-गंधि-कहाँ मंदिर में नहि घंटा-सहनाई।
सुरपुर साम रिचा की मृदु धुनि कहुँ नहिं परत सुनाई ॥

२८

मंदोदरी सौंध द्वारे पर तब ठहर्यौ रथ आई।
आवन सुनत पिता कौ सहसा पटरानी उठि धाई ॥
धान्यमालिनी के हिय कौ तो नहिं आनन्द कहि जाई।
अपनी नीति-विटप-लतिका कौ जिन कुसुमित लखि पाई ॥

२९

कर गहि वृद्ध-पिता कौ गृह में लै गई वाम लिवाई।
अरु बैठारि कनक आसन पै अश्रुधार बरसाई ॥
बिजना करन लगी दासी पग सेवक लियौ पखारी।
पूछ्यो कहाँ मंदोदरी बेटी निज नयन भरि बारी ॥

३०

तौ लगि आय गई महारानी तेहि लखि रोवन लागी।
रोवन लगे सबै करुना-रस बहुरि उठ्यौ जनु जागी॥
कोउ वीरता बखान करत ही दसकंधर की रन में।
कोउ मुरछित ह्वै जात लेत रस मेघनाद-बरनन में॥

३१

कुम्भकरन की बन्धु-प्रीति कौ कोऊ अमित सराहत।
ताही सम आयसु-अनुचरती कोऊ बनन उमाहत॥
कोउ सुलोचना के सतीत्व की करत प्रसंसा भूरी।
करनी सुमिरि बिभीपन की कोउ तेहि निंदित भरि-पूरी॥

३२

सुनि विराध-बध मेघनाद कौ लछिमन की अनरीती।
हाल बिभीपन कौ सुनि वाकौ क्रोध विवेकहिं जीती॥
फरकत अधर वंक भृकुटी करि नैनन ज्वाल निकारी।
बलकत बचन कहन लाग्यो इमि सक्यो न रोस निवारी॥

३३

"आजु विभीपन के प्रति मेरौ बाढ़त क्रोध घनेरौ।
चाहत नहीं देखिबौ आनन अब कहूँ खल केरो॥
आवत है मन माँहि चाप गहि रन में ताहि प्रचारौं।
कै दै साप क्रोध-ज्वाला में ताहि भस्म करि डारौं॥

३४

सुनि कै बलकत वचन कका के धान्यमालिनी रानी।
देस काल अवसर गुनि बोली या विधि मंजुल बानी॥
"नहिं रह गयौ वंस में कोउ इतनी मन गुनि लीजै।
अधम बिभीपन हूँ पै अपनी दया दीठि अब कीजै॥

३५

मयदानव-आगमन जबै सुनि कान विभीषन पायो।
तेहि अभिवादन करन मंदोदरी-सौध तुरत चलि आयो॥
नायो माथ विनीत-भाव सौं ढारि दृगन सौं बारी।
दीरघ दुःख दरसाय हाय करि या विधि गिरा उचारी॥

३६

"मो पै सब विस्वासघात कौ या खन दोष लगावत।
मैं अपनी जिय की बीती पै हाय कहन नहि पावत॥
कासौं कहौं ताप निज हिय की कोउ सुनैया नाहीं।
मेरो पच्छ-समर्थक कोऊ रह्यो न लंका माहीं॥

३७

जबते बन्धु राम की बामा छल करि केहरि लाये।
अरु वाकी दिसि दीठि पाप की संतत रहे लगाये॥
ताही दिनते जानि लियो मैं यह सीता दुखदायी।
निसिचर-कुल-कल-कमल-विपिन-हित सीत-निसा-सम आई॥

३८

जब रघुनन्दन निज दल-बल लै सागर लौं चढ़ि आये।
अरु निज जाया के पावन हित यहाँ बसीठि पठाये॥
तबहूँ हौं जेठे भइया को केतिक कहि समुझायौ।
अरु सीता लौटावन के हित ऊँच-नीच दिखरायौ॥

३९

पै एकौ हित बात बन्धु ने सुनी न नैकु हमारी।
गारी दई अनेक सभा में लात सीस पै मारी॥
जद्यपि या जग मैं काकाजू है दारुन दुख नाना।
सल्य-तुल्य सालत है हिय मै बन्धु कियौ अपमाना॥

४०

सहि न सक्यौ अपमान आपनी दीन्ह्यो लंकहि त्यागी।
रहि न सक्यौ पल एक तहाँ मैं अस ग्लानि जिय जागी॥
सिन्धु पार मोहि दूत राम के मिलि ले गये लिवाई।
अरु मेरी रच्छा हित प्रभु ने कही बात मन भाई॥

४१

सुनत विभीषन बचन सक्यो मय दानव कछू न भाषी।
भृकुटि भंग करि धान्यमालिनी कहन लगी मन माखी॥
काहे बनत दूध के धोये तुम साधू बड़ ज्ञानी।
तुव कारी करतूतनि की है जाहिर जगत कहानी॥

४२

जो पै सीय-हरन ही सौं तुम तजि लंका को दीन्ह्यौ।
ताही खन वाकी किन त्यागो तिन जब पावक कीन्ह्यौ॥
गारी दैबे की चरचा हू तुम इत बृथा चलायो।
भूलि गयो जब मिलि कुबेर सौं मेघनाद बंधवायो॥

४३

कहा मान अपमान तुम्हारे समलोगन हित होई।
देखैं जैसो समय लगै तब करन आचरन सोई॥
देखि लियौ जब सिर पै तुमने खड़ो प्रबल आराती।
तबहीं तौ लंका कौ तुरतै छाँड़ि दियो यहि भाँती॥

४४

और राज के छिद्र सबै ही अरि को जाय बताये।
बारिद-नाद-सपूत-सीस तुम खड़े-खड़े वटवाये॥
करत हुतै जब जग्य नाथ तब तुमहिं कपिन उकसाई।
मन्दोदरी महारानी की इमि दुरदसा कराई॥

४५

जो कछु भयो भयो सो वाको अधिक खेद हिय नाहीं।
पै कारी करतूति रावरी इत हम कहत सकाहीं॥
अबहि कालि की बात रहे तुम कुलटनि इतै पढ़ावत।
अरु दै किते प्रलोभन भगिनिहि रहे आपु फुसिलावत॥

४६

सुनि इमि बचन धान्यमालिन के गयो विभीषन काँपी।
मानौ सीत-निसा-तुषार ने लियो सरोजहिं टांकी॥
बोल्यौ बचन लजाय "व्यर्थ तुम मोकौं दोष लगायो।
हौं ही बड़ी कहौ तुम या लगि जो तुमरे मुख आयो॥"

४७

बोल्यौ मयदानव "हम अपना सुता दोऊ लै जैहैं।
कुछ दिन राखि इन्हें अपने घर पुनि पठाय इत दैहैं॥
रहि मैके मंह थोरेहिं दिन लौं दैहैं दुःख भुलाई।
गिरि-प्रदेस में निवसि स्वास्थ्य हू सुधरि दुहुन को जाई॥

४८

कह्यो विभीषन "मोकौ यामें आपति है नहिं कोई।
दोऊ सुता आपकी हैं जो चहहु करहु तुम सोई॥
अस कहि सीस नाय पग वाके चल्यौ विभीषन आयौ।
मन्दोदरी हिये में साहस या विधि वेस समायौ॥

४९

इत मयदानव त्यागि भवन को गयो वाटिका माँहीं।
लगे सुआर बनावन भोजन बैठि विटपि की छाँहीं॥
बहुरि अन्हाय स्वच्छ सरवर मैं अरु मग खेद भजाई।
बैठि कुसासन पै सखेद तब भोजन कीन्ह्यौ आई॥

५०

भोजन पाय कियो विसराम जागि,
त्रिभावरी को तहँ सोइ बिताई।
ह्वैकै प्रभात क्रिया सौं निवृत,
औ साज सबै चलिबे के सजाई॥
जोति कै स्यन्दन तीखे तुरंगनि,
तामैं लियो सुख सेज बनाई।
मन्दोदरी धानमालिनी लै सँग,
गेह को आपु गयो हरषाई॥

सोलहवाँ सर्ग

मय दानव दुहितान कौ सुनि आवन कौ हाल।
बहु पताल पुरवासिनी आईं गेह उताल॥

१

नवल-वधू-कुलमान्य जठेरी।
हेमा की सखियाँ बहुतेरी॥
मंदोदरी मिली दुःख पागी।
तिनहि निरखि सो रोवन लागी॥
पूछें "कहां लंकपति रानी"।
सहसा तेहि न सकीं पहिचानी॥
जद्यपि सो बैठी तिन मांहीं।
वा कहँ जानि सकीं कोउ नांहीं॥
विवरन इमि लखाति वह बाला।
मनहु परयौ सरसिज पर पाला॥
दूबर गात जात नहिं हेरी।
जनु कृस-कला कला-धर केरी॥
कै यह छिन्न-मूल-तरु-बेली।
मुरझाई मसि लीन्हि मझैली॥
आनन तासु लसत यहि भाँती।
ससिहि ग्रस्यौ जनु राहु अराती॥
करि पीड़ित बहु भाँति सौं दै यातना करोरि।
दृढ़ दाढ़नि महँ दाबि जनु लियो पियूष निचोरि॥

२

सारी स्वेत लसत सिर कैसे।
ससि परिवेष सोह निसि जैसे॥
चूरिन बिनु इमि सोह कलाई।
मनहु मृनाल गयो मुरझाई॥

मृग-मद-रहित लसत मुख कैसे।
निसि अकलंक मलिन बिधु-जैसे॥
खंजन मद-गंजन नहि लोचन।
अब न करै मृग-मान बिमोचन॥
विकसत सर सरसिज मुद मानी।
नहि आपन पटतर जगजानी॥
अधरन दियो त्यागि अरुनाई।
बिम्बा फल जनु गयो सुखाई॥
बिखरी लटैं भई इमि रूखी।
मनहु सिवार गयौ कहुँ सूखी॥
जावक बिनु तिय चरन-युग या विधि रहे सुहाय।
अरुन तामरस तापसों मनहु रह्यो कुँभिलाय॥

२

धनि मालिनि ढिग कोउ तिय आई।
बैठि गई बहु दुःख दरसाई॥
पियरौ-मुख अरु छीन सरीरा।
कहत सकल-दीरघ दुःख-पीरा॥
दीठि गाढ़ि तेहि ओर निहारी।
जानि रहस्य गई सब नारी॥
धीरज ताहि बँधावन लागीं।
अरु इमि बचन कहे अनुरागी॥
"विधि गति अमित अडिग जग मांहीं।
याकौ जानि सक्यौ कोउ नांहीं॥
धरहु धीर जग की दिसि हेरी।
दुःख सौं लेहु हियो निज फेरी॥
कनक-कसिपु अरु हाटक-लोचन।
कृत-युग भये त्रिजग-मद-मोचन॥
रहिगौ नाम-सेप तिन केरौ।
समुझि होत हिय सोक घनेरौ॥
सुदृढ़ मूल दीरघ तनौ, साखा जासु हजार।
ऐसे विटपहिं अनल नै जारि कियौ जनु छार॥

४

ताकौ ठूठ जुपै रहि जावै।
अरु अंकुर तेहि सौ कढ़ि आवै॥
ताहू मै जन आस लगावत।
कबहुक तेहि कुसुमित लखि पावत॥
ऐसे ही धनिमालिनि रानी।
उपजै हैं संतति सुखदानी॥
चलि हैं नाम लंकपति केरौ।
है यह बात कहत मन मेरौ॥
या विधि धीरज ताहि बँधाई।
नारि बृन्द निज सदन सिधाई॥
तब दुन्दभि मयानि की नारी।
दोउ ननदनि के चरन पखारी॥
अपनेई हाथनि सौं अन्हवाई।
अरु सारी सपेत पहिराई॥
निजकर भोजन पान खवायौ।
लाय बहुरि पलका पौढ़ायौ॥
या विधि पितु गृह में रहत बीति गयौ बहु काल।
लगी सोक त्यागनेहु औ कछु कछु विधवा बाल॥

५

धन्यहि गर्भवती सुनि पायौ।
मयदानव आंनद मनायौ॥
कीन्हौ सीमन्तन संस्कारा।
दान याचकन दियौ अपारा॥
बीतत दिवस समय सोऊ आयो।
नभ-मंडल अति विमल सुहायौ॥
सुख-दायिनि बह त्रिविधि समीरा।
हरत असेष हिये की पीरा॥
सब विधि दिसा प्रसन्न लखाहीं।
बढ़त अनंद-उदधि उर मांहीं॥
जोग नछत्र करन तिथि नीकी।
आजुहि भागि खुली सबही की॥

भयो विभीषन-सरिस हित राहू।
यह रहस्य जान्यो नहि काहू॥
दासी आपु कह्यो मृदु बानी।
जायो सुत धनिमालिनि रानी॥
नाग-तिया हरषित चलीं मय दानव के धाम।
सोहर-सरिया-गीत बहु गावति परम ललाम॥

६

ससि सम बढ़न लग्यो सिसु जबहीं।
भयौ अनन्द मातु-उर तबहीं॥
मय दानव जोतिषिन बुलाई।
पूछ्यौ बाल-भाग्य सुख पाई॥
ते पंचांग सोधि मुद मानी।
या विधि कहन लगे बर बानी॥
"ह्वै है बालक अति बल-धारी।
सकल-विगत - वैभव - अधिकारी॥
प्रबल-अरिन रन माँहि हरैहै।
निज जस दिग छोरनि लौं छैहै॥
करिहै भोग धरा कौ सारी।
मृषा गिरा नहिं होय हमारी॥"
धरिहै सेस-सरिस महि-भारा।
याते सब अरि-कुल संहारा॥
दान अमित तिन जोतिषिन मयदानव तब दीन्ह।
सब विधि सौं परितोषि पुनि बिदा सबन कौ कीन्ह॥

७

या विधि कछुक वर्ष चलि गयऊ।
सिसु लहि बयस सयानो भयऊ॥
भयौ तासु उपवीत सुहावन।
दीन्ह्यौ मंत्र सुक्र गुरु पावन॥
धर्यौ तासु अरिमर्दन नामा।
गुनि गुरु ताहि अतुल बल-धामा॥
खेलत सम-वय-बालन संगा।
क्रीड़ा करत समेत उमंगा॥

लखि सिसु-खेल मातु मुद पावत।
गुरुजन अमित अनन्द बढ़ावत॥
एक दिवस बन खेलन गयऊ।
निज सँग बाल-बृन्द बहु लयऊ॥
खेलत खेल न करत बिरामा।
रबि-रथ चलन उग्यौ निज धामा॥
खेलत चोर-महीचनि बालक।
प्रकटत दुरत सत्रु-कुल-घालक॥
जाय बिलोक्यौ रुचिर इक तहँ उन्नत-गिरि-सृंग।
ता पर भयौ अरूढ़ सो लिये बालकन संग॥

८

तहँ वालधी सिंह फटकारे।
गुहा सरिस निज बदन पसारे॥
दसन जोति सौं करत उजेरौ।
नासत अंधकार बन केरौ॥
धावत करत अमित-रव-घोरा।
आवत चल्यौ बालकन ओरा॥
सुनि गरजनि सब बाल डराने।
इत उत लै निज प्रान पराने॥
अरिमर्दन नहिं नेकु सकाने।
ठाढ़े रहे मुष्टि निज ताने॥
मुष्टिक एक तासु सिर मारा।
मुख ते बही रुधिर की धारा॥
तड़फड़ाय प्राननि तजि दयऊ।
बालन मन अति विस्मय भयऊ॥
सब मिलि अरिमर्दन पहँ आये।
तेहि बिलोकि आनन्द बढ़ाये॥
खैंचि सिंह की पूछि कौ अरिमर्दन बरजोर।
लीन्हे बालक बृन्द संग चल्यौ भवन को ओर॥

९

बालक जात अनंद बढ़ाये।
तेहि मग परसुराम-मुनि आये॥

पीत - यज्ञ - उपवीत सुहावन।
सब-तन भस्म लगी अति पावन॥
बृषभ-सरिस - युग - कंध - बिसाला।
दाबे काँखि मंजु मृग-छाला॥
पिंगल-जटा सीस पर राजत।
धनुसर पानि महा छबि छाजत॥
छत्रिय - गन बूड़े जेहि धारा।
धरे कंध ज्वलदनल-कुठारा॥
अरिमर्दन परस्यौ पग आई।
धार्‌यो सीस पानि मुनिराई॥
ताकौं जानि अमित-बल-धामा।
पूछ्यौ जननि-जनक-कौ नामा॥
"नाना मयदानव बल भारी।
धान्य-मालिनी मातु हमारी॥
पिता कौन जानत नहीं सुनि लीजै मुनिराय।"
धनुष कोटि निज कर पकरि गृह लै गयौ लिवाय॥

१०

मयदानव अभिनन्दन कीन्ह्यौ।
आदर बिबिधि भाँति सौं दीन्ह्यौ॥
पुनि सनेह मुनि-चरन पखारी।
कीन्ह्यौ पान सुपावन बारी॥
मुनिवर तब पूछी कुसलाई।
मय दानव बोल्यौ बिलखाई॥
"विधवा सुता जासु गृह माहीं।
अस हत-भागि-पिता कोऊ नाहीं॥
लछिमन मम नातिहिं छलि मार्‌यौ।
जामातहि रन राम सँहार्‌यौ॥
भयौ विभीषन तासु सहाई।
गुप्त - भेद सब दियौ बताई॥
तेहि कौ राम लंकपति कीन्ह्यौ।
मम दुहितनि निकारि इमि दीन्ह्यौ॥

सुनि तिनकौ इत लियौं बुलाई।
यह धनमालिनि-सुत मुनि राई ॥
है अनाथ सब भाँति यह, प्रभु-चरनन की आस।
धारि वरद-कर सीस पै, अब करिये निज दास ॥

११

सुनि इमि मय दानव मुख बाता।
क्रोध-कृसानु जरयौ मुनि-गाता ॥
रुचिर - कोकनद - नयन - सुहाये।
रिस-बस कछुक अरुन ह्वै आये ॥
सुनि लछिमन की सकल अनीती।
तथा विभीषन की अनरीती ॥
छत्रि - जाति - प्रति क्रोध घनेरौ।
भरक्यौ बहुरि परसुधर केरौ ॥
कह मुनि यह बालक मोहि देहू।
करत प्रतिज्ञा सो सुनि लेहू ॥
याहि सकल धनु - वेद पढ़ैहौं।
धनुधर-सिव-सुत - सरिस बनैहौं ॥
बंस-वैर यह सब भरि लैहैं।
रघु-वंसिन रन माँहि हरैहैं ॥
लैहै बाँधि विभीषन काँहीं।
यामैं बल परिहै कछु नाहीं ॥"
परसि मातु नाना चरन, अरु, सिष्य आसिप पाय।
अरिमर्दन मुनि संग चले, मन अति मोद बढ़ाय ॥

१२

निज आस्रम मुनीस चलि आये।
ताहि सकल धनुवेद पढ़ाये ॥
दिव्य-अस्त्र सिखयौ बहु भाँती ॥
अरु वर दियौ छत्रि - आराती ॥
पाँच बान ताके कर दीन्ह्यौ।
आपु - समान - महारथि - कीन्ह्यौ ॥
कह्यौ "जाय अब तुम तप साधौ।
सिद्धि हेतु सिव - पद अवराधौ ॥

गहि मुनि चरन बाल बन जाई ।
तप साधन लाग्यौ सिव ध्याई ॥
भये प्रसन्न महेस - भवानी ।
धार्यौ तासु सीस निज पानी ॥
अरिमर्दन खोल्यौ दृग जबहीं ।
सम्मुख लख्यौ संभु कहँ तबहीं ॥
पर्यौ ललकि पुनि चरनन जाई ।
लियौ संभु भरि भुजा उठाई ॥
हौ प्रसन्न तव-तप निरखि अरु निज-पद-अनुरागु ।
अरिमर्दन सौं सिव कह्यौ "मन वांछित वर माँगु ॥"

१३

संभु-गिरा सुनि आनँद-सानी ।
अरिमर्दन बोल्यौ मृदु बानी ॥
"मोहिं अनन्य दास निज कीजै ।
लहौं विजय रन-आसिष दीजै ॥"
"एवमस्तु" तब संकर कहऊ ।
अरु इक दिव्य अस्त्र तेहि दयऊ ॥
कह्यौ "परै जब कठिन मसाना ।
ता दिन यहि करियौ संधाना ॥
छूटत प्रलय सत्रु - दल होई ।
जीवत बचि सकिहैं नहिं कोई ॥"
वर दै सिव कैलास सिधाये ।
अरिमर्दन अपने गृह आये ॥
दोउ मातनि के चरनन लागी ।
पाय असीस भयौ बड़भागी ॥
या विधि संकर सौं वर पायौ ।
मय दानव कौ सकल सुनायौ ॥
सुनि अरिमर्दन के वचन मन महँ बढ़्यौ अनंद ।
जिमि उछरत सागर सलिल लखि नभ-पूरन चंद ॥

१४

एक दिन मय-तनया हरषाई ।
लियौ सुतहि पँलगा पौढ़ाई ॥

कहत रही इक रुचिर कहानी।
सुत नैननि निंदिया नियरानी ॥
मय-नंदिनि की आँखिन लागी।
सोचत ही सिगरी निसि जागी ॥
पति-सुत-गुन सुमिरत बहु भाँती।
रोवति बाल रही सब राती ॥
या विधि सौं अँसुवा दृग ढारौ।
भीजि गयौ पट-अंचल सारौ ॥
तप्त समीर आह कौं लाग्यौ।
अरिमर्दन निंदिया तजि जाग्यौ ॥
भई सजग जननी दुख पागी।
अरु चख-आँसुन पौंछन लागी ॥
अरिमर्दन तेहि दुखित निहारी।
या विधि मंजुल गिरा उचारी ॥
"कैसौ दुख माता तुमहि, कहहु मोहि समुझाय।
गीलौ निज अँचरा कियौ, नयन बारि बरसाय ॥"

१५

सुनि अति दीन सुवन-मुख-बानी।
बोली बिलखि लंक-पति-रानी ॥
"कहा पुत्र हम तुमहि बतावै।
का विधि सौं निज बिपति सुनावै ॥
तुव पितु हुतौ लंक गढ़ स्वामी।
रह्यौ सुरेस जासु अनुगामी ॥
तव भ्राता घननाद जुझारा।
भुज-बल जासु विदित संसारा ॥
कुम्भकरन काका तुव सोई।
रह्यौ जासु प्रतिभट नहि कोई ॥
ताकौ एक विभीषन भाई।
उपज्यौ बंस - अनल - दुखदाई ॥
रघुबंसिन सन प्रीति दृढ़ाई।
निज भाइन डारयौ मरवाई ॥

भयौ आपु लंका-अधिकारी।
हम सबकौ इत दियौ निकारी॥
हुते हमारे उदर तुम, या लगि तजे न प्रान।
करति रही तुम्हरे लिए, या तनु कौ परित्रान॥"

१६

या बिधि मातु-बचन-दुख-पागे।
अरिमर्दन-उर सर-सम लागे॥
"अबलौ कहा प्रसंग दुरायौ।
पहिलेहि काहे न मोहिं बतायौ॥
बीती इती वयस यहि भाँती।
जीवत मोहि अछत आराती॥
सुख-सेजिया निसंक अरि सोवैं।
जननी दुवौ बिलखि इत रोवैं॥
करत स्वान-सम समुद अहारा।
मोहि अनेक बार धिरकारा॥
सत्रु हमार सीस पै गाजत।
देखत पै न नैकु हिय लाजत॥
याकौ हौ जननी तुम कारन।
करत आजु लौ रही निवारन॥
अब हम इमि परतिज्ञा कीन्हीं।
अरु यह आन हिये धरि लीन्हीं॥
अखिल अरातिन चक्र कौ, जो नहिं करौं बिनास।
कोटि जन्म लगि तौ लहौं, घोर नरक में बास॥

१७

सुन सुत-गिरा बीर-रस-सानी।
सकुचि मातु मन मैं सुखमानी॥
"अकिले पुत्र! कहा तुम करिहौ
केहि विधि रघुबंसिन सन लरिहौ?
प्रलय-काल जो करै मसाना
को धौं सहै राम-सुत-बाना॥
सकल सुरासुर जुरहि जुझारा।
कोऊ तिनहिं न जीतन हारा॥

जौ मारे जैहौ रन माँहीं।
तौ मेरो सहाय कोउ नाहीं ॥"
फरकि अधर पुट भौंह मरोरी।
अरिमर्दन बोल्यौ कर जोरी ॥
"का ह्वै गयो तुमहिं सुनु माता।
बोलति इमि कातर सम बाता ॥
ह्वै सरोष अकिलौं धनु तानौं।
कीटि समान कोटि दल मानौं ॥
दीजै आयसु समर हित, मोहि माता सउछाह।
हौं अरुनोदय होत ही, लेहुँ लङ्क की राह ॥"

१८

सुत बच सुनत धीर धरि रानी।
धार्यौ तासु सीस पै पानी ॥
पुनि हिय सुमिरि महेस भवानी।
गहवर गर बोली इमि बानी ॥
"जाहु समर सुत सहित उछाहू।
रिपु-रिन-रंच न राखिय काहू ॥
तव पितु कर प्रज्वलित प्रतापा।
तपत मनहु द्वादस-रबि आपा ॥
मेघनाद धनु - ज्या - रव - घोरा।
पूजै सकल मनोरथ तोरा ॥"
निज कर तेहि सनाह पहिराई।
कंकन बाँधि धनुष पकराई ॥
बानी मृषा होत नहिं मोरी।
अरु कह "बिजय होय सुत तोरी ॥"
थारी धान्यसालिनी लाई।
दियौ तिलक सुत-सीस लगाई ॥
गुरु लोगनि के पद परसि, अरु सुभ आसिष पाय।
लै आयुध लङ्कहि चल्यौ, स्यंदन सुघर सजाय ॥

१९

धाये वायु वेग हय हाँके।
लाँघत सरित सैल बन बाँके ॥

घन-गन करत जात मग छाँही।
बहत बयारि मुदित मन माँही॥
दहिन बाहु-दृग फरकि सुहावा।
नकुल दरस सुभ सगुन जनावा॥
लवा उड़त नभ परी दिखाई।
बछरहिं खड़ी पियावत गाई॥
जल-युत-कुम्भ तिया सिर धारे।
सधवा चली गोद सिसु डारे॥
होत सगुन लखि अमित अनन्दू।
चले जात राकस - कुल - चन्दू॥
रामेस्वर ढिग तब चलि आयो।
तहँ महेस के दरसन पायो॥
करी मनौती बहु कर जोरी।
पूजहु बेगि कामना मोरी॥
"काकहिं रघुबंसिन सहित, हौं रन माँहि हराय।
पाय राज निज पूजिहौं, आय तुम्हारे पाँय॥"

८०

सुनि इमि गिरा बीर-रस-मानी।
मंदिर माँहि भई बर बानी॥
"अरिमर्दन जहँ-जहँ तुम जाहू।
तहँ-तहँ लहौ बिजय कौ लाहू॥
रहि है कोउ नहिं सत्रु तुम्हारा।
तुमते सब अरि - कुल - संहारा॥
सिव-पद परसि परम अनुरागे।
गवन्यौ अरिमर्दन तब आगे॥
यदपि बिभीषन कौ तहँ राजू।
जहँ देखहु तहँ सत्रु-समाजू॥
पै प्रति-बीर कोउ जग माँही।
ताकौ भूलि प्रचार्यौ नाँही॥
कोऊ न तेहि दिसि कतहुँ बिलोक्यो।
अरु नहि तेहि आगे बढ़ि रोक्यौ॥

या बिधि चलत सिंधु तब आयौ।
ताहि देखि अति अचरज पायौ॥
पार जाँय केहि भाँति सौं, इमि मन करत विचार।
बीति गई सिगरी निसा, भयौ भव्य भिनुसार॥

२१

प्रात होत उठि सिन्धु नहाई।
संध्याबन्दन करि हरषाई॥
चरहि भेजि बोहित ढुँढ़वायौ।
पै नहि कोउ मलाह तहँ आयौ॥
सब हिय मानि बिभीषन त्रासा।
कोऊ गये न वाके पासा॥
तब सकोपि अरिमर्दन बोले।
सब मिलि सुनहु कहत मैं खोले॥
"रवि अथवत मलाह नहि ऐहैं।
तौ निज सदन जरौई पैहैं॥"
सो सुनि सकल मलाह डराने।
आये निसा अमित भय माने॥
उभय भाँति जान्यो निज मरना।
तब आये अरिमर्दन-सरना॥
जोरि पानि इमि गिरा सुनाई।
तजहु क्रोध प्रभु करब सहाई॥
तब रावन-सुत नाविकन, तहँ लीन्ह्यो बैठाय।
या विधि सौं तिन सबन सौं, कह्यौ बचन समुझाय॥
"हम पुत्र रावन के लगत लघुबन्धु अक्षय-कुमार के।
धनिमालिनी है मातु नाती मय प्रवीर उदार के॥
है लंक पै अधिकार मेरो छीन काका नै लियौ।
पितु बंधु समर जुझाय कै अपकार है मेरो कियौ॥

सत्रहवाँ सर्ग

१

धनिमालिनी कौ सुवन सुनि नाविक मनहुँ, सोवत जगे।
'जय जयति जय जय राजनन्दन की' सबै भाषन लगे॥
लै चले बोहित साजि तेहिं मधि सिन्धु पहुँचे जाय कै।
जल-रासि-रच्छक निकट आयौ सलिल-यान भगाय कै॥

२

पूछ्यो कड़कि इमि पोतनायक "कहाँ ते आये हतै।
औ सत्रु-भाव दृढ़ाय कै हौ रहे लंका-दिसि चितै॥
सुरनाथहू भरि नयन देखत याहि हिये सकात हैं।
तुम-सरिस-लोगन की यहाँ पै कौन पूछत बात है॥

३

"लघु सुवन रावन के अहैं हम जात अपने धाम कौ।
पूँछत ढिठाई करि इती जानत न मेरे नाम कौ॥
हौं वीर अरिमर्दन कहावत अरिन कौ मलि डारिहौं।
छलकै सँहारो जिन पितहि तिनकौ समूल उपारिहौं॥"

४

सुनि दर्प-सानी इमि गिरा सैनिक हिये सोचन लग्यौ।
सुधि कै बहुरि लंका-पतन की बारि दृग मोचन लग्यो।
पुनि निज-कठिन-कर्त्तव्य कौ बीरबर निरधारि कै।
बोल्यौ बचन यों कोप सौं करवाल कठिन निकारि कै॥

५

"हौ जदपि रावन के तनै है अवसि लंका रावरी।
सासन बिभीषन को यहाँ मति है तुम्हारी बावरी॥
अब सजग तुम ह्वै जाहु आगे बढ़न नेकु न पाइहौ।
जब लौं न हमकौ जल-समर मैं वीर पर विचलाइहौ॥"

६

यह कहि सरासन तानि अपनो निसित बिसिप निकारि कै।
छाँड़ै लग्यौ सर-जाल वाको जलद-रव ललकारि कै।
निज चंड चाप चढ़ाय अरि को बान-ब्यूह बिदारि कै।
आगे बढ़्यो बर बीर प्रति भट बिकट कौ संहारिकै॥

७

वाको निधन इमि देखि रच्छक सिन्धु के भय बस भगे।
अरु-कूल-त्राता-सुभट सों वै जाय कै भाखन लगे॥
"दसकन्ध को सुत इतहिं आवत मनहुँ प्रबल समीर है।
जमराज के धनु सों छुट्यो मानो भयंकर तीर है॥"

८

रावन-सुवन-आक्रमन की चरचा चली जब लंक में।
सोचन लगी सारी प्रजा परि कै भयंकर संक में॥
'बिपरीत बिधि अब जातुधानन की दशा करिहै कहा।
सारौ विभव तौ हरि लियो अब और धौं हरिहै कहा॥'

९

कोउ कहत "निज पुरखान को गौरव न और बिगारिहै।"
कोउ कह "बिभीषन-वंस को अवसिहि समूल उपारिहै॥"
जे हुते नृप के भक्त ते भय-सिन्धु में डूबन लगे।
अब कहा ह्वै है हाय अति घबराय कै ऊबन लगे॥

१०

जे हे स्वतन्त्र-विचार के ते सब सुनत हर्षित भये।
जनतन्त्र-थापन-भाव बहु तिन सबन के जागे नये॥
लागे विचारन नव-विजेतहिं पच्छ में निज लाइहैं।
अरु थापना जनतन्त्र-सासन की इतै करवाइहैं॥

११

सासन बिभीषन भूप को निहचै अतीव कठोर हो।
वह राज-कोप निमित प्रजा सों लेत धन बरजोर हो॥
निज संग रघुपति रत्न-रासि अपार अवधहि लै गये।
औ हुते जे बरबीर ते सब समर में स्वाहा भये॥

१२

यहि लागि सेना माँहि बरबस होन जब भरती लगी।
तब प्रजा की कटु भावना औरहु विभीषन प्रति जगी॥
पै दमन तिनको सैन-बल सों नितहिं वे करते रहे।
अरु प्रजाजन सों द्रव्य रच्छा नाम पै हरते रहे॥

१३

जब मची हलचल लंक में तो वे सबै हर्षित भये।
निज पच्छ कौ संगठन करि सब तासु स्वागत-हित गये।
इत विभीषन के सुसैनिक तासु गति रोकन लगे।
पै सब समर में हारि वासों भर्वरि भय पागे भगे॥

१४

पग धरत लंका-भूमि पै फहरत-ध्वजहिं सिर नाय कै।
स्वातन्त्र-रच्छा के समर्थक-दल मिल्यौ वह जाय कै॥
तिन सबन मिलि कै राज-सुत को नगर में स्वागत कियौ।
अरु प्रजाजन की भीर में तेहि समुद अभिनन्दन दियौ॥

१५

गढ़-लंक की स्वातन्त्र्य-सासन-घोषना वाने करी।
अरु सत्रुमर्दन की जय-ध्वनि गुञ्जि नभ-मण्डल भरी॥
"स्वाधीनता के समर में तुव साथ सब देहैं सही।
अरु कह्यौ हम जमराजहू सों नेकु भय खैहैं नहीं॥"

१६

तब कह्यो अरिमर्दन "अकेलो सत्रु-दल सँहारिहौं।
रघुबंसि हू जो आइहैं रन माहिं तिनको मारिहौं॥
सब लोग राखौ धीर हौं जमराज सों न सकाइहौं।
प्रातहि एकाकी मैं विभीषन की सभा में जाइहौं॥"

१७

इत गुप्तचर-गन जाय नृप सों हाल वा दिन को कह्यो।
सुनिकै बिभीषन को अमित संतप्त हिय औरहु दह्यौ॥
पूछ्यौ सचिव सों "अब कहा यहि समय करिबौ चाहिये।"
तिन सबन ने मिलिकै कह्यौ नृप-नीति कौ निरबाहिये॥"

१८

"सैनिक हमारे भग्न हिय ह्वै युद्ध अब करिहैं नहीं।
अरु रावरो लै पच्छ रावन-पुत्र सों लरिहैं नहीं॥
है प्रजाहू सब रुष्ट तुमरौ साथ नृप देहैं नहीं।
अरु जन तथा धन सौं सहायक आपकी ह्वै है नहीं॥

१६

ऐसी दसा में उचित है करि संधि वासौं लीजिये।
अरु खबरि वाकै आक्रमन की भेजि अवधहिं दीजिये।
रघुनाथ के दोउ सुवन अवसि सहाय हित प्रभु आइहैं।
वाकौ, अराजक प्रजा को वै समर मैं विचलाइहैं॥"

२०

ही राजपरिषद लगी चरचा सत्रु आवन की चली।
हे सबहि आतंकित तहाँ सहसा गई मचि खलबली॥
तब निदरि सबरे द्वाररच्छक भौंह निज टेढ़ी किये।
पहुँच्यौ सभा दसकन्ध-सुत करवाल निज कर में लिये॥

२१

अरिमर्दनहिं आदरन हित सब सभासद ठाढ़े भये।
ताकौ विभीषन सान्त करि निज निकट बैठावत भये॥
अरु कह्यौ तासौं "राम ने है जीति लीन्ह्यौ राज्य कौ।
हम सबै तिनकी ओर से देखत रहत पुरकाज कौ॥"

२२

"है नृपति को नरपाल ही सों उचित रन करिबो सदा।
प्रतिनिधिन पै आयुध प्रहारन अतिहिं निन्दित सर्वदा॥
जबलौं न आवैं राम तब लौं प्रजहि जनि पीड़ित करौ।
तुम हौ निरे बालक तनिक नृप-नीति कौ हिय में धरौ॥"

२३

"अब करहु तुम विस्राम याकी खबरि अवध पठाइहौं।
अरु राम सों अनुरोध करि यह सकल तुमहिं दिवाइहौं॥
तुम हौ हमारे पुत्र जो होनी हुती सो ह्वै गई।
स्वाधीन-सासन की व्यवस्था जाय अब सोचौ नई॥

२४

निज सौध माँहि निवास हित वासों विभीषन नै कह्यौ।
पै मानि हीय कुचक्र-संका भौन मैं नाहीं रह्यौ॥
आयो स्वराज समर्थकन सँग लौटि वाही धाम कौं।
संरच्छता मैं रच्छकन की कियौ तहँ विस्राम कौ॥

२५

इत बिभीषन निज सचिव सौं पत्र एक लिखवाइऊ।
अरु ताहि लव-कुस-निकट अवधहिं तुरत ही पठवाइऊ॥
ते जानि रावन-सुवन को आक्रमन सब चिन्तित भये।
अरु कह्यौ "फिरि रघुवंस के अब सत्रु जागें हैं नये॥"

२६

तब कुस-नरेस निदेस सौं सब सभासदन बोलाइकै।
पूछ्यौ सबन की राय अपनौ मत तिनहिं समुझाय कै॥
तिन एक स्वर सौं कह्यौ "लंक-नरेस कौ निस्तारिये।
बह है अवध-आस्रित अवसि अब तासु संकट टारिये॥"

२७

तेहि आपु श्री रघुबीर रावन मारि कै राजा कियौ।
तजि बन्धुता कौ भाव वाने साथ हो प्रभु को दियौ॥
अब बिभीपन सँग या खन मित्रता निरबाहिये।
दीन्ह्यौ अभय कौ दान तौ उद्धार करिबौ चाहिये॥

२८

तब प्रमुख सेनानायकहिं कुस निज निकट बुलवायकै।
अस कह्यौ लंक-पयान-हित सेना सजावहु जायकै॥
रावन-तनय एक आइकै है घेरि लंका को लियौ।
भय खायकै राजा-बिभीपन रन-निमन्त्रन है दियौ॥

२९

ह्वै है समर अति घोर वाहू के सहायक आइहैं।
पातालपुर के नाग-दानव युद्ध हेतु सिधाइहैं॥
पै संकु याको नेकु तुम जनि आपने हिय में धरौ।
रघुबीर प्रबल प्रताप की सुधि कै अभय तिन सौं लरौ॥

३०

तब सभा-अधिवेसन-विसर्जन हित नरेस निदेस दै।
आयौ सपदि नृप-सौध में बरबन्धु कौं निज संग लै॥
साकेत की रच्छा करन को भार सब लव कौं दियौ।
अरु साथ सुभट समूह लैकै गमन लंकापुर कियौ॥

३१

उत बजी रन-भेरी तुमुल ध्वनि तूर्य की कानन परी।
रघुबंस-बीरन की बिकट सेना तयार भई खरी॥
बहु सजे गज रथ बाजि ऊँट सवार सेना को गनै।
जो कहन चाहै सारदा तासों नहीं बरनत बनै॥

३२

ससि-केतु राजकुमार आयो समर हित रथ साजिकै।
तन-बेस-भूषा जासु देखि कुमार हारत लाजिकै॥
कुंडलीकृत-कोदंड-मंडल बिसिष कर फेरत लिये।
मनु जगत जीतन की प्रतिज्ञा जात है मन-मथ किये॥

३३

वर-देव-वारन-सरिज-गज पै कुस विराजे आयकै।
जाकी प्रभा अवरेखि सुरप सकात हिय लजायकै॥
देवन-सरिस रघुबंस के बर बीर अमित उमंग में।
लीन्हे विविध आयुध-प्रखर सब चले कुस के संग में॥

३४

इमि विकट सूरन साथ लै रन में न जो जम सों टलै।
रघुबंस-भूषन-बीर-बर-कुस सपदि लंका कौं चले॥
कहुँ करत सिविर पयान कोहूँ कछुक काल बिताय कै।
सब कटक सागर पार कै गढ़लंक पहुँची जाय कै॥

३५

रघुबंस-सेना-आगमन सुनि बिभीषन हर्षित भये।
कुस कौ सुस्वागत करन के हित आपु लै मंत्रिन गये॥
गुनि निज पिता के मीत तेहि कौसल नृपति आदर दियौ।
अरु पकरिकै शुभ बाँह वाको अभय सब बिधि सौं कियौ।

३६

रघुसेन कौ ठहराय उत, निज गृह बिभीषन आइकै।
सूचित कियो अरिमर्दनहिं इक राजदूत पठाइकै॥
"हम कही केतिक बार पै कुस नेकु मानत हैं नहीं।
अस कहत करि अधिकार कोऊ राज लौटावत कहीं॥"

३७

"यातें हमारी मानि अब त सन्धि तुम हम सौं करौ।
माँगौ छमा, रघुबंस-मनि के, आय कै पायन परौ॥
नहिं तौ समर में पुत्र! लाले प्रान के परि जाइहैं।
कोई समर्थक रावरे वा खन न कामे आइहैं॥

३८

सुनि दूत-मुख ईमि बचन कठिन कृपान अरिमर्दन गह्यौ।
फरकत अधर करि नैन राते कड़कि ईमि वासौं कह्यौ॥
"तुम हौ नितान्त अवध्य काका सौं कहौ ईमि जाइकै।
स्वागत सबन कौ युद्ध थल मैं प्रात करिहौं आइकै॥"

३९

स्वातंत्र्य-रच्छक-सैन के सब स्वयं-सेवक-गन जगे।
लै विविध आयुध विसद बैरख रथन चढ़ि धावन लगे॥
अरिमर्दनहुँ निज सुघर स्यंदन साजि बैठ्यौ जायकै।
तबलौं चपल इक अस्वरोह तांहि भेंट्यौ आयकै॥

४०

अरिमर्दनहिं लखि सामुहें अति प्रनत भाव दिखाय कै।
कह "नाग-दानव-सेन सागर-पार पहुँची आय कै॥
तुम चलहु अब रन खेत रंचक संक जनि हिय मैं धरौ।
आराति-चक्र निपाति कै निज लंक पै सासन करौ॥"

४१

सजि सकल-राघव-सेन-उतरन-खेत पहुँची आइकै।
ह्वै चन्द्रकेतु प्रधान तिनको रच्यौ व्यूह बनाइकै॥
अरु मध्य में तिन सबन के कुस औ बिभीषन सोहई।
लै धनुष तरनी-सेन ठाढ़े समर हित मन मोहई॥

४२

अरिमर्दनहुँ अकिलौ इतै स्वातन्त्र्य-सैनिक-संग में ।
आयौ धनुष-सर साजि रथ चढ़ि तुरत अमित उमंग मैं ॥
अँधियारि लागी झुकन अरु उड़ि धूरि नभ मंडल भरी ।
औ' साथ ही तब दुन्दुभी-ध्वनि आय कानन मैं परी ॥

४३

"जय जयति अरिमर्दन" पुकारत नाग-गन आवन लगे ।
अरु चपल वाहन सबन के अति वेग सौं धावन लगे ॥
दसकन्ध-सुत नै तुरत ही बर-व्यूह की रचना कियौ ।
हर्षित भयौ तेहि कौ निरखि नव युवक वीरन कौ हियौ ॥

४४

निज सैन-नायक के निदेसनि सुभटगन मानन लगे ।
लै निसित सायक पानि चापनि कान लौं तानन लगे ॥
तब लौं तुमुल धुनि संख की सुनिकै अमित अचरज पगे ।
कर में पताका-स्वेत-लीन्हें-जनन-दिसि देखन लगे ॥

४५

ह्वै अग्र तिनको प्रमुख नेता कुसहिं प्रनति दिखाइकै ।
बोलन लग्यौ इमि बैन दोऊ दलन कौ समुझाय कै ॥
"हे विस्व-वन्द्य-नरेस-सुत! तुम सबहि भाँति समर्थ हौ ।
पै पच्छलै अन्याय को अब करत अमित अनर्थ हौ ॥"

४६

यहि अधम सासक राज्य मै हम एकहू रहिहैं नहीं ।
सहते रहे यम-यातना अब और तौ सहिहैं नहीं ॥
यह नित्त-नव-कर है लगावत ऋनहु बर बस लेत है ।
जौ कहन कौ कछु जाय तौ तब दंड दारुन देत है ॥

४७

अरिमर्दनहिं नृप-सुवन है अब राज्य याको दीजिये ।
अरु मानि जनमत लंक कौ स्वाधीनहू करि दीजिये ॥
गुनि काल की गति आपु अनुचित पच्छपातहि छोड़िये ।
तजि अधम-सासक-साथ अत्याचार सौं मुख मोड़िये ॥"

४८

सुनि इमि प्रजा के बैन कुस अरु चन्द्रकेतु बिचारि कै।
लंका प्रति-निधिन दिसि कृपा कोर बहुरि निहारि कै॥
"तुम रहहु सब निस्संक अत्याचार अब ह्वैहै नहीं।
अन्याय-कारी कबहुँ प्रस्रय रघुन को पैहै नहीं॥"

४६

इमि घोर युद्ध निवारि कुस ने सभा आयोजन कियौ।
अरु चन्द्रकेतु कुमार नै तेहि माँहि निज भाषन दियौ॥
"आजु ते लंकापुरी स्वाधीन तौ ह्वै जाइहैं।
निज करन सौं सासन व्यवस्था प्रजा आपु बनाइहै॥

५०

कर पकरि अरिमर्दन कुँवर को अरु प्रधान बनाय कै।
कुस चले अपने राज कौ आसिप प्रजा कौ पाय कै॥
जय जयति कुस-लव-चन्द्रकेतु कुमार की जय जय भई।
सारी प्रजा तिनको सराहत आपने गृह कौ गई॥

५१

राजा बिभीषन मानि निज अपमान मर्माहत भये।
अरु छाँड़िकै जग-जाल को तप करन हित बन को गये॥"
कर पकरि तरनी सेन कौ अरिमर्दिनहु प्रमुदित हियौ।
धारा-सभा को ताहि पुनि अध्यक्ष निर्वाचित कियौ॥

५२

मन मुदित दानव-नाग-गन प्रातहि गये पाताल कौ।
मन्दोदरी-धनिमालिनी सौं कहि सुनायो हाल कौ॥
ते सुनत सुत की विजय दोऊ हिय अतिहि हर्षित भई।
लागी बधाई बजन तिनके गेह में नित प्रति नई॥

५३

नित ही बधाई बजत रावन काव्य की रचना नई।
सिव-वदन-नभ-नभ-नैन-संवत पूस में पूरन भई॥
जे पच्छपात बिसारि याके पढ़न मैं मन लाइहैं।
नूतन विचार-प्रवाह या मैं अवसिही ते पाइहैं॥

५४

सीतापुर-मण्डल अमीर अहमद खाँ के।
राज में प्रसिद्ध महमूदाबाद ग्राम है॥
वैश्य-बंस-भूषन अदूखन सबै ही भाँति।
मातादीन साह कौ सुवन अभिराम है॥
कवि हरिनाथ तहाँ मुदित निवास करै।
नन्द के कुमार जू कौ करत प्रनाम है॥
गिरजा-गिरीस की चरन रज पाइबे की।
जाके हिय माँहि अभिलाष निस याम है।

❀ समाप्त ❀